CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

1·3

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

ic Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

# शशिवृता विवाह खण्ड

(पृथ्वीराज रासो)

## चन्दबरदाई

[मूल पाठ, व्याख्या और आलोचना]

(TEXT WITH NOTES)

सम्पादक

श्री राकेश, एम० ए०

प्रकाशन केन्द्र

रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ—226 020

(फोन : 73035)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Dedicated to

**Shri Padmadhar Malviya**

as a token of deep reverence, nobility and system
for introducing scientific management
as a Director of Text-book Bureau
PRAKASHAN KENDRA, LUCKNOW

प्रकाशक : प्रकाशन केन्द्र
रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ—226 020
: सर्वाधिकार (कापीराइट) प्रकाशकाधीन
मूल्य : अट्ठाईस रुपये पचास पैसे (Rs. 28·50) मात्र ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# भूमिका

'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी का आदि महाकाव्य है। इसकी प्रामाणिकता-अप्रामाणिकता के सम्बन्ध में विद्वानों का जो खण्डन-मण्डन और वाद-विवाद चलता रहा, वह अब भी उसी रूप में है। यदि इस विवाद को छोड़कर देखा जाय, तो निःसन्देह 'पृथ्वीराज रासो' काव्य-कौशल की दृष्टि से पूर्ण उत्कृष्ट कृति है। अनेक विद्वानों के मतों को दृष्टि में रखते हुए 'रासो' की प्रामाणिकता और अप्रामाणिकता के सम्बन्ध में मैंने अपनी मान्यताएँ स्थिर की हैं, लेकिन मेरा मुख्य दृष्टिकोण कृति का साहित्यिक अध्ययन प्रस्तुत करना ही रहा है।

'शशिवृता-विवाह-खण्ड' 'पृथ्वीराज रासो' के अन्तर्गत एक अवान्तर घटना है। इसमें 'पृथ्वीराज चौहान' का पराक्रम एक प्रेमी धीरोदात्त नायक के रूप में चरमोत्कर्ष पर पहुँचा हुआ है। 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में कवि का सर्वाधिक अभिव्यक्ति-कौशल व्यक्त हुआ है। इसकी भाषा अपभ्रंश और डिंगल से इतनी अधिक प्रभावित है कि पाठक सरलता से अस्वादन करने में असमर्थ रहते हैं। मेरा उद्देश्य इस कृति के प्रामाणिक मूल पाठ सरल सुबोध टीका एवं साहित्यिक मूल्यांकन के साथ विभिन्न विश्वविद्यालयों के छात्रों के लिए प्रस्तुत करना रहा है। मुझे विश्वास है कि मेरी इस कृति के द्वारा सामान्य पाठकों एवं छात्रों के लिए 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' का अध्ययन एवं 'पृथ्वीराज रासो' के काव्य-सौष्ठव की परख सुगम हो जायगी।

इस कृति के सृजन के मूल-प्रेरणा स्रोत श्री पद्मधर मालवीय सत्वाधिकारी प्रकाशन केन्द्र रहे हैं। उन्हीं के प्रयास के यह पुस्तक पाठकों के समक्ष है।

प्रस्तुत कृति के सृजन में मैंने अनेक विद्वानों की कृतियों एवं शोध कार्य का आश्रय लिया है। अतः इसमें जो कुछ उत्तम बन पड़ा, वह उन्हीं की कृपा का फल है। अतः मैं बड़ी विनम्रता से इस कृति को उन्हीं को सादर और सप्रेम समर्पित करता हुआ सन्तोष लाभ करता हूँ :

"मेरा मुझको कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझको सौंपता, क्या लागै है मोर॥"

—राकेश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# अनुक्रमण

## (क) मूल पाठ


| | पृष्ठ |
|---|---|
| १.कथावस्तु | १ |
| २. मूल पाठ और व्याख्या | १—११७ |


## (ख) आलोचनात्मक अध्ययन [पृथ्वीराज रासो]

### १. जीवन-वृत्त


| प्रश्न | |
|---|---|
| १. चन्दबरदाई के जीवन-वृत्त पर प्रकाश डालिए। | १२१ |
| **२. रासो-परम्परा** | |
| २. 'रासो' शब्द की व्युत्पत्ति की खोजपूर्ण विवेचना कीजिए। | १३० |
| ३. 'रासो' काव्य-परम्परा पर प्रकाश डालिए और उसमें पृथ्वीराज रासो का महत्व एवं स्थान निश्चित कीजिए। | १३२ |
| **३. ऐतिहासिकता** | |
| ४. 'पृथ्वीराज रासो' के कथानक की ऐतिहासिकता पर विचार कीजिए। | १३७ |
| ५. "पृथ्वीराज रासो' में ऐतिहासिक घटनाओं एवं कल्पना-प्रसूत तथ्यों का इतना अधिक मिश्रण है कि इसको ऐतिहासिक रचना नहीं कहा जा सकता है।"—इस कथन की समीक्षा कीजिए | १३७ |
| ६. "पृथ्वीराज रासो' के अनेक उल्लेख कल्पना-प्रसूत हैं।"—इस कथन की सार्थकता पर विचार कीजिए। | १३७ |
| **४. रासो की प्रामाणिकता** | |
| ७. "रासो में कुछ भी ऐसा नहीं है, जो उसे चन्द की रचना अथवा प्राचीन काल की रचना सिद्ध कर सके।"—इस कथन पर अपने विचार प्रकट कीजिए। | १४३ |
| ८. 'पृथ्वीराज रासो' की प्रामाणिता के सम्बन्ध में अब तक जो उहापोह हुई है, उसकी मीमांसा करते हुए अपना मत प्रकट कीजिए। | १४३ |


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



९. 'पृथ्वीराज रासो' की प्रामाणिकता पर अपने विचार प्रकट कीजिए। १४३

५. महाकाव्यत्व

१०. महाकाव्य के लक्षणों की कसौटी पर चन्दकृत 'पृथ्वीराज रासो' का मूल्यांकन कीजिए। १५१

११. एक सफल महाकाव्य की दृष्टि से 'पृथ्वीराज रासो' की समीक्षा कीजिए। १५१

१२. "महाकाव्य के भारतीय लक्षण-ग्रन्थों के समस्त लक्षण 'पृथ्वीराज रासो' में मिलते हैं।" इस कथन को दृष्टि में रखते हुए 'पृथ्वीराज रासो' के महाकाव्य पर विचार कीजिए। १५१

१३. "पृथ्वीराज रासो' को महाकाव्य न कहकर एक विशालकाय वीर काव्य कहना ही युक्ति-संगत होगा।"—डा० श्यामसुन्दर के इस कथन की व्याख्या करते हुए 'पृथ्वीराज रासो' के महाकाव्यत्व पर विचार कीजिए। १५१

६. प्रबन्ध-सौष्ठव

१४. 'पृथ्वीराज रासो' के प्रबन्ध-सौष्ठव पर प्रकाश डालिए।' १६१

१५. कथा-प्रवाह और प्रबन्धात्मक की कसौटी पर 'पृथ्वीराज रासो' का मूल्यांकन कीजिये। १६१

१६. "पृथ्वीराज रासो' में मूल-कथा के साथ विभिन्न कथाओं के विकास में भी रासोकार की प्रबन्ध-कुशलता देखी जा सकती है। कथा-प्रवाह में रासोकार ने कथानक के अनुभूतिपूर्ण मार्मिक स्थलों को परखा भी है।"—इस कथन को स्पष्ट करते हुए इस सन्दर्भ में अपना स्पष्ट मत प्रकट कीजिये १६१

७. वस्तु-वर्णन और भाव-व्यंजना

१७. वस्तु-वर्णन और भाव-व्यंजना की दृष्टि से 'पृथ्वीराज रासो' की समीक्षा कीजिए। १६८

१८. "पृथ्वीराज रासो एक वस्तु-वर्णन प्रधान ग्रन्थ है। उसमें भाव व्यंजना की अपेक्षा वस्तु-वर्णन के ऊपर कवि की दृष्टि अधिक रही है।"—इस कथन की समीक्षा कीजिए। १६८

८. काव्य-सौष्ठव

१९. भावपक्ष और कलापक्ष की दृष्टि से 'पृथ्वीराज रासो' की सम्यक् समीक्षाकीजिये। १७६

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२०. 'रासो' की साहित्यिक विशेषताओं का मूल्यांकन कीजिये १७६

२१. रस-परिपाक, वृत्त-वर्णन तथा कलात्मक-सौन्दर्य की कसौटी पर 'पृथ्वीराज रासो' का सम्यक् मूल्यांकन कीजिये। १७६

२२. 'पृथ्वीराज रासो' में भावपक्ष एवं कलापक्ष के समन्वय पर अपने विचार प्रकट कीजिए। १७६

२३. 'पृथ्वीराज रासो' के काव्य-सौष्ठव पर प्रकाश डालिए। १७६

९. भाषा में अनेकरूपता

२४. 'पृथ्वीराज रासो' की भाषा में पाई जाने वाली अनेकरूपता के कारणों की छान-बीन कीजिये। १८१

१०. चन्द की बहुज्ञता

२५. 'पृथ्वीराज रासो' को दृष्टि में रखते हुए चन्दवरदाई की बहुज्ञता पर प्रकाश डालिए। १८८

(ग) शशिवृता-विवाह-खण्ड

१. कथावस्तु का विश्लेषण

१. 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की कथावस्तु संक्षेप में लिखकर कथा-प्रवाह और वस्तु-संविधान की दृष्टि से सम्यक् समीक्षा कीजिए। १९३

२. "शशिवृता-विवाह-खण्ड' की नामकरण की सार्थकता पर विचार कीजिए। २००

२. काव्य-सौन्दर्य

३. भाव-सौन्दर्य की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की समीक्षा कीजिए। २०२

४. "पृथ्वीराज के जीवन के मधुर प्रसंगों में विवाहों का स्थान अन्यतम है।" 'शशिवृता-विवाह-प्रकरण' को विशेष रूप से दृष्टि में रखते हुए इस कथन की सोदाहरण समीक्षा कीजिए। २०२

५. काव्य-सौन्दर्य की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की समीक्षा कीजिए। २०६

६. भावपक्ष और कलापक्ष की सफलता की दृष्टि से "शशिवृता-विवाह-खण्ड' की सोदाहरण समीक्षा कीजिए। २०६

७. वीर-रस-वर्णन की दृष्टि से 'शशिवृता विवाह-खण्ड' की समीक्षा कीजिए २१३

८. शृंगार-वर्णन और प्रेम-निरूपण की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाहखण्ड' की समीक्षा कीजिए। २१४

९. वस्तु-वर्णन की दृष्टि से 'शशिवृता विवाह-खण्ड' पर विचार कीजिए। २१४

३. अभिव्यक्ति-कौशल

१० 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' के छन्द-योजना की सार्थकता की समीक्षा कीजिए। २१४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2




११. अप्रस्तुत-विधान (अलङ्कार-योजना) की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की समीक्षा कीजिए। ११५

१२. भाषा शैली की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की समीक्षा कीजिए। २१७

४. चरित्र-चित्रण

१३. 'शशिवृता विवाह-खण्ड' के आधार पर पृथ्वीराज का चरित्र-चित्रण कीजिए। २२१

१४. शशिवृता का चरित्र-चित्रण कीजिए। २२३

१५. 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में एक दूत के रूप में हंस-दूत की स्थिति और उसके कार्यों के महत्व पर प्रकाश डालिए। २२५


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# मूलपाठ

[ व्याख्या-विश्लेषण ]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# कथानक

**कथासार**—'शशिवृता विवाह-खण्ड' 'पृथ्वीराज रासो' का पच्चीसवां समय है। इसमें पृथ्वीराज और शशिवृत्ता का परस्पर रूप-गुण आदि सुनकर अनुरक्त होते, शशिवृत्ता की सगाई उज्जैन-नरेश कमधज्ज के भतीजे से निश्चित होने पर उसके द्वारा चुपचाप पृथ्वीराज चौहान के पास हंस रूपी दूत भेजकर अपना हरण करने का मन्तव्य देने, चौहान का अपने सात सहस्र करटधारी सैनिकों सहित आकर देवगिरि के देवालय से शिव पूजन हेतु आई हुई राजकुमारी को लेकर चल देने तथा युद्ध में यादवराज और कमधज्ज की संयुक्त वाहिनी को परास्त कर दिल्ली पहुंच जाने का प्रसंग है।

## कथानक का विश्लेषण

**शुक-शुकी के संवाद से कथानक का प्रारम्भ**—'शशिवृता-विवाह-खण्ड' के कथानक का प्रारम्भ शुक-शुकी के संवाद से होता है। देवगिरि की राजकुमारी शशिवृत्ता का सौन्दर्य एक नट द्वारा सुनकर पृथ्वीराज उस पर आसक्त हो, उसकी प्राप्ति की चेष्टा करते हैं और कामातुर हो उसके विरह में लीन मृगयारत हो जाते हैं, जहां वन में एक वाराह का पता बताने वाले बधिक के साथ अपने अनुगामियों सहित तुपकधारी राजा के वर्णन के बीच में अनायास शुक शुकी से कह बैठती है कि दिल्लीश्वर से गन्धर्व-विवाह की कहानी सुनाओ। शुकी शुक से यह जानना चाहती है कि शशिवृता पूर्व जन्म में कौन थी, तथा इस जन्म में पृथ्वीराज से उसका विवाह किस प्रकार हुआ। शुक इस प्रसंग को विस्तार से सुनाता है—

"पुच्छ कथा सुक कहो। समह ग्रन्धवी सप्रेमहि ॥
स्रवम, मंमि संजोगि। राज सम धरी सुनेमहि ॥
इम चित्तिय मन मज्झि। (चित्र सख गन्धव ईसह) ॥
(कै) करो पति जुग्गनि। ईंस पुज्जै सु जग्गीसह ॥

शुक शुकी के पूछने पर कहता है कि देवगिरि (देवास) का नट दिल्ली दरबार में आता है और पृथ्वीराज द्वारा पूछने पर कि वहां की कुमारी शशिवृता का विवाह किसके साथ निश्चित हुआ है बताता है कि उज्जैन के कमधज्ज राजा के यहां सगाई ठहरी है। परन्तु राजकुमारी को उक्त वर पसन्द नहीं है। फिर उससे शशिवृता का मेनका सदृश रूप सुनकर पृथ्वीराज उस पर अनुरक्त हो गये और नट से उसकी प्राप्ति का उपाय पूछने लगे। नट ने यह कहकर कि हे राजेन्द्र ! मैं कुछ उठा न रखूंगा, उनसे विदा ली। राजा ने शिव से अपना मनोरथ सिद्ध होने का वरदान पाया, तथा वर्षा और शरद ऋतुएं शशिवृता के विरह की काम-पीड़ा में बिताई और देवगिरि जाने का निश्चय किया।

उधर जयचन्द्र के भ्रातृज वीरचन्द के साथ शशिवृता की सगाई का समाचार पाकर एक गन्धर्व देवगिरि गया और वन में जहां शशिवृता अपनी समवयस्काओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



के साथ क्रीडा कर रही थी, वह हेम-हंस के रूप में एक स्थान पर विश्राम लेने लगा। राजकुमारी बड़े आश्चर्य से उस स्वर्ण-हंस को देखती है और उसे पकड़ लेती है। वह उससे पूछती है कि तुम कौन हो। तुम्हारा स्थान कहां है और इस रूप में किस माया से आये हो। गन्धर्व उत्तर देता है कि मैं मति प्रधान नामक गन्धर्व हूं। तुम्हारे हित के लिये ही देवराज इन्द्र ने मुझे यहां भेजा है। और हे बाले ! मुझमें तीनो लोकों में जा सकने की शक्ति है :

"हेम हंस तन धरिय। बिपन मध्ये विश्राम लिय ॥
दिष्य तास शशिव्रत। अतिहि अच्चरिज्ज मानि जिय ॥
बल कर गहिय सु तत्थ। हत्थ लै करि तेहि पुच्छिय ॥
कवन देव तुम थान। कवन माया तन अच्छिय ॥
उच्चरयो हंस ससिवृत्त सम। मति प्रधान गन्धर्व हम ॥
सुरराज काज आये करन। तीन लोक हम बाल गन ॥"

हंस का परिचय पाकर शशिवृता उससे अपने पूर्व जन्म के विषय में पूछती है। साथ ही यह भी पूछती है कि उसे कौन वर मिलेगा। हंस उसे उत्तर देता हुआ कहता है कि पूर्व जन्म में वह चित्ररेखा नाम की सुन्दरी अप्सरा थी। अपने सौन्दर्याभिमान में उसने कि उसने इन्द्र से कलह कर ली इससे इन्द्र ने उसे मृत्यु-लोक मे पुञ्ज के घर जन्म लेने का शाप दिया।

गन्धर्व शशिवृता से भी यह कहता है कि उसके पिता ने उसका विवाह कमधज्ज वीरचन्द्र के साथ निश्चित कर दिया है। परन्तु उसकी आयु एक वर्ष ही शेष है। इन्द्र के द्वारा करुणा करके इसीलिए उसे भेजा गया है और मैं तुम्हें सचेत करने के लिए ही आया हूं।

"तेम रहै वर वरष इक्क महि। हय गय अनन्त झुज्झिहै समतहि ॥
तिहि चार करि तुमहि आयो। करि करुना यह इन्द्र पठायो ॥"

स्वर्ण हंस के इस कथन को सुनकर स्वाभाविक ही था कि शशिवृता का हृदय वीरचन्द्र की ओर से विमुख हो जाता। वह उससे अपने अनुकूल वर पूछती है :

"तव उच्चरिय बाल सम तेहं। तुम माता सम पिता सनेहं ॥
मुझ्झ सहाय अवरि को करिहो। पानिग्रहन तुम चित अनुहरिहो ॥"

हंस-दूत तो इस अवसर की प्रतीक्षा में ही था। वह वीरों के अधिपति दिल्लीपति पृथ्वीराज का गुणगान करता है। शशिवृता पृथ्वीराज की प्रशस्ति सुनकर हंस से कहती है कि वह उनको बुला लाये। वह उनकी छः मास तक प्रतीक्षा करेगी और इस अवधि तक उनके न आने पर प्राण त्याग देगी :

"वहां तुम पिता कृपा करि जाउ। दिल्ली वै अनुराग उपाय।
मांस षटह हों वृत्तह मडों। तध्युना आवै तो तन छंडों ॥"

इस प्रकार शशिवृता को पृथ्वीराज के अनुराग को पाकर, हंस उसके पास अपनी सुन्दरी को छोड़कर उत्तर दिशा की ओर उड़ चला और योगिनीपुर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(दिल्ली) जा पहुँचा। उसके सुवर्णात्मक शरीर पर अनेक नगों की शोभा हो रही थी :

"तब उडि चल्यौ देह दिसि उत्तरि । ढिग ससिव्रत रष्षि निज सुन्दरि ।।
जुग्गिनिपुर आयो दुजराजं । सोवन देह नगं नग साजं ।।"

इस समय पृथ्वीराज वन में मृगया में लीन थे। वे उस हंस को आश्चर्य से देखकर पकड़ लेते हैं। हंस उनसे सारी कथा कहता हुआ शशिवृता के सौन्दर्य का वर्णन करता है। उसका शरीर सुमेरु पर्वत के समान सुन्दर है। शैशवावस्था उससे विदा हो रही है और किशोरावस्था उसके शरीर में प्रवेश कर रही है। सूर्य तथा चन्द्र के उदय और अस्त के मध्य में वह इस प्रकार शोभित होती है, मानो श्रृंगार का सुमेरु हो :

"राका अरु सूरज्ज बिच। उदै अस्त दुहु वेर ।।
वर शशिवृता सोभई । मनों श्रृंगार सुमेर ।।

फिर हंस राजकुमारी की बाल्यावस्था व्यतीत होकर किशोरावस्था के आगमन पर शिशिर और बसन्त का सावयव आयोग करके उस अज्ञात योवना का रूप-चित्र प्रस्तुत करता है :

"ससिर अंत आवत बसंत। बालह सैसव गम ।।
अलिन पंष कोकिल सुकंठ। सजि गुंड मिलत भ्रम ।।
मुर मारुत मुरि चले । मुरे मुरि वैस प्रमानं ।।
तुछ कोंपर सिस फुट्टिट । आनि किस्सोर रंगानं ।।
लीनी न अंमिनक स्याम तन । मधुप मधुर धुनि धुनि करिय ।।
नानो न बयन आवन वसत। अग्याता जीवन अरिय ।।

पत्त पुरातन झरिग । पत्त अंकुरिय उट्ठ तुछ ।।
ज्यों सैसव उत्तरिय । चढ़िय सैसव किसोर कुछ ।।
शीतल मन्द सुगन्ध । आइ रितिराज अचानं ।।
रोमराइ अंग कुच नितम्ब। तुच्छ सरसानं ।।
बढ्ढे न सीत कटि छीन ह्वै। लज्ज मांन ढंकति फिरै ।।
ढंकै न पत्त ढंकै कहै । वन वसन्त मन्त जु करै ।।"

पृथ्वीराज में प्रेम की उत्पत्ति—हंस-दूत द्वारा शशिवृता के रूप और सौन्दर्य का वर्णन सुनकर पृथ्वीराज उसके अनुराग में डूब जाता है। उसे रात्रि भर नींद नहीं आती। किंचित झपकी आने पर वह स्वप्न में शशिवृता को ही देखता है। "सबेरा होने पर वह हंस से पुनः शशिवृता का सारा वृत्त सुनने की जिज्ञासा प्रकट करता है। हंस सबसे पहले शशिवृता की उत्पत्ति का वर्णन करता हुआ कहता है कि वह चित्ररेखा अप्सरा का अवतार है। वह कामदेव के साधे हुए बाण के समान है। वह पृथ्वीराज को वर रूप में पाने के लिये नित्य प्रति गौरी का व्रत-पूजन कर रही है। शशिवृता में आपके प्रति पहले से ही श्रवणानुराग उत्पन्न हो चुका है। राजा भान के आनन्दचन्द नामक मन्त्री की बहिन चन्द्रिका का विवाह हिसार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



में हुआ, किन्तु विवाह के कुछ दिनों बाद उसके पति का स्वर्गवास हो गया। आनन्दचन्द्र चन्द्रिका को अपने यहां ले आता है। चन्द्रिका का प्रवेश कुछ समय अनन्तर राजा भान के अन्तःपुर में हो जाता है। शशिवृता राजा भान के छोटे भाई पुंज की पुत्री है। इसी चन्द्रिका ने शशिवृता के समक्ष आपके गुणों का वर्णन किया है, जिसे सुनकर वह आपके प्रेम में पग गई और उसने आपको पति रूप में प्राप्त करके की प्रतिज्ञा की। वह अपनी अभिलाषा पूर्ण होने के लिये नित्य प्रति भगवान शिव की पूजा करती है। स्वप्न में पार्वती ने शशिवृता को बतलाया है कि शिवाजी के वरदान से पृथ्वीराज उसे पति रूप में प्राप्त होंगे। उसे शशिवृता ने ही भेजा है। शशिवृता के पिता ने उसका विवाह जयचन्द के भाई वीरचन्द से तै कर दिया है। वह सेना लेकर उसे विवाहने आयेगा। यहां हंस शशिव्रता के नख-शिख-सौन्दर्य का भी वर्णन करता है :

पीनो रूपीन उरजा, सम शशि बदना,पद्म पत्रापताक्षी ।।
व्यंबोष्ठी तुंग नासा, गज गति गमना, दसना वृत्तनाभी ।।
संस्निग्धा चारु केशी, मृदु प्रथु जघना, वाम मध्या सु देसी ।।
हेमांगी कंति हेला, वर रुचि दसना, काम बाना कटाक्षी ।।

हंस शशिवृता का नख-शिख के मिस विस्तार से रूप-सौन्दर्य वर्णन कर यह भी कह देता है कि शिव के वरदान के अनुसार यह आपको अवश्य प्राप्त होगी। उसका विस्तार आपके लिये ही हुआ है। इस अवसर पर शशिव्रता की मंगनी कमधज्ज को दी जाने, उसके पृथ्वीराज पर अनुरक्त होने, शिव-पूजन करने और शिव की आज्ञा से ही स्वयं उन्हें बुलाने की बात हंस पुनः दोहरा देता है।

इस प्रकार हंस दूत पृथ्वीराज को देवगिरि ले जाने के लिये अथक परिश्रम करता है। हंस दूत अपने प्रयास में सफल होता है।

**पृथ्वीराज का देवगिरि को प्रयाण**—हंस शशिवृता को प्रेम-सन्देश देकर उड़कर चला जाता है। इधर पृथ्वीराज अपने चुने हुए सामन्तों और सेना को लेकर प्रयाण करता है, उधर कमधज्ज वीरचन्द्र भी एक लाख दस हजार सेना लेकर लेकर देवगिरि पहुंच जाता है। वीरचन्द्र का आगमन सुनकर शशिवृता आत्महत्या के लिए उद्यत हो जाती है। इसी समय हंस पहुंचकर शशिवृता पृथ्वीराज के भी आ पहुंचने की सूचना देता हैं। इस सूचना से उसके हृदय में प्रेम का सागर हिलोरें लेने लगता है।

**शशिवृता का देव-पूजन के बहाने हरसिद्धि नामक स्थान के लिए प्रस्थान**—हंस से पृथ्वीराज के आगमन की सूचना पाकर शशिवृता माता-पिता से आज्ञा लेकर देवपूजन के बहाने हरसिद्धि नामक स्थान को चल पड़ती है। वह देवालय चलने से पूर्व अपना भली भांति शृंगार करती है। इस अवसर पर कवि विस्तार से शशिवृता के आभूषणों वस्त्रों एवं उसके शारीरिक सौन्दर्य और चित्तवृति का वर्णन करता है। वीरचन्द्र ने देवालय के चारों ओर अपनी सेना लगा रखी है। वीरचन्द्र को देखकर शशिवृता की छाती धड़कती है और वह पृथ्वीराज का स्मरण करती है। वह देव पूजन के लिये पालकी से उतर पड़ती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शशिवृता के पिता को पृथ्वीराज और वीरचन्द्र दोनों के आ पहुंचने का पता चल जल जाता है। अतः वे युद्ध की आशंका से अपनी सेना सजाकर हरसिद्धि नामक स्थान पर पहुंच जाते हैं। राजा भान यह जानकर कि राजकुमारी शशिवृता पृथ्वीराज से प्रेम करती है, वह उसके कल्याणार्थ चुपके से अपना दूत पृथ्वीराज के पास भेजता है। इधर पृथ्वीराज अपने चुने हुए सात हजार वीरों को कपाली का वेष धारण कराता है। पृथ्वीराज उनके सहित देवालय में प्रवेश कर जाता है। पृथ्वीराज इस समय रौद्र रूप में है। वह शशिवृता को अपने हाथों से पकड़ लेता है। इस अवसर पर कवि की कल्पना मुखरित हो उठती है और वह कहता है :

"चौहान हथ्थ वाला गहिय। सो ओपम कविचन्द कहि।
मानों कि लता कंचन लहरि। मत्त वीर गजराज गहि॥"
"गहि शशिवृत नरिदं। सिद्धि लंघत ढहि थोरी।
काम लता कल्हरी। प्रेम मारुत झकझोरी॥"

युद्ध—वीरचन्द्र युद्ध प्रारम्भ कर देता है। कवि यहां भीषण युद्ध का वर्णन करता है। राजा पृथ्वीराज कान्ह को युद्ध करने की आज्ञा देते हैं। वह बाज की तरह शत्रु दल पर टूट पड़ता है। इधर से यादव सेनापति भी कान्ह से आकर भिड़ जाता है। युद्ध की विषम स्थिति में शशिवृता के नेत्रों में शृंगार-रस, वीर सामन्तों में वीर रस, पृथ्वीराज में रौद्र रस, अप्सराओं में हास्य रस तथा देवताओं में भयानक रस देखा जाता :

"भान कुंअरि शशिवृति। नैन शृंगार सुराजै॥
वीर रूप सामंत। रुद्र प्रथिराज बिराजै॥
चन्द्र अद्भ्भुत जानि। भए कातर करुनामय॥
बीभछ अग्नि समूह। सांति उप्पनी मरन भय॥
उप्पज्यौ हास अपछरि अमर। भौ भमान भावी बिगति॥
कूरंभरावं पृथिराज वर। लरन लोह चिंते तरनि॥"

चलते हुए भीषण युद्ध में वीरचन्द की सेना का एक नाई आगे आता है और भयंकरता से युद्ध करता है। अन्त में वह वीरगति को प्राप्त होता है। नाई की वीर गति देखकर वीरचन्द्र भी अपनी मृत्यु निश्चित समझ लेता है। वह भीषण युद्ध प्रारम्भ कर देता है। इतने में रात्रि हो जाती है और दोनों सेनाएं विश्राम के लिए लौट पड़ती हैं। कवि यहां रात्रि का विस्तार से रोचक वर्णन करता है।

रात में पृथ्वीराज के सामन्त पृथ्वीराज से शशिवृता को लेकर दिल्ली चले जाने का अनुरोध करते हैं, परन्तु पृथ्वीराज ऐसा नहीं करता। पुनः भीषण युद्ध प्रारम्भ होता है। शशिवृता युद्ध की भीषणता देखकर कांप उठती है। वह सतृष्ण नेत्रों से पृथ्वीराज की ओर देखती है। पृथ्वीराज शशिवृता का आशय जानकर युद्ध से हट जाता है और दिल्ली की ओर प्रस्थान करता है। वीरचन्द्र को जब यह पता चलता है, वह आधा कोस आगे जाकर पृथ्वीराज को घेर लेता है। पृथ्वीराज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



वीरचन्द्र को घर दबाता है। वीरचन्द पर विजय प्राप्त कर पृथ्वीराज दिल्ली की ओर प्रस्थान करता है। उसके आगमन पर दिल्ली में तोरणोत्सव मनाया जाता है। शशिवृता सहित पृथ्वीराज के नगर में प्रवेश करने के साथ 'शशिवृत-विवाह खण्ड' की कथा समाप्त होती है।

---

## मूल पाठ

पुच्छ कथा सुख कहो। समह गंध्रवी सुप्रंमेहि ॥
स्रवन मंमि संजोगि । राज सम घरी सुनेमहि ॥
इम चित्तिय मन मझ्झि । (चित्र सख गध्रव ईसह) ॥
(कं) करो पति जुगनि ईस । ईस पुज्जै सु जग्गीसह ॥

सुक चित्ति बाल अति लघु सुनत । ततविन बिस उपजै तिहि।
देव सभा न जद्दव न्नपति । नालकेर दुज अनुसरहि ॥१॥

नालकेर दुज गहिय । द्वार जैचन्द गयो अपु ॥
करी षबर हेजमह । अप्प अन्दर बुलाइ न्नप ॥
नालकेर दुज आनि । कह्यौ राजन अवधारी ।
देव सो सु गिरि न्निप भ्रात । पुंज ससिवृत कुमारी ॥
सो दइय बंध सु नृप वीरकह । लगन मास दिन पंचवर ॥
सुनि स्रवन एह गंध्रब्ब कथ। चल्यौ सु दच्छिन देव घर ॥२॥

शब्दार्थ—पृच्छ=पूर्व जन्म की । समह=साथ । गन्धर्वी=अप्सरा, शशिवृता चित्ररेखा नामक अप्सरा का अवतार थी। सुप्रंमहि=मनोयोग के साथ। मंमि=अमृत। संजोगि=योग्य, तुल्य । सुनेमहिं=नियम-पूर्वक! "स्रवन मंमि संजोगि"=श्रवणों के लिये अमृत के समान है। 'राज सम घरी सुनेमहि'=किस प्रकार राजा पृथ्वीराज ने उससे नियमपूर्वक विवाह किया । इम=ऐसा। चित्तिय =चिन्तन किया, विचार किया। मझ्झि=भीतर । चित्त=चित्ररेखा नाम की अप्सरा। गन्धव ईसह=इन्द्र। जुगनि-ईस=योगिनीपुर अर्थात् दिल्ली का स्वामी पृथ्वीराज, दिल्ली का प्राचीन नाम योगिनीपुर था। ईस=शिव। पुज्जै=पूरी की। सु=उसकी । जग्गीसह=जगत्पति, राजा । सुक चित्ति=शुक के मन में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विचार किया । बाल=शुकी । ततविन=उसके अर्थात् कथा के बिना । बिस=विष, क्रोध । देव=देवास । जद्दव नृपति=यादवराज भान । नालकेर=नारियल । गहिय=लेकर । पवर=खबर, सूचना । हेजमह्=द्वारपाल । अवधारी=धारण कीजिए, स्वीकार कीजिए । दइय= देना चाहते हैं । बध=भाई । वीर=वीरचन्द । कथ=कथा, कहानी ।

सन्दर्भ—'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की कथा का प्रारम्भ शुक-शुकी के संवाद से होता है । शुकी शुक से शशिवृता के पूर्व जन्म के सम्बन्ध में पूछती है और यह जानने की भी जिज्ञासा प्रकट करती है कि उसका विवाह पृथ्वीराज से किस प्रकार हुआ । शुक शुकी की जिज्ञासा शान्त करने के लिए शशिवृता का वृत्त सुनाता है—

व्याख्या—शुकी शुक से कहती कि हे शुक ! तुम मुझे प्रेम पूर्वक एवं बड़े मनोयोग से शशिवृता रूप मे अवतरित उस चित्ररेखा नामक अप्सरा की पूर्वजन्म की कथा सुनाओ । वह कथा श्रवणों के लिए अमृत के समान मधुर है । साथ ही यह भी बतलाओ कि किस प्रकार पृथ्वीराज ने उसके साथ नियम पूर्वक विवाह किया । चित्ररेखा तथा इन्द्र का क्या प्रसंग था, तथा किस प्रकार शशिवृता-रूप में अवतरित चित्ररेखा ने योगिनीपुर (दिल्ली) के राजा पृथ्वीराज को पति रूप में वरण करने का मन में संकल्प किया ।

तुम यह भी बतलाओ कि किस प्रकार भगवान शंकर ने उसकी पृथ्वीराज विषयक अभिलाषा पूर्ण की । प्रियतमा शुकी के इन संक्षिप्त वचनों को सुनकर शुक ने मन में विचार किया कि पूछी गई इस कहानी को सुनाये बिना शुकी के हृदय मे क्रोध उत्पन्न हो सकता है । यह सोचकर शुक शशिवृता की सारी कथा सुनाता हुआ कहता है ।

एक बार यादवराज भान देवगिरि (देवास) की अपनी सभा में बैठे हुए थे । उन्होंने उस समय ब्राह्मण को नारियल देकर कमधज्ज जयचन्द के पास भेजा । ब्राह्मण नारियल लेकर जयचन्द के द्वार पर पहुँचा और जाकर उसके द्वारपाल के द्वारा समस्त सूचना अन्दर राजा जयचन्द के पास भेज दी । जयचन्द ने देवगिरि के राजा भान द्वारा ब्राह्मण भेजने की सूचना पाकर, उस ब्राह्मण को अन्दर बुलवा लिया ।

ब्राह्मण ने नारियल राजा के समक्ष रखते हुए निवेदन किया कि हे राजन् ! इस नारियल को आप स्वीकार कीजिए । देवगिरि के राजा भान के भाई पुञ्ज की शशिवृता नामक पुत्री है । वह उसे आपके भाई वीरचन्द को देना चाहते हैं । विवाह के केवल पांच दिन शेष हैं । इस कहानी को श्रवण कर गन्धर्व दक्षिण दिशा की ओर देवगिरि को चल दिया ।

विशेष—१. रासो में शुक-शुकी संवाद के रूप में अनेक प्रसंग आये हैं । विद्वानों की राय है कि चन्द ने स्वयं अपने को शुक तथा अपनी पत्नी को शुकी रूप में प्रस्तुत किया है ।

२. कथानक का प्रारम्भ संवाद के रूप मे नाटकीय है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३. 'ईस पुज्जो सु जग्गीसिंह' करकर आशीर्वादात्मक नन्दी का विधान किया गया है।

४. कहा जाता है कि चित्ररेखा नामक अप्सरा ने अपने सौन्दर्याभिमान में इन्द्र को रुष्ट कर दिया। इन्द्र ने उसे मृत्युलोक के राजा पुञ्ज के यहां अवतार लेने का शाप दिया।

५. 'स्रवन मंमि संजोगि' में उपमा अलंकार।

६. व्यंजन-द्वित्व की प्रवृत्ति भाषा की प्राचीनता स्पष्ट करती है।

## दूहा

चल्यो सु दच्छिन देव गिरि। जहां शशिवृत्त कुमारि ॥
बिपन मद्धि क्रीड़ा करति। समह बाल चितचारि ॥३॥

शब्दार्थ – बिपन मध्य=वन के बीच में। समह=साथ। बाला=बालाएं। चितचारि=चित्त को अपनी ओर आकर्षित करने वाली।

सन्दर्भ—इस दोहे में कवि ने सखियों के साथ क्रीड़ा-उपवन में क्रीड़ा करती हुई शशिवृता के पास पहुंचने का वर्णन किया है।

व्याख्या—शुक-शुकी के संवाद में शशिवृता के प्रसंग को सुनकर यह गन्धर्व दक्षिण दिशा में स्थित उस देवगिरि को उड़ चला जहां क्रीड़ा-उपवन के मध्य में शशिवृता सखियों के साथ क्रीड़ा कर रही थी। उसकी समस्त सखियां अपने सौन्दर्य से चित्त को आकर्षित करने वाली थीं।

छन्द—दूहा (दोहा) इसके पहले और तीसरे चरण में १३ तथा दूसरे और चौथे चरण में ११ मात्राएं होती हैं। 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' के दोहों के चरणांत में सदैव लघु मिलता है।

## कवित्त

हेम हंस तन धरिय। विपन मद्धे विश्राम लिय ॥
दिष्ष तास शशिव्रत्त। अतिहि अचरिज्ज मानि जिय ॥
वल कर गहिय सु तत्थ। हत्थ लै करि तिहि पुच्छिय ॥
कवन देव तुम थान। कवन माया तन अच्छिय ॥
उच्चरयो हंस ससिव्रत सम। मति प्रधान गन्धर्व हम ॥
सुरराज काज आए करन। तीन लोक हम बालगन ॥४॥

शब्दार्थ—हेम हंस तन धरिय=गन्धर्व ने स्वर्णिम हंस का शरीर धारण किया। दिष्प=देखकर। तास=उसको। अचरिज्ज=आश्चर्य। वल कर=बलपूर्वक। गहिय=पकड़कर। सु तत्थ=उसकी, वहां। तिहि पुच्छिय=उससे पूछा। थान=निवास-स्थान। तन अच्छिय=सुन्दर शरीर वाले। सम=से। मति-प्रधान=बुद्धिमान, गन्धर्व का नाम। सुरराज=इन्द्र। तीन लोक हम बालगन=हे बालाओ! तीनों लोकों में हमारी गति है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सन्दर्भ—स्वर्णिम हंस रूप धारी गन्दर्भ को देखकर शशिवृता उसे पकड़ लेती है। शशिवृता के पूछने पर हंस अपना परिचय देता हुआ कहता है—

व्याख्या—गन्धर्व ने स्वर्णिम हंस का रूप धारण किया और उस क्रीड़ा-उपवन के बीच में जाकर विश्राम लिया, जहां शशिवृता सखियों के साथ क्रीड़ा कर रही थी। उस स्वर्णिम शरीर कि हंस को देखकर शशिवृता के हृदय में अत्यधिक आश्चर्य हुआ। उसने बल-पूर्वक उसे पकड़ लिया और उससे पूछा कि हे सुन्दर शरीर धारी देव ! तुम्हारा निवास स्थान कहाँ है और कौन-सी माया से इतना सुन्दर शरीर धारण कर रखा है ? शशिवृता के प्रश्नों को सुनकर हंस ने कहा कि मैं मति प्रधान नाम का गन्धर्व हूँ। हम यहां देवराज इन्द्र की आज्ञा से उनका कार्य करने आये हैं। हे बालाओ ! हमारी गति तीनों लोकों में है।

विशेष—१. संवाद-शैली सुन्दर एवं मधुर है।

१. यहां से कवि हंस-दूत की योजना करता है।

३. 'मद्धे, दिष्ष' 'अचरिज्ज,' 'तत्थ', 'पुच्छिय' और 'अच्छिय' में व्यंजन-द्वित्व की प्रवृत्ति भाषा की प्राचीनता को सूचित करती है।

३. छन्द—कवित्त—यह छप्पय छन्द है। रासो में छप्पय को ही 'कवित्त' कहा गया है। इसमें प्रथम चार चरण 'रोला' के और अन्त के दो चरण 'उल्लाला' के होते हैं।

## कवित्त

कहै बाल सुनि हंस। कवन हम पुव्व जम्म कह।।
कवन पत्ति हम लहंहि। लेष विच्चार लहो इह।।
तवै हंस उच्चरयौ। सुनहि शशिवृता नारी।।
चित्ररेष अपछरि। संगीन अति रूप धरारी।।
तिहि गरब इन्द्र सम कलह करि। क्रौधि देव वंडी सुरम्।।
दच्छिन नरेस नृप तान तान बन्धु। पुंज ग्रहै अवतार तुम।।५।।

शब्दार्थ—पुव्व—पूर्व। जम्म—जन्म। पत्ति—पति, वर। लहंहि—प्राप्त करेंगी। लेष—भाग्य में लिखित। इहं—यहाँ अपछरि—अप्सरा। संगनि—साथ कों सखियों में। धरारी—धारण किया था। कलह—झगड़ा। क्रौधि देव—देवराज इन्द्र ने क्रोध करके। वंडी सुरम्—बड़ा सुन्दर शाप दिया। दक्षिण-नरेश—यादवपति भान। तान—उसका।

सन्दर्भ—शशिवृता के पूछने पर स्वर्णिम हंस उसके पूर्व जन्म की कथा सुनता हुआ कहता है :

व्याख्या—शशिवृता स्वर्णिम हंस से पूछती है कि हंस बतलाओ कि हम पूर्व जन्म में कौन थीं। हमें अब कौन पति प्राप्त होगा। यह सब मेरे ललाट में लिखित भाग्य-चक्र को देखकर तथा सम्यक् विचार करके कहो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



हंस शशिवृता को सम्बोधित करता हुआ कहता है कि हे बाले ! शशिवृता सुनो ! तुम पूर्व जन्म में चित्ररेखा नाम की अप्सरा थीं । साथ की समस्त सहेलियों में तुम्हें सर्वाधिक सौन्दर्य प्राप्त था । इस सौन्दर्याधिक्य के गर्व में तुमने इन्द्र से कलह की, इस पर उन्होंने क्रोध करके तुम्हें बड़ा सुन्दर यह शाप दिया कि तुम्हें दक्षिण प्रदेश में स्थित देवगिरि के राजा भान के भाई पुञ्ज के घर जन्म लेना पड़ेगा ।

विशेष—१. सुन्दर-शाप में विरोधाभास है । यहां शाप को सुन्दर इसलिए कहा गया है क्योंकि शाप के कारण चित्ररेखा मृत्युलोक में जन्म लेगी और इस शाप में सुन्दरता यह है कि उसे इन्द्र के समान पराक्रमी पृथ्वीराज पति रूप में प्राप्त होंगे ।''

२. 'पृथ्वीराज रासो' के कुछ रूपान्तरों में चित्ररेखा को भगवान शंकर के द्वारा शाप देने का उल्लेख है । एक बार शिव इन्द्र के दरबार में उपस्थित थे, उन्होंने इन्द्र से अप्सराओं का नृत्य दिखाने को कहा । नृत्य से पूर्व चित्ररेखा ने पुष्पांजलि शंकर को न देकर इन्द्र को दी । इस पर महादेव क्रुद्ध हो गये और उसे मृत्युलोक में जन्म लेने का शाप दिया । रंभा आदि अप्सराओं ने अपने नृत्य से भगवान शिव को प्रसन्न किया और शाप के शमन की प्रार्थना की । शिव जी ने अनुग्रह करके कहा कि इसे जन्म तो मृत्युलोक में अवश्य लेना पड़ेगा, किन्तु इसे पृथ्वीराज के समान प्रतापी वर प्राप्त होगा । कवि ने यहां इन्द्र द्वारा क्रोध करके शाप देने का उल्लेख किया है ।

## चौपाई

कहै हंस सुनि बाल विचारी । पंग बधुर वीर सु पुत्तारी ।।
तिहि तु दई मातु पितु बंधे । सो तुम जोग नहो बर कंधं ।।६।।
तेम रहै वर वरष इक्क महि । हय गय अनंत झुझ्झहै समतहि ।।
तिहि चार करि तुमहि आयो । करि करना यह इन्द्र पठायो ।।७।।
तब उच्चरिय बाल सम तेहं । तुम माता सम पिता सनेहं ।।
मुझ्झ सहाय अवरि कब करिहो । पानिग्रहन तुम चित अनुहरिहो ।।८।।

शब्दार्थ—पंगु—पगुरराय जयचन्द । बंधुर—भाई । वीर—भाई । पुत्तारी—हे राजकुमारी । बधं—मँगनी । सो—वह, वीरचन्द । वर कंध—सुन्दर स्कन्धों वाली । तेम—इस प्रकार । इक्क—एक । अनन्त—असंख्य । झुझ्झहै—विनाश को प्राप्त होंगे । समतहि—सामन्त । वर—दूल्हा । तिहि—यही । चार करि—विचार कर । तुमहि—तुम्हारे पास । सम तेह—उस हंस मे । सनेहं—स्नेही । अवरि—अन्य, दूसरा । चित अनुहरिहो—मेरे मन के अनुरूप करोगे ।

सन्दर्भ—हंस शशिवृता से कहता है कि तुम्हारे पिता ने जिस वीरचन्द से तुम्हारी सगाई पक्की की है, वह तुम्हारे योग्य नहीं है । वह एक वर्ष के अन्तर्गत सामन्त और सेना-सहित विनाश को प्राप्त होगा । शशिवृता यह सुनकर हंस से प्रार्थना करती है कि वह ही उसके माता-पिता के समान स्नेही बनकर उसके लिए उपयुक्त वर को खोज करे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



व्याख्या—स्वर्ण-हंस कुमारी शशिवृता से कहता है कि हे राजकुमारी ! सुनो, मैं सारी बात विचार पूर्वक कहता हूँ। पंगुराय जयचन्द का भाई वीरचन्द है। उसी से तुम्हारे माता-पिता ने तुम्हारी मँगनी कर दी है। परन्तु हे सुन्दर कन्धों वाली राजकुमारी। वह वीरचन्द तुम्हारे योग्य वर नहीं है। एक वर्ष के अन्तर्गत ही ऐसा होगा कि युद्ध में वह अपने असंख्य घोड़े, हाथी और सामन्तों के सहित युद्ध में विनाश को प्राप्त होगा। [अर्थात् उसकी आयु तो एक वर्ष ही की है। ] यही विचार कर तुम्हें सचेत करने के लिए मैं सचेत करने के लिए मैं तुम्हारे पास आया हूँ। देवराज इन्द्र ने कृपा करके मुझे इसी कारण भेजा है। स्वर्ण हंस के कथन को सुनकर शशिवृता कहने लगी तुम यहाँ मेरे माता-पिता के समान हितैषी हो। तुम्हारे अतिरिक्त और दूसरा कौन है, जो हमारी सहायता करे। मुझे आशा है कि तुम मेरे अनुरूप वर की खोज करोगे।

विशेष—१. 'हंस-दूत की वाक् चतुरता दृष्टव्य है। वह चेतावनी दे देता है कि एक वर्ष की जीवन-अवधि वाला वीरचन्द शशिवृता के लिए योग्य वर नहीं है। पृथ्वीराज अवश्य शशिवृता का हरण करेंगे और इस समय उनसे युद्ध करते हुए वीरचन्द सेना, सामन्त एवं हाथी-घोड़ों सहित विनाश को प्राप्त होगा।

२. हंस-दूत के कथन से शशिवृता प्रभावित होती है और उसे अपने माता-पिता के समान उपयुक्त वर की खोज करने का अनुरोध करती है।

३. छन्द—चौपाई—इसके प्रत्येक चरण सोलह मात्राएँ होती हैं।

## चौपाई

तब बोल्यौ दुजराज विचारं। सुनि ससिवृत्त कत्थ इक सारं॥
दिल्लीवै चहुआंन महा भर। सो तुम जोग चिन्तयौ हमवर॥९॥
सत सामंत सूर वलकारी। तिन सम जुद्ध सु देव विचारी॥
जिन गहिबौ सर वर गज्जनवै। हय गय मंडिछंडि पुनि हियवै॥१०॥
गुज्जरवै चालुक्क भीमतर। तैं दिन रात्रि डरै जंगल घर॥
वरन जोग तुम ते विचारं। सुनि की सुन्दरि हरष अपारं॥११॥
तहां तुम पिता कृपा करि जाउ। दिल्लीवै अनुराग उपाउ॥
मांस षटह हों वृत्तह मडौं। तथ्थु ना आवै तौ तन छडौं॥१२॥
तब उड़ि चल्यौ देह दिस उत्तरि। ढिग ससिव्रत रष्षि निज सुन्दरि॥
जुग्गिनि पुर आयौ दुजराजं। सोवन देह नगं नग साजं॥१३॥

शब्दार्थ—द्विजराज—श्रेष्ठ पक्षी हंस। कत्थ—कथा। सारं=तत्वपूर्ण। दिल्लीवै—दिल्लीश्वर। महाभर—महान् योद्धा। चिन्तयौ विचारा है। सत—सैकड़ों। बलकारी=पराक्रमी। सम—से। सूर—सूर्य के समान प्रतापी। "तिन सम⋯विचारी" —उनको युद्ध में [देवताओं के समान समझो। सर वर—शूर-वीर। गज्जनवै= गजनी का सुल्तान मुहम्मद गोरी। मंडि—काटकर। छंडि—छक्के छुड़ा दिये। गुज्जरवै चालुक्क भीमतर—गुजरात का पराक्रमी चालुक्यराज भीम। जंगल घर— जंगलों में निवास करता है। तुमते—तुमसे। विचारं—सोचा है। उपाऊ=उत्पन्न करो। मांस षटह—छः मांस। वृत्तह—व्रत को। मण्डौं—धारण करूँगी। तथ्थु—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पृथ्वीराज रूपी तत्व। तन छंडौं—शरीर का त्यागन कर दूँगी। दिसि उत्तरि—उत्तर दिशा को। ढिग—समीप। रष्षि—रखकर। निज सुन्दरि—अपनी सुन्दर पत्नी। सोवन—स्वर्ण।

सन्दर्भ—हंस-दूत शशिवृता के सामने दिल्लीपति पृथ्वीराज को वरण करने का प्रस्ताव रखने के साथ उनके पराक्रम का वर्णन करता है। शशिवृता पृथ्वीराज को वरण करने का दृढ़ संकल्प व्यक्त करती है। इसको सुनकर हंसदूत उत्तर दिशा को पृथ्वीराज के पास पहुँचने के लिये उड़ चलता है :

व्याख्या—शशिवृता के हृदय में अपने प्रति विश्वास जगाकर हंस-दूत ने भली प्रकार से सोच-विचार कर कहा कि हे राजकुमारी ! तुम एक तत्व की बात सुनो। दिल्ली का चौहानवंश राजा पृथ्वीराज बड़ा पराक्रमी है। उसी को ही हम तुम्हारे वर होने योग्य चुना है। उसके साथ में सूर्य के समान सैकड़ों प्रतापी और पराक्रमी सामन्त हैं। उनको युद्ध में देवताओं के समान ही पराक्रमी समझो। जिन्होंने गजनी के सुलतान मुहम्मद गोरी को बड़ी तत्परता से बांध लिया और पृथ्वी को उनसे छीने हुए हाथी, घोड़े से पाट दिया। उन्होंने विपक्षी शत्रुओं के छक्के छुड़ा दिये। गुर्जर प्रदेश का जो राजा चालुक्यराय भीम महा पराक्रमी है। वह भी उनसे रात दिन डरता है और उसके भय से घर को छोड़कर जंगल में छिपकर रहता है। ऐसे पराक्रमी पृथ्वीराज को मैंने तुमसे वरण योग्य समझा है। हंस ने इन वचनों का सुनकर सुन्दरी शशिवृता को अपार हर्ष हुआ।

वह हंस से आग्रह करके कहती है कि हे पिता के समान तुम ! कृपा करके दिल्ली शीघ्र ही जाओ और किसी प्रकार दिल्लीश्वर पृथ्वीराज के हृदय में मेरे प्रति अनुराग जागृत करो। मैं छः मास-पर्यन्त उनको पति रूप में पाने का व्रत धारण करूंगी। यदि इस अवधि में मुझे तत्व रूप पृथ्वीराज की प्राप्ति न हुई, तो मैं अपने शरीर का त्यागन कर दूंगी।

शशिवृता की इस प्रतिज्ञा को सुनकर और उसके दृढ़ संकल्प को देखकर हंस पृथ्वीराज के पास पहुँचने के लिये उत्तर दिशा की ओर उड़कर चल दिया। उसने अपनी सुन्दर पत्नी को शशिवृता के पास उसे धैर्य बँधाने एवं उसकी देख-भाल करने के लिये रख दिया। यह श्रेष्ठ हंस दिल्ली आ गया। उसका स्वर्णिम शरीर नगों के समूह से सुशोभित था।

विशेष—१. हंस-दूत शशिवृता का सन्देश लेकर पृथ्वीराज के पास जाता है। 'नैषिक चरित्र' में दमयन्ती इसी प्रकार नल के पास सन्देश भेजती है।

२. पृथ्वीराज और उनके सामन्तों के पराक्रम का वर्णन उद्दीपन के रूप में हुआ है। यहाँ शौर्य और पराक्रम और श्रृंगार के उद्दीपन के रूप में है।

३. 'पूर्वराग' जनित प्रेम का प्रारम्भ है।

४. अलंकार—(क) 'सत सामंत सूर बलकारी' में उपमा।

(ख) 'तिन सम······बिचार' में उपमा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(ग) 'सत सामन्त···सूर' में 'स' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रयास।

(घ) 'गुज्जरवै···जंगल धर' में हेतुत्प्रेक्षा।

५. पद्मावती समय की पद्मावती भी इसी प्रकार पृथ्वीराज का यश श्रवण कर शुक-दूत को प्रेम-सन्देश और पत्रिका देकर भेजती है। शशिवृता की तरह पद्मावती भी शुक से पृथ्वीराज का शौर्य और पराक्रम सुनकर उन पर अनुरक्त होती है—

"सुनत श्रवन प्रथिराज जस,
उमग वाल विधि अंग
तन मन चित्त चहुँवान पर,
बस्यौ सुर-रत्रह रंग।"

[छ० सं० २३]

शशिवृता पद्मावती की तरह ही पृथ्वीराज के प्रति अपना अनुराग और दृढ़-संकल्प व्यक्त करती हुई शुक से दिल्ली जाने को कहती है :

पद्मावती विलषि वर बाल वेली,
कही कीर सौं बात तब हो इकेली।
झटं जाहु तुम कीर दिल्ली सुदेसं,
बरं चहुवांन जु आनौ नरेशं॥
आनौ तुम चहुवांन वर,
अस कहि इहै सन्देह।
सांस सरीरहि जो रहै,
प्रिय प्रथिराज नरेश।
प्रिय प्रथिराज नरेश, जो लिखि कग्गर दिन्नौ।

× × ×

दिष्षंत दिष्ट उच्चरिय वर इक पलक विलंब न करिय।
अलगार रयन पंचमहि, ज्यों रुकमनि कन्हर वरिय।

ज्यो रुकमनि कन्हर वरी,
ज्यों वरि संभरि कांत
शिव-मण्डप पच्छिम दिशा,
पूजि समय स-प्रांत॥"

—पद्मावती समय [छ० सं० ३२-३५]

कवित्त

वय किसोर प्रथिराज। रम्य हा रम्य प्रकारं॥
सेत पष्य विय चन्द। कला उद्दित तन मारं॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



बिपन मध्य चहुआंन । हंस दिष्यौ अप अष्षिय ।।
चरन भग्ग दुति होत । मेर पछ्छी विय लष्षिय ।।

आचज्ज देषि प्रथिराज वर । धाइ नरति वर कर गहिय ।।
आपुब्ब दुज्ज गति दूत कथ । रहसि राज सों सब कहिय ।। १४।।

शब्दार्थ—रम्य का रम्य=अति सुन्दर। सेत पष्य=शुल्क पक्ष। विय=समान। उद्दित=उदित हो रही थी। मार=कामदेव। कलां उद्दित तन मार=दिष्यौ=देखा। अप=अपनी। अष्षिय=आंखों से। भग्ग=भागने पर। चरन भग्ग द्रुति होत=भागने पर उसके चरणों में अद्भुत दीप्ति आ जाती थी। मेर पछ्छी=सुमेरु (स्वर्णिम) पक्षी। लष्षिय=दिखाई देता था। आचिज्ज=आश्चर्य। देषि=देखकर। 'धाइन्नपति पर गहिए'=राजा पृथ्वीराज ने दौड़कर उसे हाथ से पकड़ लिया। आपुब्ब=अपनी। दुज्ज गति=पक्षी होने की दशा। रहसि=रहस्य।

सन्दर्भ—चौहान राजा पृथ्वीराज वन मध्य में मृगया रत थे। हंस-दूत वहां जाता है। पृथ्वीराज उस स्वर्णिम हंस को देखकर आश्चर्य चकित होते हैं और उसे पकड़कर उससे सारा रहस्य जानना चाहते हैं।

व्याख्या—हंस-दूत दिल्ली में उस वन में जाता है जहां पृथ्वीराज किशोरावस्था में वर्तमान हैं। उनका समस्त शरीर अति सुन्दर है। वह शुल्क-पक्ष के समान शोभायमान है और उसके शरीर में कामदेव की कलाएं उदित हो रही हैं। चौहान राजा पृथ्वीराज ने उस हंस को वन के बीच में आंखों से देखा। भागने पर उसके चरणों में अद्भुत कान्ति आ जाती थी। वह ऐसा लगता था। मानों उसका शरीर सुमेरु (स्वर्ण) का बनाया गया हो। ऐसे आश्चर्यपूर्ण अनुपम हंस को देखकर पृथ्वीराज ने उसे अपने श्रेष्ठ हाथों से पकड़ लिया और उससे पूछा कि उसने अपने इस पक्षी के शरीर को क्यों धारण किया है। तुम मुझसे सारा रहस्य और भेद कहो।

काव्य सौन्दर्य—१. पृथ्वीराज के शरार-सौन्दर्य का वर्णन श्रृंगार के उद्दीपन के रूप में है।

२. सोलह वर्ष की आयु किशोरावस्था की होती है।

३. अलंकार—(क) 'सेत पष्य विय चन्द' (शुक्ल-पक्ष के चन्द्रमा के समान सुन्दर) में उपमा।

(ख) 'मेरे पछ्छी विय लष्षिय' में उपमा।

४. 'रम्य' आदि संस्कृत के शब्द है। 'पष्य', 'उद्दित', 'दिष्यौ', 'अष्षिय', 'लष्षिय', 'आचिज्ज' और 'आपुब्ब' में व्यंजन-द्वित्व की प्रवृत्ति भाषा की प्राचीनता प्रकट करती है। 'सेत' का संस्कृत रूप, श्वेत, 'पुष्य' का 'पक्ष', 'अष्षि' का 'अक्षि' 'पछ्छी' का 'पक्षी' और 'दुज्ज' का 'द्विज' है।

## दूहा

बिपन मध्य आचिज्ज इह। दिष्षि राज पृथिराज।
धूत दुव कलधौत तन। हंस सरूप बिराज ।।१५।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



संझ सपत्तौ नृपति पै। दूत सु जद्दव राइ।
वर कग्गद नृप हथ्थ दै। कहि श्रोतान वधाई ॥१६॥
राका अरु सूरज्ज बीच। उदे अस्त दुहु वेर॥
वर शशिवृता सोभई। मनो शृंगार सुमेर ॥१७॥
इ वै इन काह तरुनि। इन गुन आवै मान॥
सो बर,वर कवि चन्द कहि। सुनहु तो कहूँ प्रमान ॥१८॥

शब्दार्थ—धूत—धोया हुआ। कलधौत—स्वर्ण, स्वर्णिम "कोटिन हूँ कलधौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारौं।" जद्दव राइ— यादव कुमारी, यादव कुमारी अर्थात् शशिवृता। संझ—सन्ध्या। सपत्तौ—होने पर। कग्गद—कागज, पत्र। श्रोतान—श्रोतानुराग। वधाइ—वृद्धि को। राका—रात्रि यहां लक्षणा से राका ईश अर्थात् चन्द्रमा अर्थ लिया गया है। सुमेर—१. सुमेर पर्वत २. माला के बीच की अक्षत मणि। इन—ऐसे। वै—वय, अवस्था, आयु। आवै मान—अनुमान लगाया जा सकता है। वर, बर—बार-बार। प्रमाण—सप्रमाण, दृष्टान्त देकर।

सन्दर्भ—सन्ध्या होने पर हंस-दूत पृथ्वीराज के पास पहुंचकर शशिवृता की दी हुई पत्री देता है और उसके सौन्दर्य की प्रशंसा करता हुआ उसके हृदय में शशिवृता के प्रति अनुराग उद्दीपन करने का प्रयास करता है:

व्याख्या—राजा पृथ्वीराज वन के बीच में आश्चर्यमय स्वर्ण हंस देखकर चकित रह जाते हैं। उसका शरीर मानों स्वर्ण से निर्मित किया गया है—सन्ध्या होने पर यादव कुमारी शशिवृता द्वारा भेजा गया हंस-दूत पृथ्वीराज के पास आकर उपस्थित होता है। सर्वप्रथम वह पृथ्वीराज के हाथ में शशिवृता का भेजा हुआ पत्र देता है और तदन्तर शशिवृता के अनुपम सौंदर्य की प्रशंसा कर उनके हृदय में शशिवृता के प्रति श्रोतानुराग की वृद्धि करता है।

हंस-दूत शशिवृता के सौंदर्य की प्रशंसा करता हुआ कहता है कि भूमण्डल के जितने भाग पर चन्द्रमा एवं सूर्य क्रमशः उदित और अस्त होते हैं उतने भाग पर शृंगार धारण किये हुए कुमारी शशिवृता सुमेरु पर्वत के समान शोभा पाती है। वह स्वर्ण की क्रान्ति वाली सुन्दरी समस्त विश्व में सुन्दरतम है। [इस छन्द का यह भाव भी लिया जा सकता है कि भूमण्डल पर चन्द्र तथा सूर्य उदय और अस्त होते हैं इन दोनों के बीच में जिस प्रकार सुमेरु पर्वत सुशोभित हैं, उसी प्रकार शशिवृता सुमेरु (माला के बीच की अक्षत मणि) के समान सुशोभित है। जिस प्रकार माला फेरने वाला सुमेरु का उल्लंघन नहीं करता और पीछे लौट पड़ता है। उसी प्रकार चन्द्रमा और सूर्य भी उस तक आकर लौट जाते हैं किन्तु उसका स्पर्श नहीं कर पाते। शशिवृता भी वह सुमेरु है, जिसे साधारण व्यक्ति स्पर्श नहीं कर सकते।

हंस-दूत पृथ्वीराज से कहता है कि उस सुन्दरी की वय तथा गुणों का कुछ उपर्युक्त प्रकार अनुमान लगाया जा सकता है। यदि आप उसके सौंदर्य के विषय में सुनना चाहते हैं, तो मैं दृष्टान्त और प्रमाण देकर उसका वर्णन करूं।

विशेष १. शृंगार में उद्दीपन के रूप में शशिवृता के सौन्दर्य का वर्णन है।
२. अलंकार—(क) 'धूत दूत कलधौत तन' में उत्प्रेक्षा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(ख) "राका...सुमेर" में उत्प्रेक्षा।

३. क्रगर—कागज (पत्र)—फारसी [कागद-क्रग्गद-कग्गर-कागर]

## त्रोटक

वय संध्रिरु बाल प्रमान व्रनं। कहि त्रोटक छन्द प्रमान सुनं।।
वय स्यामऽरु शैशव अंकुरयं। अह अंत निसागम संकरयं।।१९।।
इल सैसव युद्ध समान भयं। रवि बाल बहिक्रम अस्तमियं।।
वर सैसव जोबन संधि अती। सु मिलें जनु पित्तह बाल जती।।२०।।
जु रही लगि सैसब जुब्बनता। सुमनों ससिरं तन राज हिता।।
जु चलै मुरि मारुत झंकुरिता। सु मनों मुर बैंस मुरी मुरिता।।२१।।
कलकंठ सुकंठय पंष अली। गुन जंपि कवित्त सु चन्द बली।।२२।।

शब्दार्थ—वय संध्रिरु—वयः सन्धि—शैशव और यौवन का सन्धिकाल। बाल—बाला शशिवृता। प्रमान—प्रमाण या दृष्टान्त सहित। व्रनं—वर्णन करता हूं। सुनं—सुनिये। 'कहि त्रोटक'' सुनि'—मैं त्रोटक छन्द में प्रमाण और दृष्टान्त सहित कहता हूं, सुनिए। वय स्याम—वयः सन्धि की अवस्था। शैशव—बालपन। अंकुरयं—अंकुरित होता है। अह—दिवस। अंत—अवसान। निसागम—रात्रि का आवगन। संकरयं—सन्धिकाल। युद्ध—मुग्धा। भयं—हो गया। रवि बाल—प्रातःकालीन सूर्य। अस्तमियं—अस्तमित। अती—अत्यधिक। पित्तह—क्षिप्त, उन्माद से मुक्त। जुब्बनता—यौवनत्व। राजा हिता—राजाओं का हित करने वाली, राजाओं को प्रसन्न करने वाली बसन्त ऋतु। मारुत—पवन। झंकुरिता—झकझोर देने वाली, कामोद्दीपन करने वाली। मुर बैंस—युवावस्था। मुरी मुरिता—झकझोरी या मुड़ी हुई लता। कलकंठ—सुन्दर कण्ठ से। सुकण्ठय—सुन्दर गाती थी। पंष—पंख। अली—भ्रमर। जपि—वर्णन करता है।

सन्दर्भ हंस-दूत पृथ्वीराज के समक्ष शशिवृता की वयः सन्धि के सौन्दर्य का वर्णन कर रहा है :

व्याख्या—हंस-दूत कहता है कि हे राजन! अब में त्रोटक छन्द में प्रमाण और दृष्टान्त के साथ बाला शशिवृता की वयः सन्धि अवस्था का वर्णन करता हूं। शैशवावस्था के व्यतीत होने पर उसमें यौवनावस्था इस प्रकार अंकुरित हो रही है, जिस प्रकार दिवस के अवसान और निशागम पर सन्धि वेला होती है। उसकी शैशवावस्था इस प्रकार विलीन हो गयी, जिस प्रकार पानी के बुदबुदे विलीन हो जाते हैं। अब उस मुग्धा बाला में भय और लज्जा समान रूप से विराजमान हो रही है।

जिस प्रकार बाल सूर्य रक्त-वर्ण में उदित होता है, किन्तु उसकी रक्तिमा क्षण-भर ही रहती है। कुछ काल के पश्चात् वह अस्त हो जाती है, उसी प्रकार शशिवृता का क्षणिक शैशव समाप्त हो गया है और वह युवावस्था में प्रवेश कर रही है।

शशिवृता के शैशव से यौवन इस प्रकार मिल रहा है मानो वह यौवन में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



उन्मत्त बाल यती है। जिस प्रकार बाल यती में एक नया उत्साह होता है उसी प्रकार शशिवृता में यौवन प्रवेश करके नवीन उन्माद का उदय कर रहा है।

शशिवृता में जो शैशव था, वह मानो शिशिर ऋतु थी। परन्तु अब उसमें यौवनत्व राजाओं को अपनी ओर आकृष्ट करने वाले बसन्त के समान उदय हो रहा है। काम वासना को उद्दीप्त करने वाली वायु उसके यौवन से उन्मादित शरीर लता को झकझोर देती है। वचन का पवन अब स्पर्श करके उसके हृदय को कामोदीप्त कर देता है। जिस प्रकार भ्रमर के उड़ाने से उसके पंखों से मधुर ध्वनि उत्पन्न होती है, उसी प्रकार यह कोकिल कण्ठी शशिवृता अपने सुन्दर कण्ठ से गाती है। चन्द्र कवि अपनी कविता के द्वारा उसके गुणों का कहता है।

काव्य-सौन्दर्य—१. छन्द-त्रोटक——इसमें चार सगण (IIS) को मिलाकर १२ वर्ण होते हैं।

२. अलंकार—(क) 'शय······संकरयं' में दृष्टान्त। (ख) 'जब शैशव' में उपमा। 'रवि-बाल······अत्थमियं' में दृष्टान्त। (घ) "वर सैसव···जती" में उत्प्रेक्षा। (ङ) "जु रही······राज हिया" में उत्प्रेक्षा। (च) 'जु चलै मुखि······झंकुरिता" में रूपक। (छ) 'सु मनो······मुरता' में उत्प्रेक्षा। (ज) अन्तिम पंक्ति में उत्प्रेक्षा।

३. मुग्धा—कामशास्त्र के अनुसार मुग्धा नायिका की अवस्था १६ वर्ष की होती है। उसमें भय और लज्जा समान रूप से आ जाती है। उसे संकोच घेर लेता है।

४. वयः सन्धि-- शैशव और यौवन का सन्धि-स्थान। शैशव तथा यौवन के बीच की स्थिति। काव्य में इसका विस्तार से वर्णन हुआ है—

(क) ससव तनि सुखपति जोवन न जागति।
वेस सन्धि सुहिणा सुवरि।

—वेलि क्रिसन रुकमणीरि

(ख) सैसव जोवन दुहु मिल गेल।
स्रवनक पथ दुहु लोचन लेल।

वचनक चातुरि लहु-लहु हास।
धरनिये चांद कएल परगास।

मुकुर हाथ लए करए सिंगार।
सखि पूछए कइसे सुरत बिहार॥

निरजन उरज हेरए कंत बेरि।
विहुंसए अपन पयोधर हेरि॥

पहिले बदरि-सम पुन नवरंग।
दिन-दिन अनंग अगोरल अंग।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



माधव देखब अपरुब बाला।
सैसव-जोवन दुहु एक मेला।"

—विद्यापति

"छुटी न सिसुता की झलक, झलक्यो जोवन अंग।
दीपति देह दुहून मिलि, दिपति ताफता रंग।।"

५. 'मुद्ध का संस्कृत रूप 'मुग्धा' और 'पंख' का पक्ष है।

## कवित्त

ससिर अंत आवन बसंत। बालह सैसव गम।।
अलिन पंष कोकिल सुकंठ। सजि गुंड मिलत भ्रम।
मुर मारुत मुरि चले। मुरे मुार बैस प्रमानं।।
तुछ कोंपर सिस कुटि्ट। आन किस्सोर रंगानं।।
लीनं न अंमिनक स्यांम तन। मधुर मधुर धुनि करिय।।
जानी न वयन आवन बसत। अग्याता जीवन अरिए।।२३।।

शब्दार्थ—गम—चला। बालह—बाला, युवती शशिवृता। अलिन—भ्रमर पष—पंख। कोकिल सुकण्ठ—कोयल के समान मधुर कण्ठ है। गुण्ड—पुष्पराग। मिलत भ्रम—भ्रम में डाल देती है। मुर मारुत—वायु के झोंके से। मुरे—नमने या झुकने लगी। तुछ—उसके। कोपर—कोमल। सिस—शीश पर। फुटि्ट—फूटने या निकलने लगी। रंगानं—रंग लाने वाली। अंमि—अमृत। नक स्याम—नक श्याम, मकरध्वज, कामदेव। बयन—अवस्था। बसत—बसन्त।

सन्दर्भ—इस छन्द में हंस-दत पृथ्वीराज के समक्ष शशिवृता के वयः संधि-सौन्दर्य का वर्णन करता है। शैशव के जाने की तुलना शिशिर के जाने और यौवन आने की समता बसन्तागम से करता हुआ कहता है:

व्याख्या—जिस प्रकार शिशिर ऋतु का अन्त होने पर बसन्त ऋतु का आगमन होता है, उसी प्रकार शशिवृता का शैशव समाप्त हो गया है और उसमें यौवन का आगम हो रहा है। अब उसके शरीर पर यौवन बसन्त ने अधिकार कर लिया है। बसन्त ऋतु में पंखों से उड़ते हुए जिस प्रकार भ्रमर मधुर गुंजार करते हैं, उसी प्रकार कोकिल कंठी वह शशिवृता मधुर स्वर में गान करने लगी है। वह जब पुष्पराग का लेप अपने शरीर पर करती है, तब उसके अनुपम सौन्दर्य को देखकर लोग भ्रमित हो जाते हैं।

उसके शरीर में बालापन के स्थान पर मुग्धता आ गई। अब वह यौवन के भार से लचीली लता के समान किशोर वय की पवन के झोंके लगने से लचने लगी है, तथा उस लता पर कोंपलें फूटने लगी हैं। उसमें नवीन कोमल और लजीली भावनाएं आने के साथ यौवन को प्रकाशित करने वाले अंगों में उभार आ गया है। किशोरावस्था ने आकर उस पर अपना रंग जमाना प्रारम्भ कर दिया है। किशोर वय ने उसके शरीर को खिला दिया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



वह पद्मगन्धा है। उसके शरीर की सुगन्धि से आकृष्ट होकर भ्रमर उसके चारों ओर गुंजार करने लगे हैं, किन्तु वे उसके अधरामृत को पान करने का साहस नहीं कर पा रहे हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि शशिवृता के शरीर में कामदेव ने अपना घर बना लिया है। ऋतुराज बसन्त के समान ही युवावस्था ने शशिवृता के शरीर में प्रवेश किया है, किन्तु वह बाला अपने जीवन के यथार्थ ज्ञान से अर्थात् यौवनागम से अपरिचित है।

काव्य सौन्दर्य—१. नायिका अज्ञात यौवना मुग्धा है। उसे अपने यौवन का ज्ञान नहीं है। ['अगयाता जीवन अरिय']

२. अलंकार-सांगरूपक—बसन्त ऋतु का शशिवृता पर अंगों सहित आरोप है। बसन्तागम में भ्रमर गुंजार करने लगते हैं, कोकिल कूकने लगती है, पुष्पपराग अपनी सुगन्ध बिखेर देता है, शीतल मन्द सुगन्ध समीर चलने लगती है, नई कोपलें फूटने लगती हैं। यह सारा वातावरण कामोद्दीपक होता है शशिवृता के शरीर से शैशवावस्था रूपी शिशिर समाप्त हो गई है और यौवन वसन्त का आगमन हो गया है। उसके शरीर के अंगों में उभार है। लता के समान वह किशोर-वय के भार से नमित हो रही है। उसके हृदय में कामदेव का निवास हो गया है।

३. भ्रमर अधरामृत पान करने का साहस नहीं करता—कवि ने इसका कारण यह दिया है कि कामदेव ने शशिवृता के हृदय में घर बना लिया है। कवि-परम्परा के अनुसार कामदेव के पुष्प-धन्वा की प्रत्यंचा भ्रमरों की बनी होती है। भ्रमरों को भय है कि शशिवृता का अधरामृत पान करते हैं, तो कामदेव उनको पकड़कर कहीं अपने धनुष की प्रत्यंचा न बना ले।

४. वयः संधि और उसमें अंगों के विकास का निम्न वर्णन दृष्टव्य है :—

सैसव जोवन दरसन भेल। दुहु दल-बलहि दन्द परि गेल॥
कबहुं बांधय कच कबहु विचार। कबहु झापय अंग कबहु उघार॥
थीर नयन अथिर किछु भेल। उरज उदय थल लालिम लेल॥
चपल चरन, चित चंचल मान। जागल मनसिज मुदित नयान॥
विद्यापति कह करु अवधान। बाला अंग लागल पंचबान॥

—विद्यापति

## कवित्त

पत्त पुरातन झरिग। पत्त अकुरिय उट्ठ तुछ॥
ज्यों सैसव उत्तरिय। चढ़िय वैसव किसोर कुछ॥
सीतल मंद सुगंध। आय रितिराज अचानं॥
रोमराइ अंग नितंब। तुच्छ सरसानं॥
बढ्ढै न सीत कटि छीन हुँ। लज्ज मानं ढंकति फिरै॥
ढकै न पत्त ढकै कहै। बन बसंत मंत जु करै॥२४॥

शब्दार्थ—पत्त=पत्ते, पत्ते यहाँ लज्जा का प्रतीक हैं। झरिग=झड़ गये। अंकरिय उठठ=अंकुरित हो उठते हैं। तछ=छोटे-छोटे। उत्तरिय=उत्तर गया.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



समाप्त हो गया। चढ़िय बैसव किसोर कुछ=कुछ कुछ युवावस्था चढ़ने लगी। अचानं=सहसा, अचानक। रोमराइ=रोमावली। तुच्छ सरसानं=कुछ बढ गये, कुछ सरसता आ गई। बड्ढै न सीत कटि छीन हुव=जिस प्रकार बसन्त के आने पर शीत नहीं बढ़ता अर्थात् कम हो जाता है, उसी प्रकार यौवन का पदार्पण होते ही शशिवृता की कटि क्षीण हो गई। लज्ज मानं=लाजवंती पौधे के समान। ढंकित फिरे=ढकती फिरती है, संकुचित होती है। ढकै न=नहीं छिपाती। न पत्र=पत्रों से विहीन। ढकै=ढाक। मत जुकरै=वसन्तकालीन वनस्थली को अनुसरण करती है।

संदर्भ—हंस-दूत पृथ्वीराज के समक्ष शशिवृता में यौवन-वसंत का आगमन दिखाकर उसके सौन्दर्य का वर्णन कर रहा है।

व्याख्या—शशिवृता का शैशव उसी प्रकार उतर गया और कुछ-कुछ युवावस्था उसी प्रकार चढ़ने लगी है। जिस प्रकार बसंत ऋतु के आने पर वृक्षों से पत्ते झड़ जाते हैं और छोटे-छोटे नये पत्ते अंकुरित हो उठते हैं। तात्पर्य यह है कि शशिवृता की शैशव की प्रवृतियां विलीन होने लगी हैं और नई-नई सुकुमार भावनाएं अंकुरित हो उठी हैं, जो उसमें बसन्त रूपी यौवनागम को सूचित करती है। जिस प्रकार ऋतुराज बसन्त के सहसा आगमन पर शीतल, मन्द, सुगन्धित पवन चलने लगती है, उसी प्रकार शशिवृता के शरीर में रोमावली, उरोज और नितम्बों में कुछ-कुछ वृद्धि होकर सरसता आ गई है।

जिस प्रकार बसन्त ऋतु के आने पर शीत नहीं बढ़ता, अर्थात् कम होता जाता है, उसी प्रकार शशिवृता की कटि क्षीण होने लगी है। जिस प्रकार लाजवन्ती का पौधा स्पर्श कर देने से सिकुड़ने लगता है। उसी प्रकार शशिवृता भी लज्जा के प्रवेश से संकुचित होने लगी है। वह अपने अंगों को ढकती फिरती है।

जिस प्रकार बसन्त ऋतु में पलाश का वृक्ष पत्र-विहीन हो जाता है, उसी प्रकार शशिवृता भी कभी-कभी अपने अंगों को ढकना भूल जाती है। इस प्रकार वह बसंत कालीन वनस्थली का अनुगमन करती है।

विशेष—१. वयः सन्धि के सौन्दर्य का वर्णन शृंगार-रस के उद्दीपन के रूप में हुआ है।

२. नायिका अज्ञात-यौवना है।

३. अलंकार—सम्पूर्ण छन्द में सांग रूपक है। प्रत्येक पंक्ति में दृष्टान्त है।

४. अंतिम पंक्ति में 'न' को अर्थ करते समय 'ढकै' और 'पत्र' दोनों के साथ लेना पड़ेगा।

५. व्यंजन-द्वित्व की प्रवृत्ति भाषा की प्राचीनता सिद्ध करती है।

६. भाव-साम्य—

"सैसव जीवन दरसन भेल। दुहु पथ हेरइत मनसिज गेल॥
मदनक भाव पहिल उपचार। भिन जन देल भीन अधिकार॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



कटिकेर गौरव पाओल नितम्ब । एकक खीन अओक अवलम्ब ।।
प्रगट हास अब गोपित भेल । उरज प्रगट अब तन्हिकर लेल ।।
चरन चपल गति लोचन पाव । लोचन धैरज पदतल आव ।।"

—विद्यापति

## दूहा

श्रवनन भव श्रोतान न्नप । मन वंछै चहुआंन ।।
मनु ससिवृत कुआंरि कौ । पर्यौ उरद्धर बान ।। २५ ।।

शब्दार्थ—भव—हो गया । श्रोतान=श्रोतानुराग । मन वंछैं—मन से चाहने लगा । उरद्धर—हृदय में ।

संदर्भ—यहां हंस-दूत से शशिवृता का सौंदर्य वर्णन सुनकर पृथ्वीराज के मन में उसके प्रति प्रेम जागृत होने का वर्णन कवि ने किया है :

व्याख्या—शशिवृता के सौंदर्य का वर्णन सुनकर राजा पृथ्वीराज चौहान के हृदय में श्रोतानुराग उत्पन्न हो गया है और वह मन से शशिवृता को प्रेम करने लगा । ऐसा लगता था मानो राजकुमारी शशिवृता का उसके हृदय में प्रेम का बाण लग गया हो ।

विशेष—१. यहां से तुल्यानुराग की अवस्था प्रारम्भ होती है । शशिवृता में पृथ्वीराज की प्रशस्ति सुनकर पहले श्रोतानुराग उत्पन्न हो चुका है । अब हंस-दूत से शशिवृता के सौन्दर्य का वर्णन सुनकर पृथ्वीराज के हृदय में उसके प्रति श्रोतानुराग उत्पन्न हो गया ।

२. अलंकार—उत्प्रेक्षा ।

## कवित्त

निसि नरिंद चहुआंन । चित मनोरत्थ विचारै ।।
भई दीह सत्र निशा । निशा सयनंतर धारै ।।
सयनंतर ससिवृत्त । चटु चटु बैंन उचरै ।।
चारु चारु वर बयन । मान माननि संभारै ।।
देवान मनोरथ चित्त वर । भव भव छन्नन कहु करै ।।
भो प्रात दूत पुच्छै न्नपति । जद्दोवै चितै धरै ।।२६।।

शब्दार्थ—नरिंद—राजा पृथ्वीराज । मनोरत्थ—अभिलाषा । दीह—दिने । सयनंतर—शयन में । चाटु चट बैन—चाटुकारिता के वचन । मान—समान । माननि—मानवती । सम्भरै—सुने । दैवान—देवताओं के तुल्य । भव छन्नन—सांसारिक बन्धन । जद्दोवै—यादव राजकुमारी शशिवृता ।

सन्दर्भ—पृथ्वीराज की रात्रि शशिवृता के चिन्तन में व्यतीत होती है । वह स्वप्न में उसकी चाटुकारिता करता है और सवेरा होने पर पुनः हंस-दूत से शशिवृता के सम्बन्ध में पूछता है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



व्याख्या—शशिवृता के अनुराग में पगे हुए पृथ्वीराज चौहान रात्रि में शशिवृता को लेकर अनेक प्रकार की अभिलाषाओं पर चिन्तन करते हैं और अभिलाषाओं के ऊहापोह में ही सारी रात्रि व्यतीत हो जाती है। इस प्रकार शशिवृता की स्मृति में जागरण की सारी रात्रि दिन ही बन जाती है अर्थात् वह दिन के समान ही रात्रि भर जागते रहते हैं। रात्रि के समय जब वे शयनागार में जाते हैं। तब स्वप्न में शशिवृता उनके समीप आ जाती है। वह उससे अनेक प्रकार के चाटुकारिता पूर्ण वचन कहते हैं। किन्तु उनको शशिवृता के वचन माननी नायिका के वचनों के समान सुनाई पड़ते हैं। अर्थात् वह उनके चाटुकारिता पूर्ण वचनों को सुनकर मानवती नायिका के समान अपने मुख से नपे-तुले शब्द निकालती है।

इतना सब कुछ होने पर भी श्रेष्ठ व्यक्तियों की अभिलाषाएं देव-तुल्य होती हैं। संसार के बन्धन उनका कुछ नहीं कर सकते। भाव यह है कि पृथ्वीराज महापुरुष हैं, उनकी अभिलाषाओं में उसी प्रकार कोई व्यवधान नहीं पडता, जिस प्रकार देवताओं के मनोरथों में कोई विघ्न नहीं पड़ता। देवताओं की ही तरह सांसारिक बन्धन उनका स्पर्श तक नहीं कर पाते और साँसारिक बन्धन उनके देव तुल्य मनोरथों में कोई विघ्न नहीं डालते।

पृथ्वीराज करवटें बदलते हुए रात्रि व्यतीत करते हैं और सवेरा होते ही वे पुनः हंस-दूत से शशिवृता के सम्बन्ध में पूछते हैं।

**विशेष**—कवि ने यहां स्वप्न मिलन का कवि-परम्परा के अनुसार वर्णन किया है।

२. पृथ्वीराज की अभिलाषाओं को देव-तुल्य कहकर कवि यह संकेत दे देता है कि उनकी अभिलाषाएं अवश्य पूर्ण होंगी।

३. पृथ्वीराज के हृदय में अनुराग मंजीष्ठ रंग को पहुंच गया है।

४. 'सयनन्तर' के स्थान पर 'सपनन्तर' पाठ भी मिलता है।

५. प्रेमी की दशा का यथार्थ और स्वाभाविक चित्रण हुआ है। निम्न दोहे में भाव-साम्य दृष्टव्य है :

"सोवत जागत सुपन वस, रस रिस चैन कुचैन।
सुरत स्यामघन की सुरति, बिसराये बिसरैन॥"

—बिहारी

६. अलंकार—(क) 'भई दीह सम निशा' में उपमा। (ख) अनुप्रास।

## दूहा

बर बंध्यौ ससिवृत्त को। अरु अप भान कुंआर॥
वे ही दिन कमधज्ज कै। नाम बीरव्वर भार॥२७॥

**शब्दार्थ**—बर बध्यौ—मँगनी कर दी। वे ही दिन—उन्हीं दिनों वीर=वीरचन्द। भार=भट, योद्धा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**सन्दर्भ**—हंस दूत के पृथ्वीराज के पास आने के दिनों में ही राजा भान ने शशिवृता की मंगनी वीरचन्द के साथ कर दी थी :

**व्याख्या**—जिन दिनों हंस-दूत पृथ्वीराज के पास आया था और शशिवृता का प्रसंग चला रहा था, उन्हीं दिनों देवगिरि के राजा भान ने कुमारी शशिवृता की मंगनी श्रेष्ठ कमधज्ज वीर वीरचन्द के साथ कर दी।

## कवित्त

चित्र रेष वाला विचित्र। चंद्री चन्द्रनन ॥
स्वर्ग मग्ग उत्तरी। चित पुत्तरि परमानन ॥
काम बान सुंजरी। बाल अंजुरी सु लच्छिय ॥
मार कलह उत्तरी। पुव्व अच्छरी सुलच्छिय ॥
लछिन बत्तीस लच्छी सहज। रतिपति चित्त समंधरै ॥
संग्रहै वृत्त चहुआंन को। गवरि पुज्ज दिनप्रति करै। २८॥

**शब्दार्थ**—चित्र रेष=चित्ररेखा नाम की अप्सरा। वाला विचित्र=अनुपम सुन्दरी। चन्दी=चन्द्रमा की क्रान्ति वाली। चन्द्रानन=चन्द्रानन=चन्द्रमा के समान मुख। मग्ग=मार्ग। उत्तरी=उतर कर पृथ्वी पर गई। पुत्तरि=पुत्तलिका। परमानन=प्रमाण, दृष्टान्त रूप, समान। बान संजुरी=साधे हुए वाण के समान। अंजुरी=अंजुली, भण्डार। लच्छिय=लक्षणों। मार-कलह=कामदेव की कला। उत्तरी=अवतार। पुव्व=पूर्व, पहले। अछरी=अप्सरा। सलच्छिय=सुन्दर लक्षणों वाली। लच्छी=लक्ष्मी। रति-पति—पति विषयक। समंधरे=भली प्रकार धारण करती है। संग्रहै वृत्त=व्रत का आचरण करती है। गवरि पुज्ज=गौरी की पूजा।

**सन्दर्भ**—इस कवित्त में हंस दूत ने पृथ्वीराज के समक्ष शशिवृता के सौन्दर्य, गुणों और पृथ्वीराज को ही वर रूप में प्राप्त करने के उसके संकल्प का वर्णन किया है :

**व्याख्या** सवेरा होने पर पृथ्वीराज शशिवृता का और अधिक वृत सुनाना चाहते हैं। हंस दूत उसके अनुपम सौन्दर्य का वर्णन करता हुआ कहता है कि शशिवृता अनुपम सुन्दरी अप्सरा चित्ररेखा का अवतार है। उसके शरीर की क्रान्ति चन्द्रमा के समान है और वह चन्द्रवदनी है। चित्र की पुत्रलिका के समान वह बाला शशिवृता स्वर्ग-मार्ग से उतर कर इस पृथ्वी पर आई है। वह कामदेव के साधे हुये वाण के समान है और सुन्दर लक्षणों का भण्डार है।

शशिवृत्ता के रूप में मानों कामदेव की कलाओं ने ही अवतार लिया है। वह पूर्व जन्म में सुन्दर लक्षणों वाली अप्सरा थी। वह बत्तीस लक्षणों से युक्त साक्षात् लक्ष्मी है। यह प्रतिक्षण अपने हृदय में आपके लिये पति-विषयक प्रीति धारण किये रहती है।

शशिवृत्ता ने पृथ्वीराज चौहान से ही विवाह करने का व्रत ले रखा है और अपनी इस अभिलाषा की पूर्ति के लिए वह प्रति दिन गौरी का पूजन करती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



काव्य-सौन्दर्य—१. शशिवृता के सौन्दर्य का वर्णन यहां श्रंगार रस के उद्दीपन के रूप में है।

२. अलंकार—(क) 'चंदी चन्द्रानन' में उपमा, (ख) 'चित पुत्तरि परमानन' में उपमा, (ग) 'काम बान सुंजुरी' [कामदेव से साधे हुए वाण के समान] में उपमा, (घ) 'मार कलह' उत्तरी से उत्प्रेक्षा, (ङ) 'संजुरी' 'अंजुरी' में सभंग पद यमक।

३. 'कार' के स्थान पर शुद्ध पाठ 'मार' है।

४. 'मग्ग', 'उत्तरि', 'पुत्तरि' 'पुव्व' 'पुज्ज' में व्यंजन-द्वित्व है।

५. 'पुत्तरि' का संस्कृत रूप 'पुत्तलिका', 'अंजरि' को 'अंजुलि', 'कलह' को 'कला,' 'पुव्व' का 'पूर्व', 'अच्छरी' का 'अप्सरा,' लच्छी का 'लक्ष्मी' है।

विशेष—१. शशिवृता चित्ररेखा नाम की अप्सरा का अवतार है। इस पर पहले टिप्पणी दी जा चुकी है।

२. "गवरि पुज्ज दिनप्रति करैं"—हमारे यहां अच्छा पति पाने के लिए क्वांरी कन्याएँ गौरी का व्रत पूजन करती हैं।

३. भाव-साम्य—

"मनहुँ कला ससिभान, कला सोलह सो बन्निय।
बाल वेस ससि ता समीप, अम्रित रस पिन्निय।
बिगसि कमल स्रिग भ्रमर, वैन खंजन मृग लुट्टिय।
हीर कीर अरु बिम्ब, मोति नष-सिष अहि घुट्टिय।
छत्रपति गयंद हरि हंस गति, विह बनाय संचै सकल।
पदमिनिय रूप पद्मावतिय, मनहुँ कांम कामिनि रचिय॥"

—पद्मावती समय

## दूहा

बरनी जोग बरन्न को। बर भुल्लै करतार॥
तिहि कारन ढुंढत फिरैं। सत्त समुद्रह पार॥२९॥
जा कारन ढुंढत फिरत। सो पायो दीलीस॥
अब जद्दव ससिवृत्त चढ़िय। दीनी ईस जगीस॥३०॥
हंस कहै राजन्न सुनि। इह उतपति अनुराग॥
श्रवन सुनी संभरि सु पहु। कहौं वृत्त सलाग॥३१॥

शब्दार्थ—बरनी (देशज—बन्नी)=जिसका वरण होने वाला है। बरन्न को=वरण करने के लिये। वर भुल्लै करतार=विधाता (उसके योग्य) वर रचना भूल गया। दीलीस=पृथ्वीराज। जद्दव—यादव कुमारी शशिवृता। ससिवृत चढ़िय=शशिवृता ने यह व्रत ले लिया है। ईस=शंकर भगवान। जगीस=पृथ्वीराज। इह=इस प्रकार। पहु=राजा। संभरि सु पहु=शाकंभरी नरेश पृथ्वीराज। संलाग=व्रत में संलग्न है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**सन्दर्भ**—हंस दूत पृथ्वीराज से कहता है कि ब्रह्मा ने शशिवृता के योग्य वर की रचना की ही नहीं। अतः उसके लिए सर्वत्र वर की खोज हो रही है। अब तुम उसके योग्य वर मिल गये हो। भगवान शंकर ने भी उसे तुम्हें पाने का वरदान दिया है। अब मैं तुमसे कहता हूँ कि वह तुम्हें पाने के लिए कैसा व्रत कर रही है :

**व्याख्या**—हे राजन ! शशिवृता जैसी अनुपमा सुन्दरी की सृष्टि करके विधाता उसके योग्य वर की सृष्टि करना भूल गया अर्थात् शशिवृता जैसी सुन्दरी के लिए उपयुक्त वर की सृष्टि करना ही विधाता भूल गया। इसीलिए उसके योग्य वर की सात समुन्द्र पार तक खोज की जा रही है, किन्तु कहीं उपयुक्त वर नहीं मिलता मैंने उसके योग वर हे दिल्लीश्वर ! आपको पा लिया। अब तो यादव कुमारी शशिवृता ने दिल्लीश्वर को ही वरण करने का व्रत ले लिया है भगवान शिव ने भी उसे पति रूप में पृथ्वीराज की प्राप्त करने वरदान दिया है।

हंस पुनः कहता है कि राजन् ! मैंने आपको यह बतलाया कि किस प्रकार शशिवृता की उत्पत्ति हुई और किस प्रकार तुम्हारे प्रति उसके हृदय में अनुराग पैदा हुआ है। हे शाकंभरी नरेश ! अब कान लगाकर सुनिए कि शशिवृता ने कैसा व्रत लिया है।

**काव्य-सौन्दर्य**—अलंकार—'विधाता ने शशिवृता के योग्य वर की सृष्टि नहीं की' मे अतिशयोक्ति।

**विशेष**—१. 'हंस-दूत की वाक् पटुता दृष्टव्य है। पहले वह शशिव्रता का अनुपम सौन्दर्य-वर्णन करके पृथ्वीराज की उसके प्रति जिज्ञासा जागृत कर देता है। साथ में शशिवृता के अनुराग और शिव के वरदान की बात कहकर तथा उसे व्रत में संलग्न बताकर बड़ी सहजता और मनोवैज्ञानिकता से पृथ्वी के हृदय में अनुराग के अंकुर को पल्लवित कर देता है।

## कवित्त

देवागिरि नृपभान। सोम वंसी संतपै न्नप ॥
तिन अनत दल तेज। बहुल हैगै पैंदल तप ॥
नयर मध्य कोटीस। बसै बानिक्क अनंत लछि ॥
धर्म तप्प नह पार। न कोऊ दास रहै इछु ॥
सा एक लष्ष पयदल पुलत। षग्ग जोर घूनं वहै ॥
जद्दव नरिंद सब गुन कुसल। घन प्रताप दिन दिन लहै ॥३२॥

**शब्दार्थ**—सोम बंशी—चन्द्र बंसी। संतपै—वैभव पूर्ण शासन करता है। तिन—उसके। अनंत—असख्य। बहुत—बहुत से। है—हय, घोड़े। गय—गयन्द तप—वहाँ। नयर मध्य कोटीस—करोड़पति। बानिक्क—व्यापारी। अनन्त लछि—अपार लक्ष्मी या धन वाले। तप्त—तप। नह—नहीं। पार—सीमा। इछु—इच्छा। सा—उसके। लष्ष—लाख। पयदल—पैदल सैना। पुलत—प्रयाण करते हैं षग्ग जोर—तलवार के बल से। 'घूनं'—भयानक शव।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सन्दर्भ—इस कवित्त में देवगिरि के राजा भान के ऐश्वर्य और पराक्रम का वर्णन हंसदूत पृथ्वीराज के समक्ष कर रहा है :

व्याख्या—देवगिरि (देवास) में चन्द्रवंशी राजा भान बहुत ही वैभव के शासन कर रहा है। उसका तेज और बल अनन्त है। उसके पास असख्य अश्व-सेना, गज-सेना और पैदल-सेना है। उसके नगर में (राज्य में) अपार धन से युक्त करोड़-पति व्यापारी निवास करते हैं। उसके धर्म और तप की कोई सीमा नहीं है। उसके सेवक भी इतने वैभवपूर्ण हैं कि उनकी कोई इच्छा शेष नहीं है। उसके युद्ध के लिये प्रयाण करने पर एक लाख सेना साथ में चलती है। वह अपनी तलवार की शक्ति से भयानक से भयानक शत्रु को मारकर भगा देता है। ऐसा यह यादवराय भान समस्त गुणों से सम्पन्न है। नित्य-प्रति उसका धन और ऐश्वर्य बढ़ता ही रहता है।

विशेष—१. 'वानिक्क', 'तप्त', 'खग्ग', 'जद्दव' में व्यंजन की प्रवृत्ति है।
२. 'है' का संस्कृत रूप 'हय' 'गै' का 'गयद', 'नयर' का 'नगर', 'लच्छि' का 'लक्ष्मी' है।

तास पुत्र नारेन । पुत्र ससिव्रता प्रमानं ॥
दुअ अनंत सूरत्ति । रूप मकरंद सु जानं ॥
भगिनि भ्रात दुअ प्रीत । पिता माता प्रिय मानं ॥
अति उछाह रंग रमै । असन इक ठाम प्रधानं ॥
सुवरिष्ष भई सत्तहरुदुअ । अति अभूतच्छिन प्रबल ॥
लालित संरूप पिय चदसम । राजकुंअरि राजै अतुल ॥३३॥

शब्दार्थ - तास—उसका । नारेन—नारायण । प्रमान—समझो । दुअ—दोनों । अनन्त सूरति—अत्यधिक सुन्दर । रूप मकरंद—सौन्दर्य में कामदेव । प्रिय मानं—आनन्द मानते हैं । उछाह । उत्साह । रंग रमैं—क्रीड़ा करते हैं । असन—भोजन । एक ठाम—एक स्थान पर, एक साथ । प्रधानं—प्रायः । वरिष्ष—वर्ष । सत्तहरुदुअ—उन्नीस । अभूत लच्छिन—अलौकिक अथवा दिव्य लक्षणों से युक्त । लालित—पालन की गयी । सरूप—सौन्दर्य में । पिय चन्द रूप—प्रियदर्शी चन्द्रमा के समान । राजै—सुशोभित होती है । अतुल—अत्यधिक ।

सन्दर्भ—इस कवित्त में हंसदूत शशिव्रता और उसके भाई नारायण के सौन्दर्य का वर्णन कर रहा है :

व्याख्या—राजा भान के दो सन्तानें हैं—एक पुत्र और दूसरी पुत्री । पुत्र का नाम नारायण और पुत्री का नाम शशिवृता है। दोनों ही अति सुन्दर हैं। सौन्दर्य में उन दोनों को कामदेव ही समझो। भाई बहिन में परस्पर अतुल स्नेह है। इनको पाकर माता-पिता बड़ा ही आनन्द मनाते हैं। वे बड़े उत्साहपूर्वक क्रीड़ाएं करते हैं और प्रायः एक साथ एक ही स्थान पर भोजन करते हैं। वह शशिव्रता अब उन्नीस वर्ष की हो गयी है। उसमें अत्यधिक मात्रा में दैवी गुण और लक्षण आ गए हैं। लाड़ से पाली-पोषी गई वह शशिव्रता सौन्दर्य में प्रियदर्शी चन्द्रमा के समान है। उस राजकुमारी में इस समय अतुल शोभा विराज रही है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



अलंकार—१. 'रूप मकरन्द सु जान' में उत्प्रेक्षा।
२. "लालित ......चन्दसम' में उपमा।

तिन राजन कै मंत्र। नाम आनंद चंद भर॥
तिन भगिनी चंद्रिका। ब्याह ब्याही सुदूरि धरि॥
नैर कोट हिस्सार। तास षित्रीय प्रथम बर॥
अति सु प्रीति नर नारि। सुष्ष अनुभवं दीह पर॥
कोइक्क दिवस भरतार वहि। तुच्छ दीह परलोक गत॥
आनई बहिन फिर अप्प ग्रह। अति सु दुष्ष निसि दिन करत॥३४॥

शब्दार्थ— तिन राजन कै—उस राजा के। मंत्र—मंत्री। भर—योद्धा, वीर। सुदूरि धरि—बहुत दूर देश में। तास—उसका। षित्रीय—खत्री। प्रथम—कामदेव। सुष्प—सुख। दीह पर—प्रतिदिन! कोइक्क—किसी एक दिन। भरतार—पति। तहि— वह। तुच्छ दीह—थोड़े ही दिनों मे। आनई—ले आया। अप्स—अपने। दुष्ष=दुख।

सन्दर्भ—इस कवित्त में हंसदूत पृथ्वीराज के समक्ष राजा भान के मन्त्री आनन्द चन्द की बहिन चन्द्रिका के हिसाब मे विवाह, उसके विधवा होने और आनन्द चन्द द्वारा उसे अपने घर ले आने का वर्णन करता है :

व्याख्या—राजा भान के वीर मन्त्री आनन्दचन्द की बहिन चन्द्रिका का विहाह सुदूर देश नैरकोट हिसार मे हुआ था। उस चन्द्रिका का पति खत्री जाति का था और कामदेव के समान अति सुन्दर था। पति-पत्नी दोनों में अपार प्रेम था। वह दम्पत्ति प्रति दिन अपार सुख का अनुभव करता था। कुछ दिनों के अनन्तर ही चन्द्रिका का पति स्वर्गवासी हो गया। आनन्दचन्द अपनी बहिन को अपने घर ले आया। अपनी बहन के वैधव्य के कारण आनन्दचन्द दिन-रात दुखी रहता है।

अलंकार—'तास षित्रीय प्रथम वर' उपमा अलंकार।

## दूहा

मती प्रवीन त्रिद्या लहन। गान तान सुभ साज॥
कैइक दिन अन्तर वहिग। गई अंतेवर राज॥३५॥
तिन सगह ससिव्रता सुभ। पठन विद्य सुभ काज॥
देवि कुंवरि अद्भुत अवय। रंजित है अति लाज॥३६॥

शब्दार्थ—विद्या-लहन—विद्या प्राप्त करने में। ताल—लय, स्वर। कैइक—कुछ ही। अन्तर—पश्चात्। वहिग—व्यतीत होने पर। अंतवेर—राजा के अन्तःपुर में तिन संग्रह—उसके साथ। सुअ—उसने।। पठन विद्य शुभ काज—विद्या पढ़ने का शुभ काज प्रारम्भ किया। देवि=वह चन्द्रिका देवी। अवय—शरीर के अवयव। कुंवरि अद्भुत अवय—कुमारी शशिवृता का अंग—प्रत्यंग सौन्दर्य। है अति लाज—लज्जा में डूब गई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सन्दर्भ—इस छन्द में हंस चन्द्रिका का परिचय देता हुआ उसके कुमारी शशिवृता के सामीप्य तक पहुँचाने का प्रसंग कहता है [इस चन्द्रिका के द्वारा ही शशिवृता के हृदय में पृथ्वीराज के प्रति श्रोतानुराग जागृत हुआ था]।

व्याख्या—आनन्दचन्द की वहिन चद्रिका विद्या प्राप्त करने में बड़ी प्रवीण थी। उत्तम वाद्ययन्त्रों के साथ वह बड़े सुन्दर लय-स्वर से गाती थी। वैधव्य के कुछ दिन पश्चात् ही वह राजा भान के अन्तःपुर में अपनी प्रवीणता के कारण प्रवेश पा गयी। उसके साथ शशिवृता ने विद्या पढने का शुभ काम प्रारम्भ किया। देवी चन्द्रिका राजकुमारी शशिवृता के अंग प्रत्यंग के सौन्दर्य को देखकर लाज से रंजित हो गयी। भाव यह है कि उसकी सुन्दरता पर मुग्ध हो गयी।

विशेष—१. कुछ टीकाकारों ने 'पठन विद्य सुभ काज' का अर्थ गड़बड़ किया है। स्पष्ट है कि विधवा चन्द्रिका जो कि गान विद्या में अति निपुण हो गयी थी, उसका प्रवेश अन्त पुर में शशिव्रता को शिक्षा देने के लिये ही होता है और शशिव्रता उसके द्वारा विद्या-पठन का शुभ कार्य प्रारम्भ करती है।

२. चन्द्रिका शशिव्रता के लावण्य पर मुग्ध है वह पृथ्वीराज के गुणों और पराक्रम से भी प्रभावित है और चाहती है कि शशिवृता को पृथ्वीराज वर रूप में प्राप्त हों। अतः वह उनकी प्रशस्ति करती है तब उसमें लज्जा की लाली आ जाना स्वाभाविक है। युवतियाँ पुरुषों की प्रशंसा करती हुई लजा ही जाती है।

३. 'रंजित है प्रति लाज में सात्विक अनुभाव की व्यंजना है।

## कवित्त

जब षित्रिन' चंद्रिका। कहै गुन नित चहुआनं॥
जेस पराक्रम राज। तेह वरने दिन मानं॥
राजकुंअरि जब सुनै। तबै उम्भरै रोम तन॥
फिरि पुच्छै ससिवृत। सद्दि एकंत मत्त गुन॥
जे जे सु पराक्रम राज किय। सोई कहै षित्रिन समथ॥
श्रोतान राग लग्यौ उअर। तो व्रत लिनौ सुनौ सुकथ॥३७॥

शब्दार्थ—षित्रिन—खत्राणी। तेह—उसके। दिन-मानं—दिन-पर्यन्त। उम्भरै—उठते थे। उम्भरै रोम तन—रोमांचित होती थी। सद्दि बुलाकर। मत्त गुन—उन्मत्त बनाने वाले गुण। समथ—समर्थ, कार्य साधन में समर्थ। उअर—हृदय में। तो तुम्हारा, तुम्हें वरण करने का व्रत। व्रत—संकल्प। सुकठ—सुन्दर कथा।

सन्दर्भ—इस कवित्त में हंस-दूत पृथ्वीराज के समक्ष वर्णन करता है कि चन्द्रिका द्वारा नित्य प्रति आपके गुण वर्णन करने से शशिव्रता के हृदय में किस प्रकार श्रोतानुराग जागृत हुआ :

व्याख्या—खत्राणी चन्द्रिका शशिवृता के समीप रहकर नित्यप्रति पृथ्वीराज चौहान के गुणों का वर्णन करती। हे राजन! आपने जैसा पराक्रम किया है, उसका वर्णन वह शशिवृता के समक्ष दिनभर किया करती।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



राजकुमारी शशिवृता आपके पराक्रम को सुनकर हर्षातिरेक में रोमांचित हो उठती।

शशिवृता उत्सुक होकर चन्द्रिका को एकान्त में बुलाती और बारम्बार आपके गुणों को पूछती। उनका श्रवण उसे उन्मत्त बना देता था। पराक्रम के जो-जो कार्य आपने किये हैं समर्थ खत्राणी चन्द्रिका शशिवृता के समक्ष वर्णन करती। इस प्रकार चन्द्रिका से आपके गुणों की चर्चा बारम्बार सुनकर शशिवृता के हृदय में आपके प्रति श्रोतानुराग जागृत हो गया और उसने आपको वरन करने का व्रत ले लिया। अब मैं उस सुन्दर कथा को आपको सुनाता हूँ कि शशिवृता ने शिव की आराधना करके किस प्रकार आपको पति रूप में प्राप्त करने का वरदान पाया।

विशेष—१. गुण श्रवण द्वारा अनुराग की उत्पत्ति का वर्णन यहां कवि-परम्परा के अनुसार है।

२. 'उभरे रोम तन' में रोमांच सात्विक अनुभाव है।

## दूहा

यों बरष्ष दुअ वित्ति गय। भइय वैस वर ऊंच॥
तव कामन सु कलेव सुर। करै सेव सुचि संच॥३८॥
हर सेव नित प्रति करै। मन बाचा क्रम बंध॥
वर चहुआंन सुकामना। सेवा ईस सुगन्ध॥३९॥
वचन सिवा सिव वाच दिय। पति पावै चहुआंन॥
वर प्रमुदिय प्रमथाधिपति। हुअ सुपनंतर मान॥४०॥
कै जानै मन अप्पनो। कै पिक्खिन कै ईस॥
और शिव सुनि ईस प्रति। क्रिय अस्तुति वर दीस॥४१॥

शब्दार्थ—बरष्ष दूअ वित्तिगय—दो वर्ष व्यतीत हो गये। भई वैस वर ऊंच—आयु बढ़ने लगी। कामन—कामिनी। कलेव सुर—केलवेश्वर भगवान शंकर। सुचि—पवित्र। संच—सच्ची। हर—महादेव। मन वाचा क्रम—मन, वचन और कर्म से बंधी हुई—। सुगन्ध—सुगन्धित पदार्थ। सिवा—पार्वती। वाच दिय—कह दिया। प्रमुदिय—प्रसन्न हुए हैं। प्रमथाधिपति—कामदेव विजेता भगवान शंकर। हुअ सुपनंतर—स्वप्न में आभास हुआ। मान—मेरी बात मान ले। अप्पनो—अपना। पिक्खिन—खत्राणी चन्द्रिका। ईस—भगवान शिव। ईस प्रति शिवजी से। वर दीन—वरदान दिया।

सन्दर्भ इन दोनों में हंस-दूत पृथ्वीराज के समक्ष शशिवृता की उनको वर रूप में पाने के लिए शिव की साधना और शिव के द्वारा वरदान देने के प्रसंग का वर्णन कर रहा है :

व्याख्या—हे राजन्! इस प्रकार दो वर्ष व्यतीत हो गये और राजकुमारी शशिवृता आयु में बढ़ने लगी। उसने बड़ी होकर कामिनी बन जाने पर केलवेश्वर भगवान शंकर की पवित्र और सच्चे मन से आराधना प्रारम्भ की।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



हे राजन् ! शशिवृता पृथ्वीराज चौहान को वर रूप में पाने की कामना लिये हुए मन वचन और कर्म से बंधी हुई नित्य प्रति भगवान शंकर की सेवा किया करती है। शिव की आराधना में वह प्रायः सुगन्धित पदार्थ ही चढ़ाया करती है।

अपनी चलती हुई साधना के बीच में शशिवृता स्वप्न में देखती है कि भगवान शंकर के कहे हुए वचनों को पार्वती उससे कह रही है और उसे बता रही है कि कामदेव को जीतने वाले भगवान शंकर तुझ पर प्रसन्न हो गये हैं। तु चौहानवंशी पृथ्वीराज को वर रूप में प्राप्त करेगी। अब तू मेरी बात मान ले और साधना करके शरीर को अधिक कष्ट न दे। तेरी अभिलाषा पूर्ण हो चुकी है इस बात को या तो कुमारी शशिवृता का मन ही जानता था या खत्राणी चन्द्रिका जानती थी या भगवान शंकर जानते थे अथवा फिर वह पार्वती ही जानती थीं, जिन्होंने पृथ्वीराज को शशिवृता के लिये पति रूप में प्राप्त करने की स्तुति पर प्रसन्न होकर शशिवृता को यह वरदान दिलाया। इन व्यक्तियों के अतिरिक्त और कोई भी इस बात को नहीं जानता।

विशेष—तीसरी पंक्ति में प्रायः टीकाकारों 'नित' के स्थान पर 'निस' पाठ दिया है, जो अशुद्ध है।

## कवित्त

हुअ प्रसन्न सिव सिवा। बोलि हूँ पठए तुझ्झ प्रति ॥
इह बरनी तुम जोग। चन्द जोसना वान वृत ॥
ज्यों रुक्मिनि हरि देव। प्रीति अति बढै प्रेम भर ॥
हंस गुन हम सरूप। नाम दुजराज भनिय चर ॥
बुल्लिय सुपिता कमधज्ज-नर। व्याहन पठ्यो सु गुर दुज ॥
आवै सु भ्रात जंचन्द सुत। कमध पुंज व्याहन सुकज ॥४२॥

शब्दार्थ - सिव-सिवा—शंकर-पार्वती। हूँ—मुझे। बोलि—बुलाकर। तुझ्झ प्रति—तुम्हारी ओर। इह—यह। वरनी—वरण करने योग्य। चन्द्र जोसना—चन्द्र ज्योत्सना, चन्द्रमा की ज्योति के समान। बान व्रत—व्रत ग्रहण करने वाली। हरिदेव—भगवान श्रीकृष्ण। प्रेम भर—भरपूर प्रेम करने पर। हंस सरूप - हंस रूप में गन्धर्व। चर—दूत। दुजराज—हंस। भनिय—कहना है। गुर दुज— पुरोहित। सुपिता—उस शशिवृता के पिता। कमध्ज्ज (उज्जैन) का राजा वीरचन्द्र। व्याहन सुकज—विवाह करने के लिये।

सन्दर्भ—हंस-दूत पृथ्वीराज के हृदय में अनुराग जागृत कर शशिवृता से व्याह करने को प्रेरित करता है। साथ ही यह भी बता देता कि शशिवृता के पिता के कमधज्ज वीरचन्द्र को उसने विवाह के लिये बुलाया है :

व्याख्या—हे राजन् शशिवृता की साधना से भगवान शंकर और पार्वती उस पर प्रसन्न हो गई और उन्होंने उसे यह वरदान भी दे दिया है कि पृथ्वीराज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



उसे पतिरूप में प्राप्त होगा । शिव-पार्वती का वरदान प्राप्त हो जाने पर राज-कुमारी शशिवृता ने मुझे सन्देश के साथ आपके पास भेजा है। वह चन्द्रमा की चाँदनी के समान सौन्दर्य से प्रकाशित है। वह कुमारी आपके वरण करने योग्य है। उसने आपसे विवाह करने का ही व्रत ले रखा है। जिस प्रकार रुक्मिणी और भगवान श्रीकृष्ण में अपार प्रेम था, उसी प्रकार का अतुल प्रेम तुम दोनों में भी परस्पर भरपूर प्रेम करने से बढ़ेगा । शशिवृता के ये समस्त गुण पक्षिराज के रूप में स्थित उस गन्धर्व दूत ने पृथ्वीराज के समक्ष वर्णन किये ।

हंस दूत आगे कहता है कि कुमारी शशिवृता के पिता ने अपने पुरोहित को भेजकर कमध्ज वीरचन्द को विवाह करने के लिये बुलाया है। उस पुंज कुमारी शशिवृता से विवाह करने के लिये जयचन्द का भाई कमधज वीरचन्द जायेगा।

विशेष—१. 'चन्द्र जोसना' में उपमा ।

२. हंस-दूत की वाक् चातुरी द्रष्टव्य है। पहले वह शशिवृता की रूप-माधुरी का वर्णन कर पृथ्वीराज के हृदय में अनुराग जागृत कर देता है। शशिवृता के संकल्प एवं शिव जी के वरदान की बात कहकर अनुराग को प्रगाढ़ता प्रदान करता है। पृथ्वीराज में शशिवृता के प्रति अनुराग की पूर्ण स्थिति देखकर वह विवाह करने के लिये प्रेरित करता है साथ ही वीरचन्द के विवाहने को आने की बात कहकर पृथ्वीराज को उत्तेजित कर देता है और अपने दौत्य-कर्म में सफलता प्राप्त करता है।

## दूहा

हुँ प्रसन्न बहु पंगुरं । दियौ हुकुम गुभ बंध ॥
प्रेरि सथ्य जब अप्प पर । अति पर घर सुअ नंध ॥४३॥
सज्जि सेन चतुरग नर । देवग्गिरि कज व्याह ॥
अति अगनित सथ द्रव्य लिय । नर उच्छव करनाह ॥४४॥

शब्दार्थ—बहु—अत्यधिक । पंगुरं—पंगुनरेश जयचन्द । गुअ-सुअ—उसको । बंध—भाई । प्रेरि—बुला लो । सथ्य—साथी । अप्प-पर—अपने पराये । पर घर—दूसरे का घर, कन्या के पिता का घर । सुअ—उसे । नंध—सोच—विचार कर । कज—लिये, कार्य । करनाह—करने या मनाने के लिये ।

सन्दर्भ—यहां हंस-दूत जयचन्द की प्रेरणा से विशाल सेना के साथ वीर-चन्द के प्रयाण का वर्णन कर रहा है :

व्याख्या—हे राजन ! शशिवृता के पिता द्वारा पुरोहित से शशिवृता के विवाह के प्रस्ताव को सुनकर पंगुराज जयचन्द बहुत प्रसन्न हुआ और उसने अपने भाई वीरचन्द्र को आदेश दे दिया कि कन्या के पिता की स्थिति को भली प्रकार सोच-विचार कर अपने-पराये व्यक्तियों को आमन्त्रित कर लो ।

वीरचन्द्र चतुरंगिणी सेना को सजाकर देवगिरि में शशिवृता से विवाह रचाने के लिये चल पड़ा । उसने उत्सव मनाने के अपने साथ अपार धन ले लिया ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## दूहा

कह सभारि बर हंस गुनि । कह जद्दों संकेत ॥
कौन थान हम मिलन है । कहत बीच संमेत ॥४५॥

**शब्दार्थ**—सम्भरि—शाकंभरी-नरेश पृथ्वीराज । सुनि—विचार कर । कह—बतलाओ । जद्दों—यादव राजकुमारी शशिवृता । संकेत—सकेत स्थल, मिलन स्थान । कौन—किस । थान—स्थान । संमेत—मध्यस्थ ।

**सन्दर्भ**—शशिवृता के विवाहने के लिदे वीरचन्द के चल देने की बात हंस दूत से सुनकर पृथ्वीराज उत्तेजित हो जाते हैं और वे हंस-दूत से शशिवृता का मिलन-स्थान पूछते हैं :

**व्याख्या**—शाकंभरी-नरेश पृथ्वीराज चौहान विचार करके हंस से कहते हैं कि हमें यादवकुमारी शशिवृता का स्थल बताओ । वह हमें कहां मिलेगी । साथ ही यह भी बताओ कि हमारे और उसके बीच में मध्यस्थ कौन होगा ? परस्पर परिचय के लिये मध्यस्थ चाहिए ही ।

## गाथा

कह यह दुज संकेतं । हो राज्यंद धीर ढिल्लेसं ॥
तेरसि उज्चल माघे । ब्याहन बरनीय थान हरिसिद्धि ॥४६॥

**शब्दार्थ**—राज्यद—राजाओं में श्रेष्ठ । ढिल्लेसं—दिल्लीश्वर । तेरसि उज्जव माघे शुक्लपक्ष की त्रयोदशी । बरनीय—कहा है ।

**सन्दर्भ**—हंस-दूत पृथ्वीराज को शशिवृता से मिलने का सकेत-स्थल और तिथि बतलाता हुआ कहता है :

**व्याख्या**—हे राजाओं में श्रेष्ठ धैर्यशाली दिल्लीश्वर ! उस शशिवृता ने माघ मास के शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी के दिन हरसिद्धि नायक स्थान पर आपके साथ विवाह करने को आने के लिये कहा है । (अतः ठीक इसी दिन आपको संकेत स्थल पर पहुंचना चाहिए ।)

**छन्द-गाथा**—यह मात्रिक छन्द है । इस छन्द की योजना इस प्रकार है :

४+४+४+। ४+४+ISI (या III)४+४++S
४+४+४। ४++४। +४+S

प्राकृत-काल को यह सर्वप्रिय छन्द है । इस काल से इस छन्द का प्रयोग इतना अधिक हुआ कि 'गाथा' नाम से ही प्राकृत रचना समझो जाने लगी । अपभ्रंश-काल में दोहे की प्रतिष्ठा के कारण 'गाथा' की प्रतिष्ठा कम अवश्य हुई किन्तु इसका प्रयोग रुका नहीं । 'रासो' में इस छन्द का बहुत अधिक प्रयोग हुआ है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## दूहा

तब राजन फिरि उच्चरैं। हो देवस दुजराज ॥
जो संकेत सु हम कहिय। सो अष्पो त्रिय काज ॥४७॥

शब्दार्थ—उच्चरैं—कहता है। देवस दुजराज—देवास निवासी पक्षिराज। संकेत—मिलन-स्थान। अष्पो—कहो। त्रिय काज—स्त्री अर्थात् कुमारी शशिवृता से।

सन्दर्भ—पृथ्वीराज हंस-दूत से कहते हैं कि जो संकेत-स्थल उसने बतलाया है उसे जाकर कुमारी शशिवृता को भी बतला दे :

व्याख्या—हंस-दूत से हरसिद्धि नामक स्थान पर राजकुमारी शशिवृता से मिलन-स्थान जान लेने पर पृथ्वीराज कहता है कि हे देवास-निवासी पक्षिराज! तुमने जो मिलन-स्थल मुझे बतलाया है, उसे कुमारी शशिवृता को भी जाकर बतला दो।

विशेष—पृथ्वीराज में शशिवृता से मिलने की लगन है। उसे शंका है कि वह तो संकेत-स्थान पर पहुँच जाय और शशिवृता न आये। इसीलिये वह हंस-दूत को सावधान करता है।

## अरिल्ल

सो अष्षिय हम नेम सु द्दढ्ढं। तुम अवस्स आवो गढ्ढं ॥
सेत माघ त्रयोदसि सावहि। हर सुकलेव थान सुति भावहि ॥४८॥

शब्दार्थ—सो—ऐसा ही। अष्षिय—बतला देंगे। सुनेम—तुमसे विवाह करने का नियम धारण करने वाली से। सुद्दढ्ढं—भली प्रकार से। अवस्स—अवश्य। प्रभु गढ्ढं—देवालय। वहि—वह राजकुमारी। हर—महादेव। सुकलेव—केलवेश्वर। थान—स्थान। सुतिभावहि—पवित्र भाव से, सत्य भाव से।

सन्दर्भ—हंस-दूत पृथ्वीराज को विश्वास दिलाता है कि कुमारी शशिवृता निश्चित तिथि पर निश्चित संकेत स्थल पर अवश्य आयेगी :

व्याख्या—हे राजन! तुमने जो कुछ कहा, उसे हम उस नियम धारिणी राजकुमारी शशिवृता को भली प्रकार बतला देंगे। आपको दी हुई तिथि पर हरसिद्धि के देवालय में अवश्य पहुँच जाना चाहिए। वह राजकुमारी शशिवृता माघ शुक्ल त्रयोदशी को सत्य भाव से केलवेश्वर भगवान शंकर की पूजा हेतु वहाँ अवश्य आयेगी।

विशेष—१. शशिवृता और पृथ्वीराज में तुल्यानुराग की स्थिति लाने में हंस-दूत को सफलता मिलती है। मिलन-स्थल निश्चित हो जाता है। पृथ्वीराज निश्चित तिथि पर संकेत-स्थल पर पहुँचने को उद्यत हो जाते हैं। कथा का आरम्भिक भाग यहीं समाप्त हो जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२. छन्द-अरिल्ल—इसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ होती हैं। चरणांत मे दो लघु (।।) होते हैं। कहीं-कहीं मगण भी प्रयुक्त होता है।

## दूहा

इह कहि हंस सु उड़ि गयौ। लग्यौ राज श्रोतान ॥
छिन न हंस धीरज धरत। सुख जीवन दुख प्रान ॥४९॥
दस सहस्र हैवर चढ़िय। नृप दिल्ली चहुआंन ॥
हुकम सद्दि साहन कियौ। दै सूरन विलहान ॥५०॥

शब्दार्थ—इह कह—ऐसा कहकर। श्रोतान—श्रोतानुराग। हंस—आत्मा। हैवर—घोड़े। सद्दि बुलाकर। साहन—अश्वशाला के अधिकारी। सूरन—वीर योद्धाओं को। विलहान—विशिष्ट घोड़े जो प्रमुख वीरों को दिये जाते हैं।

सन्दर्भ—इन दोहों में हंस-दूत के पृथ्वीराज के पास से शशिवृता के पास को उड़ चलने, पृथ्वीराज की आकुलता और प्रयास-हेतु सेना सजाने का उल्लेख है:

व्याख्या—इस प्रकार शशिवृता की सारी कथा कहकर और संकेत-स्थल बतलाकर हंस-दूत उड़कर शशिवृता के पास चला गया। इधर पृथ्वीराज श्रवणानुराग के बाण से घायल हो चुके थे। उनकी आत्मा को एक क्षण के लिये भी शान्ति नहीं मिलती थी। वह शशिवृता के साथ दाम्पत्य-जीवन की कल्पना में सुखी हैं। परन्तु शशिवृता के आसन्न अभाव से उसके प्राण दुखी हो रहे हैं। इस प्रकार इस समय सुख-दुःख की सम अवस्था में हैं।

चौहानवंशी दिल्लीश्वर के दस सहस्र अश्वारोही घोड़ों पर चढ़ने लगे। राजा ने अश्वशाला के प्रमुख अधिकारियों को बुलाकर आज्ञा दी कि वे वीर योद्धाओं को चढ़ने के लिये विलहने घोड़े दें।

विशेष—१. अलंकार 'हंस', 'हंस' में यमक अलंकार [१. हंस पक्षी, २. आत्मा]

२. काव-साम्य—सुख-दुःख की सम अवस्था का निम्न उदाहरण द्रष्टव्य है।

"पिय बिछुरन को दुसह दुख, हर्ष जात प्यौसार।
दुरजोधन लौं देखियत, तजत प्रान इह बाल॥" —बिहारी

## छन्द भुजंगी

दियौ कन्ह चहुआंन मानिक्क बाजी। जिनै देषतैं चित्त की गीत लाजी ॥
मुषं मझ्झ पायं कढ़ै बाज राजं। मनो वग्ग भीषं कृतं कढ्ढिवाजं ॥५१॥
दियौ बाजि इंदं बरं जाम देत्रं। दिपै तेज ऐसैं चिरं पंष एवं ॥
धरं पाइ ऐसे इलं मझ्झि जैसे। सुनै जैन धर्मं धरं पाइ तैसे ॥५२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



चढ़्यौ राव कैमास चित्तं तुरंगी। रहै तेज पासं उछद्दंत अंगी ॥
चमक्कतं नागं विसालं खुरंगी। मनो बीज छिक्की कि आभा अनंगी ॥५३॥
उड़ै झार झारं पयं नाल झारी। समं बूंद धावै मनौं चार तारी ॥
चढ़े राजहंस सूचामण्ड जोटं। मनो तेज बंधी मुनी बाइ मोटं ॥५४॥
डुग्गै कंन नांही सिलीका सुग्रीवं। मनौं जोति बंधी सुनिवीत दीवं ॥
चढ़्यौ राज पीची प्रसंगं पहूपा। उड़ै बाग ज्यौं वाय वग्गै अनूपा ॥५५॥
बंधै चौरं नित चमक्कंत चाहं। हरद्वार छुट्टै की गंगा प्रवाहं ॥
चढ़्यौ राज पट्टं अजानंत वाहं। कही कव्विराजे उपम्माति चाहं ॥५६॥
दियै बीचतारी कोई नाहि पुज्जै। बलंतहि दिष्षै सरिता अमुज्झै ॥
दियौ मृग्गराजं चढ़्यौ देवराजी। उड़े पंखि पाजी रही पच्छ लाजी ॥५७॥
चढ़्यौ निड्डुरं राइ अंगं अभंगं। छुट्टै जाति तारान के व्योम मग्गं ॥
चढ़्यौ हाहूलीराइ जंबू नरिंदं। बढ़्यौ बांन ज्यौं तेज कम्मान चदं ॥५८॥
चढ़्यौ लंगरी राव लंगा सुबीरं। किधौं वाय बढ़वो बुभं जानि धीरं ॥
चढ़्यौ राज गोइंद आहुट्ठ राजं। किधौं वाय बुंदं स छुट्टीय साजं ॥५९॥
चढ़्यौ राव लष्णांपु लष्षं पंवारं। भ्रमें अंग ऐसे उपम्मा विचारं ॥
किधों अग्गि दंडं भ्रजं बाल फेरैं। किधों भोर हत्थं किधों चक्र हेरैं ॥६०॥
किधों राति बोहित्थ भ्रंभि भोरनारं। कही चंद कव्वी उपंमाति चारं ॥
चढ़्यौ चंद पुंडीर राजीव नामं। तिनं ओपमा चंद देषी बिरामं ॥६१॥
जिनें गत्ति जीती सयन्नं पगारं। चली अषि के पंथ चितं बगारं ॥
चढ़्यौ अत्त ताई उतंगं तुरंगा। मनो बीज की गत्ति आभा अनंगा ॥६२॥
चढ़्यौ राव रामं रघुवंस वीरं। गति सूर जित्ती मृगं चंद भीरं ॥
चढ़्यौ दाहिमं देव नरसिंघ कैसे। मनौं चित्त की अर्थ की गत्ति जैसे ॥६३॥
चढ़्यौ भोज राजं पहारं त्रिनैतं। फुटै सद्द तेजं आवाजं त्रितेत ॥
चढ़्यौ वीर जोद्धं कनक्कं कुमारं। चली कृत्य पूरन्न आचार पारं ॥६४॥
चढ़्यौ राव पज्जून कूरंभ वीरं। बढ़ै लीह अग्गं धनं जैतपूरं ॥
चढ़्यौ सामन्नौ सूर सारंग ताजी। गही होड बंधी बयं वामपाजी ॥६५॥
चढ़्यौ अल्हनं वीर बंधव्व पानं। चढ़्यौ दान ज्यौं ग्रइंनं जुद्ध वानं ॥
चढ़्यौ लष्पलष्षी सलष्षं बघेला। वढ़्यौ नेत ज्यौ देइ देवै सु हेला ॥६६॥
चढ़ै सव्व सामंत छन्नवलत वीरं। मनों भान छुट्टी किरन्नो कि तीरं ॥
चढ़्यौ बाज राजं पृथ्वीराजं राज। तबै पष्षरयो बाज साकत्तिसाजं ॥६७॥
उडैं सूर ज्यो हंस तुटट कमंधं। वरं ओपमा चंद जपी कविंदं ॥
द्रुम ज्यौं मरोरै शिरं स्वामि हेतं। मयूर कन्नाबाज रची बंधि नेतं ॥६८॥
जगी जोगमाया सुजग्गीय थानं। केलीनं प्रलै ज्यौं प्रवीनं प्रमानं ॥६९॥
जगे वीर वीरधि डोंरु बजावैं। नचै नद्द नंदी त्रिवाह विधावै ॥छं०॥७०॥

शब्दार्थ—कन्ह—कान्ह नामक सामन्त को। माणिक बाजी—माणिक का घोड़ा। देषतें—देखते ही। गति—गति। लाजी—लज्जित हो जाती थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



मुषं—मुख के। मज्झ—अन्दर। पायं—फेन, झाग। वाज राजं—श्रेष्ठ घोड़ा। वग्ग—लगाम। पाजं—पूजनोपहार। वाजि इंदं—श्रेष्ठ घोड़ा। जाम देवं—जामदेव एक सामन्त का नाम है। दियँ—प्रकाशित था। पंष—पक्ष, पंख। इलं—पृथ्वी। मझ्झि—बीच में। जैन ध्रंमं—जैन धर्म। घरँ पाइ—१. पैर रखता था। २. बड़े धैर्य से। कैमास—पृथ्वीराज चौहान का प्रधान मन्त्री। चित्तं तुरंगी—चित्रित (चितकबरे) घोड़े पर। अंगी अवयवों को। खुरंगी—घोड़ा। अनंगी—कामदेव की। बीज छिटछी—बिजली की चमक। [५१-५२] झार झारं—अग्नि की चिनगारियों की राशि। पयं—पैर। झाड़ी—झटकने पर। सग्गं—साथ। बूंद—समूह। चार तारी—चार पुच्छल तारों का समूह। छावँ—टूट रहा हो। सुचांमड—वीर चामुण्डराय। जोटं—जोड़ा, दो भाई। सुचांमड जोटे—चामुण्डराय और उसका भाई। मुनी—ऋषि। बाइ—प्राण-वायु। मोटं—गठरी। "मानो तेज... मोटं"—मानो किसी तेजस्वी मुनि ने प्राणायाम की साधना का वायु का गट्ठर बांध दिया हो। [५४] बैन—कान। सिलीवा सुग्रीव—ग्रीवा शिलावत हो रही थी। सुनिटि—वायु-रहित। दीप—दीपक। षीची—खींची। प्रसंग पहुपा—पुष्पों के सम्पर्क से। बास—सुगन्धि। वायु वग्गै—पवन के साथ। [५५] चीर—भँवर चिव चमक्कत चाहं—मानों चित्र की चाहना हो। 'हरद्वार...प्रवाह'—मानो हरिद्वार में गंगा की निर्मल धारा वेग से प्रभावित हो रही हो। राज पट्ट—राजा का प्रमुख सरदार। अजानंत बाहं—आजानु भुजाओं वाला। उपम्मति—तुलना करना, उपमा देना। [५६] बीचतारी—विश्व में कोई वीर नहीं। पुज्जैं—समानता करे। बलंतहि—उसका बल। दिष्षै—दिखाई देता है। सरिता—नदी। समुज्झै—समुन्द्र की ओर। मृग्गवाजं—घोड़े का नाम है। देवराज—देवराज। [५७] अभंग—भंगिमापूर्ण। तारा—तारे। छुट्टैं जानि तारान—आकाश से टूटते हुए तारे। व्योम मग्ग—आकाश मार्ग। जंबू नरिंद—जम्बू प्रदेश का राजा। बढ्यौ बान—बाण बड़ी तीव्रता से छूट रहा हो। कम्मान चन्द्र—चन्द्र के समान आकार वाले धनुष से। ५८ लंगा—लंका। बुअं जानि—प्रभंजन। राज गोइंद—गोविन्दराम। आहुट्ठ राजं—आहुड़ का राजा। बाय बुदं—वायु का ववण्डर। साजं—साज बाज। [५९] राव लष्णपु—लक्ष्मण राय। लष्षं—लाखों में एक मात्र वीर। पँवार परमारवंशी। भ्रमें—घुमा रहा था। व्रजबाल—व्रज की गोपियां। हेरैं—दिखाई देता है। भोर हथ्यं हाथ में पकड़कर रोक लेती हैं। [६०] राति—रक्त वर्ण का। बोहिथ्य—जहाज। भोर नारं—जल में चक्कर काटता हुआ घूम रहा हो। उपंमाति चारं—बहुत सुन्दर उपमायें। चारं—सुन्दर। राजीव—राजीव नाम का घोडा। तितं ओपमा—उसकी उपमा। विरामं—रुकी हुई, न पायी गई। सयन्न पगारं—नदी की भांति उमड़ती हुई सेना। अंखि के पंथ—आंख का पलक मारते। चितं बधाई—चित्त को विस्मित करती हुई। अत्तताई—आततायी, अतिराय। उतंगं—ऊँचे। बीज—विद्युत। आभा अनंग—कान्ति कामदेव के समान थी। [६१-६२] राव राम—रामराजा। भीरं—अनेकों। मनो चित्त की अथं गत्ति। जैसें—जिसने मन की गति पर भी विजय प्राप्त कर रखी थी। पहारं त्रिनेत्रं—तीननेत्र धारी भगवान शंकर के कैलाश पर्वत के समान ऊंचा घोड़ा। फुट्टे सद्द तेजं—शब्दों में तेज फूट-फूटकर। त्रिवेतं—तीन गुनी। चली हक्कत्य पुरन्ना आचार पारं—इसके वीरतापूर्ण कार्यों का आर-पार पाना ही कठिन है। अग्गं—आगे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



धनं—वीर धनी। सारंग ताजी—सारंग नाम का घोड़ा। वयंबाम पाजी=तीव्र गति से उड़ने वाला युवा वाज। बंधब्ज—सज्जित होकर। दात—दानी कर्ण। ग्रहनजुद्ध-बानं—मानो युद्ध करने के लिये धनुष वाण धारण करके। लष्ष लष्षी—लाखों में एक वीर। संलाषं—एक लाख सैनिकों-सहित। नेत—चादर, द्रौपदी का चीर। सुहेला =सेना। [६३ ६६] छलबलत—छल-बल से मुक्त। किरन्नी कतीरं—तीर के समान किरणें। वाज राजं—सर्वश्रेष्ठ घोड़े पर। पष्षरयो—युद्ध के समय हाथी घोड़ों को पहनायी जाने वाली लोहे की झूल। सकत्तिसाजं—शक्ति का भण्डार। हंस टूटै कमधे—मानों हंसों का समूह टूट रहा है। जंगी—कहीं। कविदं—कवि-श्रेष्ठ। द्रुम—वृक्ष। रची बंधि नेतं—मानों कलावाज मयूर ने अपने पंखों की चादर फैला रखी हो [६७ ६८] जोगमाया—काली। सुजग्गीय थानं=युद्ध स्थल। वीराधि=श्रेष्ठ वीर। डोरू=डमरू। नद्द—नाद करता हुआ। त्रिधाइ त्रिधावै—आनन्दित हो-होकर।

सन्दर्भ—इन दोहों से चन्द ने पृथ्वीराज व प्रमुख सामन्तों का श्रेष्ठ घोड़ों पर चढ़कर और पृथ्वीराज का सर्वश्रेष्ठ घोड़े पर चढ़कर प्रयाण करने का वर्णन किया है :

व्याख्या—पृथ्वीराज चौहान ने देवगिरि को प्रयाण करने की तैयारी कर दी। प्रमुख सामन्तों को सजे हुए विशिष्ट घोड़े दिये गये। चौहानवंशी कान्ह नाम के सामन्त को माणिक्य नाम का घोड़ा दिया गया। उस घोड़े की गति को देखकर चित्त की भी गति लज्जित होती थी। अर्थात् वह मन की गति से भी तेज चलने वाला था। उस घोड़े की लगाम बल-पूर्वक खींचने से उसके मुख से निकलते हुए झाग ऐसे लगते थे, मानों वे पूजनोपहार के पुष्प हों। श्रेष्ठ वीर सामन्त जामदेव को बाजिन्द्र नाम को अश्व दिया गया। वह अपने तेज के कारण ऐसा चमक रहा था, मानों उसके पंख ही लगा दिये गये हों। वह पृथ्वी के ऊपर इतनी सावधानी से पैर रखता था मानों कोई व्यक्ति बड़ी सावधानी से जैन धर्म का श्रवण कर रहा और उसे अपने हृदय में धारण कर रहा हो। [५१-५२] कैमास नाम का प्रधाना-मान्य इस प्रकार के चित्रित घोड़े पर सवार हुआ, जिसमे अत्यधिक मात्रा में तेज था इसलिए वह अपने शरीर के अवयवों को प्रतिक्षण उछाल रहा। उस विशालकाय घोड़े के खुरों के नाल ऐसे रहे थे, मानों बिजली चमक रही हो अथवा कामदेव की कान्ति झलक रही हो। वह अश्व जब अपने नाल लगे खुरों को पृथ्वी पर पट-कता था, तब उससे अग्नि की चिनगारियों का समूह निकलता था। उसके चारों पैरों की गति इतनी तीव्र थी, मानों चार पुच्छल तारों का समूह तीव्रता से टूट रहा हो।

चामुण्ड राय और उसका भाई राजहंस नाम के घोड़े पर सवार हुए। उस अश्व को देखकर ऐसा लगता था, मानों किसी तेजस्वी ने प्राणायाम की साधना कर वायु का गट्ठर बाध दिया हो। वह अश्व इतना अधिक चौकन्ना था कि प्रत्येक समय कानों को खड़ा किये रहता था। उसकी ग्रीवा झिलमिल हो रही थी। उसकी ग्रीवा को देखकर ऐसा लगता था, मानों निर्वात दीपक की ज्योति हो, जो एक दम सीधी खड़ी हो और इधर-उधर न हिलती हो। ऐसे घोड़े पर चढ़कर चामुंडराय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



ने उसकी बाग खींची। पुष्पों के सम्पर्क से वायु में सुगन्ध फैल रही थी। इससे यह विदित होता था कि वे वीर केवल युद्ध करने वाले हृदय-हीन योधा ही न थे अपितु सहृदय भी थे। जो विश्व की सुन्दर वस्तुओं के प्रति अपने हृदय में कोमल भावनायें भी रखते थे।

उस घोड़े के मस्तक पर चँवर बंधा हुआ था, जो इस प्रकार चमक रहा था, मानो चित्त की चाहना हो अथवा वह इस प्रकार दिखाई दे रहा था, जैसे मानो हरिद्वार में गंगा की निर्मल धारा वेग से प्रवाहित हो रही हो। इस प्रकार वह जानु तक लम्बी भुजाओं वाला चामुण्डराय निकलकर बाहर आया। कविराज चन्द बड़ी उमंग के साथ उसकी तुलना कर रहे हैं। विश्व में ऐसा कोई भी वीर नहीं है जो उसकी बराबरी कर सके। [५३-५६]

उसका बल उस सरिता के समान है, जो सरिता के सागर में मिलने पर होता है। नदी के समुद्र के समीप आने पर उसका वेग बहुत अधिक बढ़ जाता है और वह बड़े वेग से प्रवाहित होती हुई समुद्र में जा गिरती है। चामुण्डराय का वेग भी ऐसी ही नदी के समान है। देवराय नाम के सामन्त को मृगराजा नाम का घोड़ा दिया गया, वह उस घोड़े पर सवार हुआ। वह इतना वेगवान है, मानो पंख लगाये हुए उड़ता हो।

निड्डुराय बड़ी भंगिमापूर्वक अपने अवयवों को हिलाता हुआ घोड़े पर सवार हुआ। उसकी गति इतनी तीव्र थी मानों टूटे हुए तारे आकाश-मार्ग से टूट गिर रहे हों। जम्बू-प्रदेश का राजा हाहुलीराय अपने अश्व पर इस प्रकार चढ़ा मानों चन्द्रमा के समान आकार वाले धनुष से वाण बड़ी तीव्रता से छूट रहे हों।

लंका का श्रेष्ठ वीर लंगरीराय इतनी तीव्र गति से अपने घोड़े पर सवार हुआ मानों वायु का प्रभंजन आगे बढ़ रहा हो। आहुजराज गोविन्दराज इस प्रकार अपने घोड़े पर चढ़ा मानों वायु का बवण्डर अपने पूरे साज-बाज के साथ छूटा हो।

लाखों में एक ही वीर परमारवंशी लक्ष्मणराय अपने घोड़े पर चढ़ा। वह अपने शरीर को इस प्रकार घुमा रहा था, मानों व्रज की गोपियां अग्नि-दण्ड को अपने हाथ में लेकर घुमा रही हों। उस अग्नि-दण्ड को कभी वे हाथ में पकड़कर रोक लेती हैं और कभी उसे घुमाकर उसमें एक चक्राकृति पैदा कर देती हैं। जिस प्रकार अग्नि दण्ड को घुमाने पर एक चक्राकार आकृति बन जाती है और उसे हाथ में रोक लेने पर वह एक दण्डमात्र रह जाता है, इसी प्रकार की तीव्रता लक्ष्मणराय में घोड़े पर चढ़ने से आ गई [५७-६०]

अथवा मानों रक्त-वर्ण का जहाज जल में चक्कर काटता हुआ घूम रहा हो इस प्रकार चन्द कवि बड़ी-बड़ी सुन्दर उपमाओं का सृजन कर रहा है।

चन्द्रमा के समान कान्ति वाला पुण्डीराय राजीव नाम के घोड़े पर आरूढ़ हुआ। कवि चन्द कहते हैं कि उसकी उपमा कहीं नहीं मिली। पृथ्वीराज की इस सेना ने नदी की गति पर भी विजय पा ली थी। अर्थात् नदी से भी अधिक तीव्र प्रवाह के वेग से वह क्षण भर में चित्त को विस्मित करती हुई चल दी। [६१]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आततायी अतिराय उच्च घोड़े पर सवार हुआ। उसकी तीव्रता में बिजली के समान गति थी और उसकी कान्ति कामदेव के समान थी। रघुवंश वीर रामराय ऐसे घोड़े पर सवार हुआ, जिसने अनेकों सूर्य, चन्द्रमा तथा मृगों की गति पर भी विजय पा ली। नरसिंह वाहिमदेव ऐसे तीव्रगामी घोड़े पर सवार हुआ, जिसने मन की गति पर भी विजय प्राप्त कर रखी थी। लक्ष्मी जो चंचला कही जाती है, वह उसकी गति की समता नहीं कर सकती थी। [६२-६३]

सामन्त भोजराज त्रिनेत्र धारी भगवान शंकर के कैलाश पर्वत के समान विशाल अश्व पर चढ़ा। उसकी वाणी से ओज और तेज फूट-फूट कर निकल रहा था। उसकी आवाज सामान्य व्यक्ति की आवाज से तीन गुनी ऊँची थी। इसके पश्चात् वीर योद्धा कनककुमार अपने घोड़े पर सवार हुआ। उसके वीरतापूर्ण कार्यों का ओर-छोर पाना कठिन था। पज्जूनराय तथा कूरम्भवीर अपने-अपने घोड़े पर चढ़कर लोह-दण्ड के समान आगे आकर आकर खड़े हो गये। इसके पश्चात् वीर धनी जैतकुमार अपने घोड़े पर सवार हुआ। श्यामल वीर ऐसे शीघ्रगामी घोड़े पर सवार हुआ, जिसने तीव्र गति से उड़ने वाले युवा बाजों से होड़ लगा रखी थी अर्थात् उसके घोड़े की गति बाज की गति से भी तीव्र थी।

वीर अल्हन सज्जित होकर इस प्रकार घोड़े पर सवार हुआ जैसे मानों युद्ध करने के लिये धनुष बाण धारण करके दानी कर्ण आगे बढ़ रहा हो। बघेलाराय जो लाखों में एक वीर था, वह अपने साथ में एक लाख सेना लेकर घोड़े पर सवार हुआ उसकी सेना द्रोपदी के चीर के समान आगे बढ़ने लगी। उसकी सेना का ओर-छोर पाना कठिन था। उस बघेलाराय के शरीर को देखकर भय होता था। [६४-६६]

छल-बल से युक्त समस्त वीर सामन्त और योद्धा अश्वों पर चढ़कर आगे बढ़े। उनको देखकर ऐसा लगता था, मानों सूर्य तीर के समान अपनी प्रखर किरणों को छोड़ रहा हो। अर्थात् उन वीरों से सूर्य की किरणों के समान प्रखर तेज का प्रसार हो रहा था। समस्त सामन्तों के घोड़ों पर सवार हो जाने के पश्चात् पृथ्वीराज चौहान अपने अति श्रेष्ठ घोड़े पर सवार हुए। शक्ति के भण्डार उस घोड़े पर पाखर डाली गयी। पृथ्वीराज जिस घोड़े पर सवार थे, उसकी गति सूर्य के समान थी। उसके वेग को देखकर ऐसा लगता था, मानों हंसों का समूह छूट रहा हो, चन्द कवि उसके लिये सुन्दर-सुन्दर उपमायें दे रहा है।

पृथ्वीराज के साथ में चलने वाले सारे सामन्त और योद्धा अपने स्वामी के लिये उसी प्रकार शीश कटाने वाले हैं, जिस प्रकार हाथी साधारण से वृक्ष को तोड़-मरोड़ डालता है। उन सबों ने मिलकर ऐसा घनाकार व्यूह बना रखा है, मानों कलाबाज मयूर ने अपने पंखों की चादर फैला रखी हो।

युद्ध स्थल में काली जागृत हो गयी और बिना प्रलय के ही प्रलय दिखाई देने लगा। पृथ्वीराज ने इन श्रेष्ठ वीरों के सज जाने पर भगवान शंकर ताण्डव नृत्य कर अपना डमरू बजा रहे हैं, तथा नन्दी आनन्द मग्न होकर शब्द करते हुए नृत्य कर रहे हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



काव्य-सौन्दर्य—१. वीर रस—घोड़ों की सज्जा और योद्धाओं के उत्साह में युद्ध की तैयारी का यथार्थ चित्र सामने आ रहा है।

२. वीर-रस के अन्तर्गत घोड़ों और योद्धाओं का नाम परिगणन परम्परागत शैली में है :

३. अलंकार— १. 'जिनै देषतें···लाजी' में अतिशयोक्ति से पुष्ट प्रतीप।
२. 'मुर्ग मश्क—पाजं' में उत्प्रेक्षा।
३. 'दिपै तेज ऐसै···एहां' में उपमा।
४. 'धरै पाइ···तंसे' में दृष्टान्त।
५. 'पाइ-पाइ' में यमक।
६. 'चपक्कत···अनंगी' में उत्प्रेक्षा।
७. 'उड़ै झार···दीनं' में उत्प्रेक्षा।
८. 'चढ्यो राज···चाह'' में सन्देह से पुष्ट उपमा।
९. 'दिये बीचतारी···अमुजझैं' में रूपक।
१०. 'उड़ै पंखि···लाजी' ने रूपक।
११. 'चढ्यो···चंद' में उत्प्रेक्षा।
१२. 'चढ्यो लंगरो···घोर' में सन्देह।

इस प्रकार समस्त दोहों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा और अतिशयोक्ति अलंकारों की छटा देखने को मिलती है।

विशेष—यहाँ जिन सामन्तों के नाम का उल्लेख आया है, वे सभी ऐतिहासिक पात्र हैं।

## दूहा

आगम निगम जांनि कै। चलि वृप सुक्रंबार॥
माह वद्दि पंचमि दिवस। चढ़ि चलिये तुर तार॥७१॥

शब्दार्थ—आगम निगम—गमनागमन। जांनिकै—मुहूर्त दिखलाकर। माह वद्दि—माघ वदी। तुर—तुरंग, घोड़ा। तार—शीघ्रगामी।

सन्दर्भ—शुभ मुहूर्त शोधाकर पृथ्वीराज, सेना-सहित देवगिरि को प्रस्थान कर देते हैं :

व्याख्या—प्रस्थान का शुभ मुहूर्त दिखलाकर पृथ्वीराज चौहान माघ मास के कृष्णपक्ष की पंचमी शुक्रवार के दिन शीघ्रगामी अश्व पर सवार होकर सेना सहित दक्षिण दिशा में स्थित देवगिरि (देवास) को प्रयाण कर देते हैं।

विशेष मुहूर्त दिखाकर प्रस्थान करना हमारी सांस्कृतिक परम्परा को सूचित करता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



॥ छन्द त्रोटक ॥

कवि चंद सु ब्रंनन राज करं । सोइ त्रोटक छंद प्रमान धरं ॥
जिहि च्यार परे सगना सगनं । सुभ अच्छिर लाइ तजै अगनं ॥
विवहार धरैं बरनं सु बरं । पढ़ि पिंगल वाहन केन हरं ॥
वर चोजन चारु सुरंग इलं । तहां झौरन मौर सुरंग हुलं ।७३॥
गज उप्पर ढाल ढलक्कि तरं । सुकहौं तहाँ केलि अचिज्ज वरं ॥
तहां पल्लव लल्लित रत्त वचं । तहां जे घन दंतिय पंति रचं ॥७४॥
झमकैं बर नंग मयूष कसी । निवसी तह्वा केतक सी विकसी ॥
सु चलै बर मंद सुगंध प्रकार । बढी दिसी दस्स स उज्जल मार ॥७५॥
वजै वहु रंग सु गंधन भ्रंग । वजैं सहनाइ नफेरि उपंग ॥
हलैं वर लत्तपवन्न झकोर । घरघ्घर होहि पिलप्पित जोर ॥७६॥
बुलैं कल कंठ सु कंठह सद्द । तहां चढ़ कव्वि वसीठ उवद्द ॥
सकेस कुसंम रु अंकुम्र पानि । हने हर काम असो गज जानि ॥७७॥
अतसी बर पुफ्फसु बाढहिं भृंग । वजैं गज पांनि सु इंदुव रंग ॥
लता ललिताह हलावन ढाल । उहां जम लग्गय रूपतिताल ।।७८॥
विकसित केसर कुंकुम कांम । सरोज सुरंभ अनूपम नांम ॥
उहां मिटि ताम तरंगिनि कांम । उहां चलि ते निय ना तिहि ठाँम ॥७९॥
उहां वरहा जनु उत्परि केल । किने तब ढीठ हिया छबि मेल ॥
हले जनु नेजै षंजूर बसन्त । ढली बनराइ सुढालह मंत ॥८०॥
तबी बर बाल सुरंग सुभेस । चल्यौ प्रथिराज सु दष्षिन देस ॥
विरदैं बहु विप्र कहे कविचन्द । सही चहुआंन प्रथी पर इन्द ॥८१॥

शब्दार्थ— ब्रंनन—वर्णन । राज करं—राजा पृथ्वीराज चौहान । धरं—धरता हूँ, रखता हूँ । प्रमान—दृष्टान्त । च्यार—विचार । सगना सगनं—सगुन विचार कर शुभ मुहुर्त में । सुभ अच्छिर शुभ मुहुर्त । अगनं—आंगन, घर । वाहन केन हरं—भगवान शंकर का वाहन अर्थात् नन्दी—इसका लाक्षणिक अर्थ है नान्दी पाठ । पिंगल—छन्दशास्त्र । विवहार—व्यवहार । बरनं—वरण करने योग्य । बरं—पाता है । 'विवहार धरैं बरनं सु बरं'—आगे के व्यवहार में प्राप्त करने योग्य सुन्दर वस्तु मिल जाती है । चोजन—चमत्कार पूर्ण । चारु सुरंग—सुन्दर रंगों वाली । इलं—पृथ्वी । हुलं—प्रफुल्ल । झौरन मौर—आम्र मञ्जरी का समूह—लक्षणा से मंगल ही मंगल । झौर—झुण्ड । गज उप्पर—हाथियों के ऊपर । ढलक्कि तरं—नीचे की ओर लटक रही हैं । सुकहौं—वह वर्णन करता है । केलि—क्रीड़ा, सुन्दर । अचिज्ज—आश्चर्य पूर्ण । लल्लित—ललित, सुन्दर । रक्त वर्ण—रक्त वर्ण के । दंतिय पंति—हाथियों की पंक्तियाँ । रचं—खड़ी हुई थी । [७२-७४] झमकैं—चमक रहे थे । मयूष कसी—मयूराकार । केतक—केतकी के पुष्प । चलैं—चल रहा था । दिसि दस्स—दस दिशाएँ । मार—कामदेव । बहु रंग—मृदंग । सुगंधन—गन्ध युक्त । नफेरि—नफेरी । उपंग—एक प्रकार का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



वाद्य विशेष । हलैं—हिल रही थीं। वर लत्त—सुन्दर लताएँ। पवन्त—पवन। घरध्धर—घर-घर का शब्द। पिलपित—पीलवान। [७५-७६] बुनैं—बोलती है। सद्द—शब्द। वसीठ—हरकारा। उवद्द—बोलता था। सकेस कुसंम—सुगन्धित केश। हर=भगवान शंकर। काम—कामदेव। असो—ऐसे। अत्ती—अधिक। पुप्फ—पुष्प। ललिताह—हिलना। हलावन—हिलाना। उतह—अथवा। जाम—भरपूर। सुरंभ—सुगंध। वनराइ—वन-वृक्षों की पंक्ति। वर बाम—सुन्दर स्त्रियां सुभेस—सुन्दर वेश वाली। दष्पिण - दक्षिण। वरहा वाराहावतार धारी भगवान विष्णु। केल - क्रीड़ा। [७९-८०]

**सन्दर्भ**—यहां त्रोटक छन्द में चन्द पृथ्वीराज के सेना-सहित देवगिरि को प्रयाण का वर्णन बसन्त का रूपक बाँधकर कर रहे हैं :

**व्याख्या**—पृथ्वीराज शुभ मुहूर्त शोधकर सेना सहित देवगिरि (देवास) को प्रयाण करते हैं। चन्द कवि इस प्रसंग में त्रोटक छन्द में राजा पृथ्वीराज चौहान का वर्णन करते हैं। पृथ्वीराज ने शकुन विचरवाकर प्रयाण किया। जो व्यक्ति शकुनापशकुन विचार करके शुभ मुहूर्त में ही अपने घर से प्रयाण करता है, तथा जो मंगल की विधि के अनुसार नन्दी पाठ करके चलता है, उसे आगे के व्यवहार में प्राप्त करने योग्य सुन्दर वस्तु मिल जाती है। ऐसे व्यक्ति को पृथ्वी चमत्कारपूर्ण तथा उल्लासपूर्ण दिखाई पड़ती है। किसी प्रकार का विघ्न सामने नहीं आता, सर्वत्र मोर ही-मोर अर्थात् मंगल-ही-मंगल दिखाई पड़ता है। [७२-७३] सेना के हाथियों के ऊपर ढालें लटक रही हैं। उनका मैं सुन्दर और आश्चर्यपूर्ण वर्णन करता हूँ। वहां पर रक्त वर्ण के सुन्दर पत्ते दिखाई दे रहे हैं। वहां पर हाथियों की जो पंक्तियां खड़ी हुई हैं, वे ही राजा का धन हैं। योद्धागण जो वस्त्र धारण किये हुये हैं उनमें लगे हुये मयूराकार नग चमक रहे हैं, वे ऐसे लगते हैं, मानों केतकी के पुष्प खिल रहे हों। वहां शीतल, मन्द, सुगन्धित पवन चल रही है। वह दसों दिशाओं में काम-वासना को उद्दीप्त कर रही है! [७४-७५] सुगन्धि के कारण एकत्र हुये भ्रमरों का समूह मृदंग-सा बजा रहा है, तथा अनेक प्रकार के वाद्ययन्त्र शहनाई, नफेरी, उपंग आदि बज रहे हैं। वायु के झोंकों से लतायें हिल रही हैं। पीलवान जोश में आकर अपने हाथियों को हांक रहे हैं। गति से चलते हुये हाथी एक-दूसरे से रगड़ते हैं। 'घर-घर' का शब्द हो रहा है। कोकिल अपने मधुर कण्ठ से जिस प्रकार बसन्त ऋतु में बोलती है, उसी प्रकार पृथ्वीराज की सेना में कवि सुन्दर शब्दों में विरुदावली बोल रहे हैं।

पीलवानों के सुन्दर केश शोभा दे रहे हैं। उनके हाथ में हाथियों को नियन्त्रित करने का अंकुश है। जब से हाथियों को अंकुश से अपने वश में करते हैं, तब ऐसा लगता है, मानो भगवान शंकर कामदेव पर विजय प्राप्त कर रहे हों। पीलवानों के अत्यधिक सुगन्धित केशों की ओर झुंड के झुण्ड भ्रमर बढ़े आ रहे हैं। जिन हाथों में वे अंकुश लेकर हाथियों को नियन्त्रित करते हैं, वह रंग-बिरंगे पुष्पों से सज्जित होने के कारण चन्द्र वर्ग के समान प्रतीत होता है। वीरों की हिलती हुई ढालें ऐसी लगती हैं मानों लतायें हिल रही हों। [७६-७८] वहां केसर तथा कुंकुम अत्यधिक मात्रा में विकीर्ण हो रहा है। कमलों की अनुपम सुगन्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



फैला हुई है। वहाँ पर क्रोध की भावनायें मिट जाती हैं तथा तरंगिणी नदी के समान काम-वासनायें हृदय में जागृत हो रही हैं। उस स्थान पर प्रत्येक क्षण कटाक्ष होते रहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानों वारहवतार भगवान विष्णु क्रीड़ा कर रहे हों और उन्होंने अपनी दृष्टि को सौन्दर्य के देखने में लगा दिया हो।

सेना में वीर सैनिक अपने-नेत्रों को इस प्रकार घुमा रहे हैं, मानों बसन्त ऋतु में खजूर का वृक्ष झूम रहा हो। ढालों की जो पंक्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं, वे ऐसी लगती हैं मानों वन के वृक्षों की पंक्तियाँ हों। [७९-८०]

पृथ्वीराज चौहान सुन्दर वर्ण तथा सुन्दर वेश वाली कामनियों को छोड़कर दक्षिण दिशा की ओर देवगिरि (देवास) को चल पड़े। चन्द्र कवि कहते हैं कि ब्राह्मण चारों ओर उनके विरुद का बखान कर रहे हैं। वे वर्णन करते हैं कि चौहान-वंशी राजा पृथ्वीराज पृथ्वी पर चन्द्रमा के समान हैं। [८१]

काव्य-सौन्दर्य—१. अलंकार—साँग रूपक [सर्वत्र साँग रूपक निर्वाह नहीं हो पाया है।]

२. यत्र-तत्र उपमा और उत्प्रेक्षा का सौन्दर्य है।

२. प्रयाण के साथ मंगल शकुन सुधवाने में भारतीय संस्कृति का रूप सामने आ जाता है।

॥ दूहा ॥

चढ्ढि चलिय प्रथिराज वर। देवग्गिरिधर राज ॥<br>
तब सुकन्ह बरदाय वर। पुच्छिय विगत सुकाज ॥८२॥

शब्दार्थ—चढ्ढि चलिय—चढ़कर चलने लगा। सुकन्ह—काका कान्ह। पुच्छिय—पूछते हैं। बरदाय—चन्द वरदाई। विगत सुकाज—कार्य का विवरण।

सन्दर्भ—पृथ्वीराज के देवगिरि पर चढ़ाई करने की बात का उसके सामन्तों को पता नहीं लगता। काका कान्ह इस विषय में चन्दवरदायी में पूछते हैं :

व्याख्या—पृथ्वीराज अपनी सेना सजाकर देवगिरि की ओर प्रस्थान करते हैं, परन्तु सामन्तों को यह ज्ञात नहीं होता कि वे किस पर चढ़ाई करने जा रहे हैं, अतः पृथ्वीराज चौहान के देवगिरि (देवास) की ओर चलने पर सामन्त काका कान्ह चन्द बरदाई से पृथ्वीराज चौहान की चढाई के सम्बन्ध में पूछते हैं।

विशेष—पृथ्वीराज के कुशल सेनापतित्व का परिचय मिलता है। कुशल सेनापति अपने आक्रमण को प्रायः गुप्त ही रखता है। समय से पूर्व योजना प्रकाशित हो जाने पर शत्रु पक्ष सावधान हो जाता है।

कवित्त

एक लष्ष दस अग्ग। सेन सज्जै क्रमधज्जं ॥<br>
बीय सहज वारुन्न। सत्त हज्जार फवज्जं ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



अद्ध लष्ष पैदल्ल । अद्ध साइक्क बहंतं ।।
सजि समूह चतुरंग । दिसा दच्छिन परजंतं ।।

सुनि श्रवन कुअंरि शशिवृत लिय । सुनि अवाज बर बीर घन ।।
चहुआंन वृत्त लीनी अध्रम । प्रान हीन कढ्ढन सुमन ।।८३।।

शब्दार्थ—एक लष्ष दस अग्ग—एक लाख दस हजार । कमधज्जं—कमधज वीर चन्द । बीय सहस—दो हजार । बारुन्न—हाथी । सत्त हज्जार फवज्जं—सात हजार रथ । साइक्क बहते—बाणों को धारण करने वाले । परजंतं—ओर । घन—गम्भीर । चोहान वृत—चौहानवंशी पृथ्वीराज को पति रूप में प्राप्त करने का वृत । अध्रम—अधर्म । प्रान हीन कढ्ढन—प्राण निकालने के लिए, आत्म हत्या करने के लिए ।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि वर्णन करता है कि कमधज के सेना-सहित आने के समाचार से पृथ्वी राज से वरण होने का व्रत धारण करने वाली शशिवृता आत्म-हत्या करने की सोचती है :

व्याख्या—कमधज वीरचन्द एक लाख दस हजार सेना लेकर शशिवृता से व्याहने के लिये चल देता है । उसकी सेना में दो हजार हाथी, सात हजार रथ और आधा लाख धनुर्धारी सेना थी । बीरचन्द इस प्रकार चतुरंगिणी सेना सजाकर दक्षिण दिशा में स्थित देवगिरि (देवास) को चल दिया । वीरचन्द्र की सेना के डंकों के गम्भीर घोष को सुनकर शशिवृता ने यह जान लिया कि वीरचन्द्र उससे विवाह रचाने के लिए आ गया है, परन्तु उसने तो चौहानवंशी राजा पृथ्वीराज को वरण करने का वृत ले रखा था । अतः उसने अपने प्राण-प्रसून को अधर्म नीति से अर्थात् आत्महत्या के द्वारा नष्ट करने का विचार किया ।

विशेष—१. आत्म-हत्या करके प्राण त्यागने को हमारे यहाँ अधर्म कहा गया है ।

२. अलंकार—'प्राण' में 'सुमन' का आरोप होने से रूपक अलंकार ।

## दूहा

बाल प्रान कढ्ढत सुपुनि । सगुन एक मन मान ।।
बढि आवाज चहुआंन की । अली सुन्यौ अप कान ।।८४।।

यौं सु सुनिय नृप भांन नैं । पुत्रि प्रलय ब्रत कीन ।।
चर पिष्षिय चहुआंन पैं । जद्दव मोकल दीन ।।८५।।

शब्दार्थ—बाल प्रान कढ्ढत—बाला शशिवृता आत्म-हत्या करना ही चाहती थी । मन मान—मनवांछित । अली बाला शशिवृता । अप—अपने । बढ़ि आवाज—कोलाहल । प्रलय व्रत—प्राण त्यागने का संकल्प । चर पिष्षिय—दूत बुलाकर जद्दव—यादवराज भान । मोकल दीन—भेज दिया ।

सन्दर्भ—आत्म हत्या को उद्यत शशिवृता में पृथ्वीराज का आगमन सुनकर प्रसन्नता आ जाती है । शशिवृता के प्रेमवृत को देखकर राजा भान पृथ्वीराज के पास अपना दूत भेजते हैं :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



व्याख्या—पृथ्वीराज चौहान को पतिरूप में पाने का व्रत लिए शशिवृता वीरचन्द के आगमन के समाचार से अपने प्राणों को त्यागने के लिये उद्यत थी। इतने में ही उसे एक मनोवांछित मंगल शकुन होता है। वह अपने कानों से पृथ्वीराज चौहान की आगे बढ़ती हुई सेना की आवाज सुनती है।

राजा भान को यह पता चलता है कि शशिवृता ने पृथ्वीराज को वरण करने का व्रत लिया है और वर रूप में पृथ्वीराज को न पाने पर आत्म-हत्या कर लेगी। वह अपने दूत को बुलाकर शशिवृता का विवाह सन्देह पृथ्वीराज के पास भेजता है।

विशेष—१. राजा भान की पुत्री-वत्सलता का प्रकाशन हुआ।

२. आत्म-हत्या के लिए प्रस्तुत शशिवृता को पृथ्वीराज के भी आ पहुँचने की सूचना संवेदात्मक नाटकीय स्थिति आ जाती है।

### कवित्त

दुहूँ पास नृप नयर। राग दिष्षैं प्रति राजं॥
मनौं हथ्थ बर नयर। राग संमुह प्रति साजं॥
कोट कठिन मेखल सुं। कोटि द्रिग पलक उघारिय॥
राज किति संभरन। गोष श्रवनन संभारिय॥
किंकिन सुपाइ घुंघर सु गज। राज निसान सबद्द प्रति॥
चहुआंन राव आगम सुव्रत। कमल हीय वढ्ढिय सुरति॥८६॥

शब्दार्थ—दुहूँ पास नृप नयर—वीरचन्द और पृथ्वीराज दोनों राजा नगर के समीप आ गये। राग दिष्षैं—ध्यानपूर्वक देख रहा है। प्रति राजं—प्रत्येक राजा। कोट—परकोटा, चहारदीवारी। सुं मेखल—उस नगर रूपी रमणी की मेखला। कोट—कंगूरे। द्रिग पलक—नेत्रों के पलक। किति—कीर्ति। संभरन—सुनने के लिये। गोष—गवाक्ष। संभारिय—तैयार कर लिया, सावधान कर लिया। किंकिन सुपाइ—पैरों में पड़ी हुई किंकिणियाँ। घुंघर सु गज—हाथियों के पैरों की घंटिकाएँ। सबद्द—स्वागत शब्द। राज निसान—राजा भान के डंके। आगम—आगमन। सुव्रत—शशिवृता के। वढ्ढिय—बढ़ गयी। सुरति—पति विषयक प्रेम।

सन्दर्भ—इस कवित्त में कवि ने वीरचन्द और पृथ्वीराज का नगर रूपी नायिका द्वारा स्वगत करने का मनोरम अलंकारिक वर्णन किया है। अन्तिम पंक्ति में कवि पृथ्वीराज के पहुँचने के समाचार से शशिवृता के हृदय के आनन्द का भी संकेत कर देता है।

व्याख्या—वीरचन्द और पृथ्वीराज दोनों राजा दल-बल-सहित देवगिरि नगरी के समीप आ गये। नगर दोनों राजाओं में से प्रत्येक की साज-सज्जा को बड़े ध्यान से देखने लगा। ऐसा लगता था मानों देवगिरि नगरी अपने हाथों को सजाकर दोनों राजाओं का आलिंगन करने के लिए आगे बढ़ रही हो [लक्षणा से नगरी के आगे बढ़ने का अर्थ नागरिकों के बढ़ने से है।] नगर निवासी दोनों राजाओं का स्वागत करने के लिए आगे बढ़ रहे हैं। सारी नगरी सजी हुई है। आगे कवि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



देवगिरि नगरी का मानवीकरण करता हुआ कहता है कि नगरी रूपी रमणी जो स्वागत के लिए आगे बढ़ रही है, वह पूर्ण रूप से सजी हुई है। नगर की सुन्दर चहार दीवारी ही उस नगरी की मेखला है। नगरी में प्रसादों के जो कंगूरे हैं, वे ही मानों उस रमणी के नेत्रों के पलक हैं जिनको खोलकर वह दोनों राजाओं की सज्जा को देख रही है।

इस नगरी रूपी नायिका ने इन राजाओं की कीर्ति सुनने के लिये अपने गवाक्ष रूपी श्रवणों को सावधान कर रखा है। नगरी के हाथियों के पैरों में जो घण्टिकाएं हैं, वे उस रमणी के पैरों में पड़ी हुई किंकिणियाँ हैं। राजा भान के जो डंके बज रहे हैं, वही मानों वह नगरी रूपी नायिका अतिथि राजाओं के स्वागत में शब्द बोल रही है। शशिवृता पृथ्वीराज चौहान के आने का समाचार पाकर आल्हावित हो उठती है। उसके हृदय-कमल में पति विषयक रति की मात्रा अत्यधिक बढ़ जाती है।

काव्य-सौंदर्य—१. अलंकार—मानवीकरण —नगरी की मानवी क्रियाओं का वर्णन है।

२. सम्पूर्ण छन्द से सांगरूपक का निर्वाह हुआ है। नगरी पर उपमान रमणी का अंगों सहित आरोप किया गया है।

३. 'कमल-हीय' में रूपक।

४, 'कमल-हीय बढ़िढ्य सुरत' में अनुभाव-योजना है।

## दूहा

यों करंत दुत्तिय लियौ। कथा श्रवन सुनि मंत ॥
जाको तैं पतिवृत्त लिय। सो आयौ अलि कंत ॥८७॥
श्रवन नयन को मेल कै। भय चंचल चल चित्त ॥
श्रोतानं दिष्टानं अरु। मिलि पुच्छै दोई मित्त ॥८८॥

शब्दार्थ—यों—इस प्रकार। करंत—करते हुए। दुत्तिय= द्वन्द्व। वियौ—दोनों। पतिवृत्त लिय—पति रूप में पाने का वृत धारण किया। अलि—बाला। कंत—स्वामी, पति।

संदर्भ—पृथ्वीराज के गुणों को श्रवण कर ही शशिवृता ने उनको पति रूप में पाने का वृत धारण कर लिया था। अब पृथ्वीराज को देखकर उसे दृष्टानुराग भी हो गया। कवि यहाँ उसकी द्वन्द्वपूर्ण स्थिति का अनुभूति पूर्ण वर्णन कर रहा है।

व्याख्या—शशिवृता के श्रवणानुराग में प्रत्यक्ष दर्शन के अनुराग ने मिलकर हृदय में द्वन्द्व उपस्थित कर दिया। श्रवण और नेत्र एक दूसरे से अधिक ज्ञान रखने की होड़ करने लगे। श्रवण और नेत्र दोनों पृथ्वीराज के विषय में एक दूसरे से अधिक जानने की होड़ कर रहे थे। कानों ने शशिवृता से कहा कि हे राजकुमारी!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## कवित्त

घेरि गांम जद्दव नरिंद। उम्भे चिहुं पासं ॥
पल नंषिय रंभा सु। करन आरंभ प्रवासं ॥
एक एक गुन करहि। सब्ब फूले सत पत्रं ॥
तिन मध्यम शशिवृत। भई कम्मोदनि मत्तं ॥

पित पुच्छि पुच्छि परिवार सब ; पुच्छि वंध रज्जन सकल ॥
आवृत तात अग्या सुग्रहि। भइय बाल बुध्या विकल ॥६३॥

शब्दार्थ—उम्भे—उमड़ पड़े, छा गये। पल नंषिय - पलकें डालीं, दृष्टि डाली। रंभा—रम्भा नाम की अप्सरा। प्रवासं—युद्धभूमि में अवतरित होने को। सब्ब—समस्त। गुन करहि—हित चाहने वाले। सत पत्रं—कमल। तिन मध्यम—उनके बीच में। कम्मोदनि मत्र - कुमोदिनी के समान। पुच्छि—पूछकर। बंध रज्जन—राजा के बन्धु वर्ग। आवृत्त - बार-बार। तात—पिता। सुग्रहि - लेकर। बुध्या—बुद्धि से।

सन्दर्भ—इस छन्द में चन्द्र ने पृथ्वीराज के सामन्तों द्वारा देवगिरि को घेर लेने, शशिवृता के स्वजन-सम्बन्धियों के प्रसन्न होने तथा आसन्न विषम परिस्थिति से ग्रस्त शशिवृता की आकुलता का वर्णन किया है :

व्याख्या—पृथ्वीराज चौहान के सामन्तों ने राजा यादवराय भान की नगरी को चारों ओर से घेर लिया। युद्धभूमि में अपना आवास बनाने की इच्छा से रम्भा ने देवगिरि पर अपनी दृष्टि डाली। कुमारी शशिवृता के जो समस्त हितैषी थे, वे सब उसका मनोरथ सफल होते देखकर कमल पुष्प के समान प्रफुल्लित हो उठे। उन सबके बीच में राजकुमारी शशिवृता की स्थिति कुमोदिनी पुष्प की भांति थी। भाव यह है कि जिस प्रकार कमल के विकसित होने पर कुमोदिनी विकसित नहीं होती, उसी प्रकार गुरुजनों के बीच में लज्जा के कारण वीरचन्द के भी आ जाने से विषम परिस्थिति उत्पन्न होने की आशंका से शशिवृता प्रसन्न नहीं थी।

शशिवृता ने अपने पिता, परिवार तथा समस्त बन्धु बान्धवों से हरसिद्धि नामक स्थान पर जाने के लिये पूछ लिया और पिता से बार-बार आज्ञा प्राप्त करली उस समय कुमारी शशिवृता की बुद्धि बहुत व्याकुल हो रही थी अर्थात् वह किंकर्तव्य विमूढ़ हो रही थी।

विशेष—१. शशिवृता चित्ररेखा का अवतार थी और रम्भा चित्ररेखा की प्रिय सखी थी। अतः वह शशिवृता के विवाह के अवसर पर आने की इच्छा करती है।

अलंकार—(क) उपमा ["एक-एक…मंतं"]
(ख) अनुप्रास।

२. 'कम्मोदनि', 'पुच्छि' में व्यंजन-द्वित्व की प्रवृत्ति तथा 'भइय' में स्वर की वृद्धि है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## दूहा

बिकल बाल जहं सकल हुअ । बुद्धि विकल प्रति साज ॥
भान बचन सच्चै सुकरि । जिन अप्पी प्रथिराज ॥६४॥

**शब्दार्थ**—हुअ=हो गये । प्रति साज =सब तत्पर होकर । सच्चै सुकरि =पूर्ण करे । अप्पी=अर्पन कर दी ।

**सन्दर्भ**—राजकुमारी शशिवृता को व्याकुल देखकर उसके समस्त हितैषी ईश्वर से यह प्रार्थना करते हैं कि शशिवृता का विवाह पृथ्वीराज के साथ हो :

**व्याख्या**—बाला शशिवृता के व्याकुल होने पर उसके समस्त हितैषी व्याकुल हो जाते हैं । वे सभी ईश्वर से विनय करने लगते हैं कि वह राजा भान के वचनों को सत्य कर दे, जिन्होंने शशिवृता को पृथ्वीराज के लिए समर्पित कर दिया है ।

**१. भाव-साम्य**

सोचहिं सकल कहत सकुचाहीं । विधि सन विनय करहिं मन माहीं ॥
हरु विधि बेग जनक जड़ताई । मति हमारि असि देहि सुहाई ॥
बिनु विचार पन तजि नरनाहू । सीय राम कर करहिं विवाहू ॥

× × × ×

चलत राम सब पुर नारी । पुलक पूरि तन भये सुखारी ॥
बन्दि पितर सु सुकृत सँभारे । जो कछु पुन्य प्रभाउ हमारे ॥
तो सिव धनुष मृनाल की नाईं । तोरहिं राम गनेसु गुसाईं ॥

—'रामचरित मानस'

**२. अलंकार**='सच्चै सुकरि' में छेकानुप्रास

## गाथा

वीरं चन्द सुव्याहं । सो व्याहं जोगनी पुरयं ॥
संभरि क्रन शशिवृत्तं । अगम वीराय मंजनं तनयो ॥६५॥

**शब्दार्थ**—जोगनी पुरयं=दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान । संभरि=१. शाकंभरी नरेश पृथ्वीराज १. सुनकर । क्रन=किया । अगम वीराइ=वीर पृथ्वीराज का आगमन । मंजनं.तनयो—शरीर का मंजन (स्नान) किया ।

**सन्दर्भ**—यह जानकर कि वीरचन्द्र के स्थान पर उसका विवाह पृथ्वीराज से होने जा रहा है, शशिवृता ने उल्लसित होकर मंजन किया :

**व्याख्या**—जब शशिवृता को यह ज्ञात होता है कि उसका विवाह वीरचन्द के स्थान पर दिल्लीश्वर पृथ्वीराज के साथ होने जा रहा है और यह सुनकर कि शाकंभरी नरेश पृथ्वीराज चौहान आ भी गये हैं, उसने शृंगार करने के लिए स्नान किया ।

**अलंकार**—'संभरि' में यमक अलंकार है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## कवित्त

पुच्छि मात पित पुच्छि। पुच्छि परिवार ग्रेह सव ।।
मैं पृत्त लियौ निवद्ध। गवरि पुज्जन बाल जव ।।
तिन थांनक सब देव। नीति आरंभ व्रत लीनौ ।।
तब प्रसाद उप्पनौ। मोहि इच्छा व्रत दीनौ ।।
तिन काल व्रत लीनौ सु मैं। गवरि प्रसाद सु पुज्ज फल ।।
बारंज बात तुअ मोह हुअ। कहै और अवलहि अफल ।।९६।।

शब्दार्थ—ग्रेह=घर के। निवद्ध—अक्षय। गवरि—गौरि। पुज्जन=पूजने को। तिन थांन—वह स्थान अर्थात हरिसिद्धि। नीति नित्य। प्रसाद=कृपा। उप्पनौ=उत्पन्न हुई। इच्छा व्रत—वत की इच्छा। पुज्ज फल—फल की प्राप्ति। बारंज—इस बार, अभी। मोह हुअ—मोह के वशीभूत होकर। अवलहि—मुझ अवला का। अफल=निष्फल।

सन्दर्भ—यहां शशिवृता हरसिद्धि नामक देव स्थान पर गौरी-पूजन के लिए जाने के लिये माता-पिता और परिजनों से आज्ञा मांग रही है :

व्याख्या—हंस-दूत के द्वारा पृथ्वीराज और शशिवृता का हरसिद्धि स्थान मिलन के लिये निश्चित हो चुका है। शशिवृता वहाँ जाने के लिये अपने माता-पिता और परिवार के अन्य जनों से अनुमति मांगती है। वह कहती है कि मैंने अपने बाल्यकाल में हरसिद्धि में गौरी के पूजन का अक्षय व्रत लिया था। वह स्थान ऐसा है जहाँ पर समस्त देवताओं ने सदैव शुभ कार्य प्रारम्भ करते समय व्रत लिया है। आप लोगों की कृपा से मुझे भी व्रत लेने की इच्छा हुई है। मैंने बाल्यकाल में जो व्रत धारण किया था, आपकी कृपा से उसका फल मुझे मिल गया है। अर्थात् मुझे मन चाहे वर की प्राप्ति हो गयी है। यदि आप लोग मोह के वशीभूत होकर वहाँ जाने की आज्ञा न देंगे, तो मुझ अवला का व्रत धारण करना निष्फल हो जायगा।

विशेष—शशिवृता का चातुर्य दृष्टव्य है। वह पृथ्वीराज से मिलन के लिये संकेत स्थल पर जाने के लिये परिजनों से बड़ी चतुरता से स्वीकृति प्राप्त कर लेती है।

## दूहा

दुष देवल को छंडनह। उर सिंचन अंकूर ।।
दीह काल बल बीचि बदि। लिय समान संपूर। ९७।।
बाला बेनी छोरि करि। छुट्टै चिहर सुभाइ ।।
कनक थंभ वें ऊत्तरी। उरग सुता दरसाइ ।।९८।।

शब्दार्थ—दुष=दुःखी। देवल=मन्दिर। छंडनह=छोड़ना, वियोग होना "दुष देवल......छंडनह—माता-पिता और परिजनों के वियोग का दुःख था। सिंचन अंकूर—प्रेमांकुर के उत्पन्न होने से। बीचि—हृदय। दीहि काल=दिन और समय। बदि—जानकर। "दीह काल...बदि"—दिवस एवं समय को बलमान मानते हुए। समान संपूर—पूजा की सम्पूर्ण सामग्री। चिहर=केश। सुभाइ—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सहज भाव से सुशोभित। कनक थंभ—स्वर्ण-स्तम्भ। उरग-सुता—नाग-कन्या, सर्पिणी।

सन्दर्भ—शशिवृता को यद्यपि परिजनों से वियुक्त होने का दुःख है किन्तु वह समय की गति बलवान मानकर हरसिद्धि स्थान पर मन्दिर में गौरी-पूजन के लिये पूजन सामग्री सजाती है और स्वयं का श्रृंगार करती है:

व्याख्या—हंस दूत के माध्यम से शशिवृता और पृथ्वीराज का मिलन-स्थान हरसिद्धि का देवालय निश्चित हो चुका था। अतः गौरी-पूजन के लिये उसका जाना अभीष्ट सिद्धि के लिए जाने का बहाना मात्र था। उसके हृदय में पृथ्वीराज का प्रेमांकुर उत्पन्न हो चुका था और वह हृदय से उनको प्रेम करने लगी थी। देवालय जाते समय उसे माता-पिता एवं परिजनों से विमुक्त होने का दुःख भी था। उसे विश्वास हो गया था कि पृथ्वीराज उसे अवश्य ले जायेंगे। अतः स्वजनों के वियोग का उसे दुःख हुआ। किन्तु दिवस एवं समय को बलवान मानती हुई वह बाला शशिवृता पूजा की सम्पूर्ण सामग्री अपने साथ ले लेती है और देवालय जाने के लिए श्रृंगार करने लगती है।

शशिवृता ने अपनी चोटी खोलकर केश-राशि को बिखरा दिया। उसके खुले हुये केश ऐसे शोभा दे रहे थे मानो स्वर्ण के स्तम्भ (शशिवृता का गौर शरीर स्वर्ण-स्तम्भ है।) सर्पिणी उतरती हुई दिखाई दे रही हो।

काव्य-सौन्दर्य—१. केशों की सुदीर्घता और गौरवर्ण शशिवृता के सौन्दर्य को व्यंजित करता है।

२. अलंकार—वस्तूत्प्रेक्षा—शशिवृता के गौरवर्ण में स्वर्ण खम्भ एवं केश में सर्पिणी की सम्भावना की गयी है।

३. प्रथम पंक्ति में कन्या के पितृ-गृह से बिछुड़ने की व्यथा को स्वाभाविक रूप से व्यंजित किया गया है।

### छन्द त्रोटक

मय मंजन मंडित बाल तनं। घनसार सुगंध सुबोरि घनं॥
नव लोइन अंजित गंजि चली। कि मनो कस कुंदन षंभ हली॥९९॥

सुभ वस्त्र सुअंग सुरंगनसी। सुहली मनु साष मदन्न कसी॥
जरि जेहरि पाइ जराइ जरी। सजि भूषन नम्भ मनो उतरी॥१००॥

सिगरी लट यों विथरी विगसै। शशि के मुख तें अहि सें निकसै॥
रंग रत्त उबट्टन उज्जल कै। तिन में कछु सेत सुधा चलि कै॥१०१॥

नव राजिय रोम बिराज इसी। जमना पर गंग सरस्वति सी॥
परि पान सुकुंकुम मज्जन कै। नव नीरज अंजन नैननि कै॥१०२॥

शब्दार्थ—मय—मदमाती। मण्डित—श्रृंगार किया। मंजन—स्नान करके। घनसार—चन्दन। सुबोरि घनं—भली प्रकार डुबोकर। नव लोइन—अंजित अ—अंजन लगाकर। कस—कसौटी। कुन्दन षंभ—स्वर्ण का स्तम्भ। [९९]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सुभ वस्त्र—सुन्दर वस्त्र। सुअंग—सुन्दर शरीर के अवयवों पर। सुरंगनसी—देवांगना के समान। सुहली—सुनहली। साष—शाखा। मदन—कामदेव 'सुहली''' कसी'—मानों कामदेव की स्वर्णिम शाखा को कसौटी पर कसा हो। जरि जेहरि—जड़ाऊ जेवर। पाइ—पैरों में। जराइ जरी—जड़ी से जड़ित। नम्भ—आकाश से। [१००]

सिगरी—समस्त। लट—केश-राशि। बिथरी—फैली हुई। बिगसैं—सुशोभित रही थी। अहि से—सर्प जैसे। रंग रत्त—लाल रंग का। "तिन में''' कुछ सेत सुधा चलि कैं—जिसमें कुछ श्वेत कण अमृत के समान दृष्टिगत हो रहे थे। [१०१]

रोम—रोमावली। इसी—इस प्रकार। 'परि धान''' मज्ज कैं'—कुंकुम मिले हुए जल से स्नान करने के पश्चात्। नव नीरज—नव विकसित कमलों। [१०२]

सन्दर्भ—यहां कवि ने शशिवृता के श्रृंगार और उसके सौन्दर्य का वर्णन किया है :

व्याख्या—प्रेम के मद में उन्मत्त उस बाला शशिवृता ने स्नान करने के पश्चात् अपने शरीर का भली प्रकार श्रृंगार किया सबसे पहले उसे चन्दन की सुगन्ध से भली प्रकार शरीर को स्नान कराया। इसके पश्चात् उसने अपने सुन्दर नेत्रों में अंजन लगाया। उस समय निखरे हुए सौन्दर्य से युक्त शशिवृता ऐसी लग रही थी, मानों स्वर्ण के स्तम्भ को कसौटी पर कसा गया हो। भाव यह है कि स्वर्ण की सी कान्तिवाले उसके मुखमण्डल के नेत्रों में लगा काजल क़सौटी सा लग रहा था।

अपने सुन्दर शरीर पर सुन्दर वस्त्रों को धारण कर शशिवृता देवांगना के समान लगने लगी अथवा वह ऐसी लगती थी, मानो कामदेव ने स्वर्णिम शाखा को कसौटी पर कसा हो। शशिवृता ने पैरों में जड़ाऊ आभूषण धारण किये और शरीर को जरी के काम के वस्त्रों में सजाया। ऐसा लगता था, मानो कोई अप्सरा ही शशिवृता के रूप में आकाश से उतरी हो।

शशिवृता के चन्द्रमुख पर बिखरी हुई केश राशि ऐसी शोभा दे रही थी, मानों चन्द्रमा के मुख से सर्प से निकल रहे हों। उसने अपने शरीर पर रक्तिम वर्ण का स्वच्छ अवलेप किया था जिसमें कुछ श्वेत-कण अमृत के समान दिखाई दे रहे थे।

उसके शरीर की नवीन रोम-राजि इस प्रकार शोभा दे रही थी, मानों गंगा और सरस्वती पर यमुना सुशोभित हो रही है। उसने कुंकुम मिले हुए जल से स्नान करने के पश्चात् अपने नव विकसित कमलों के समान सुन्दर नेत्रों में अंजन लगाया था।

काव्य-सौन्दर्य—१. भाव-साम्य :

पद्मावती भी देव-पूजन को जाने से पूर्व इसी प्रकार अपना श्रृंगार करती है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


"तन चिटक चीर डार्‌यो उतारि,
मज्जन मयंक नवसत सिगार।
भूषन मंगाय नष-सिष अनूप,
सजि सेन मनो मनमथ्थ भूप।।"

—पद्‌मावती समय, छन्द-संख्या ४३

स्नान करती हुई इंछिनी का निम्न शब्द-चित्र दृष्टव्य है :

"बिन बस्तर रंग सुरंग रसी,
सुहलै जनु साणं मदन्न कसी।।
नव लोइन लोइ उवट्टन कौं,
कि बस्यो मनु काम सुपट्टन कौं।
द्रिग फुल्लिय कांम विरांमन के,
उभरै मकरन्द उदै दिन कै।।
बिन कंचुकि अंग सुरंग बरी,
सुकली जनु चपक हेम भरी।
सुभरी लट चंचल नीर भरी,
तिनकी उपमा कवि दिव्य धरी।।
तिन सौं लगि के जल-बुन्द ढरैं,
सु छुटै मनु तारक राह करैं।।
जो कछू उपमा उपजी दूसरी,
मनो माट्‌य स्याम सुमत्ति धरी।।
अति चंचल ह्वै बिदुरे मुष तैं,
मनो राह ससी सिसुता बषतैं।
करि मंजन अंगोछि तन, धूर बाधि बहु अंग।
मनो देह जनु नेह धुलि, हेम मौज जम गंग।।"

२. यहाँ सौन्दर्य का वर्णन शृंगार के उद्दीपन के रूप में है।

३. 'मदन्न' और 'उवट्टन' में व्यंजन द्वित्व की प्रवृत्ति भाषा की प्राचीनत प्रकट करती है। 'तनं' और 'चगं' में शब्दान्त में अनुस्वार की प्रवृत्ति है।।

४. अलंकार—(क) १. उत्प्रेक्षा—['नव लोइन'''हली' में शशिवृता के स्व स्तम्भ (गौर शरीर) को कसौटी पर कसने क संभावना की गई है]

(ख) २. 'सुभ वस्त्र सुभंग सुरंगन सी' में उपमा।

(ग) 'सुहली'''कसी' [मानों कामदेव के स्वर्ण की शाखा क कसौटी पर कसा हो' में उपमा।

(घ) 'जरि जेहरि'''उत्तरी' में शशिवृता में अप्सरा क सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(ङ) 'सिगरी लट···निकसं' एवं 'नव राजिय···सरस्वति सी' में उपमा।

(च) 'नव नीरज नैननि' में उपमा।

## कुण्डलियां

करि मज्जन सज्जन सुक्रम । अभूषन न समान ॥
केहूं काके कोहिं दिसि । सज सषि नैन कमान ॥
सजि सषि नैन कमान । केश बागुरि बिस्तारिय ॥
हाव भाव कट्टाच्छ । ढुंकि षुट्टी दिय भारिय ॥
बैठि नैन नृप मून । पेम देषन गह सज्जन ॥
मन मृग पिय कृत काज । ताकि बंधन किय मज्जन ॥ १०३॥

शब्दार्थ—सज्जन सुक्रम=क्रम-क्रम से शरीर को अलंकृत किया। न समान =समा नहीं रहे थे। केहूं काके कोहिं दिसि—किसी अंग का आभूषण किसी अंग में धारण कर लिया था। केश बागुरि—केश राशि। बिस्तारिय=फैला दिया। षुटटी—बिन्दी। भारिय=बड़ी। बैठि नैन नृप मूल=राजा पृथ्वीराज को अपने नेत्रों के भीतर बिठा लिया। गह=ग्रहण करना अभिलाषा रखना। सज्जन—साजन, प्रियतम। ताकि—ताके, उसके। बंधन=बांधने के लिये।

सन्दर्भ—यहां कवि ने शशिवृता के शृंगार करने और उसके हृदय में प्रियतम पृथ्वीराज के दर्शन की तीव्र अभिलाषा का वर्णन किया है :

व्याख्या—बाला शशिवृता ने स्नान करने के पश्चात् क्रम-क्रम से अपने शरीर को आभूषणों और वस्त्रों से सजाया। उसके पास इतने अधिक आभूषण थे, कि वे शरीर में नहीं समा रहे थे। प्रिय-मिलन की आतुरता में वह इतनी अधिक निमग्न थी, कि उसने किसी अंग में पहिने जाने वाला आभूषण किसी अंग में पहिन लिया। नेत्रों को अंजन से सजाकर उसने उन्हें धनुष बना लिया था।

उसने अपनी केश राशि को पूर्ण रूप से मुक्त कर रखा था। उसके कटाक्षों में हाव-भाव भरे हुए थे। उसने अपने भाल पर बड़ी- सी बिन्दी लगा रखी थी। उसके नेत्रों में राजा पृथ्वीराज चौहान बसे हुए थे। वह बड़े प्रेम एवं अभिलाषाओं से भरे हृदय से अपने साजन को देखने की अभिलाषा करती थी उसका मन अपने प्रियतम को देखने के लिए हरिण होकर उतावला बना हुआ चौकड़ी भर रहा था। उस मन-मृग को बांधने के लिए ही उसने स्नान किया था।

विशेष—"ताकि बन्धन किय मज्जन"—स्नान करने से मन का सारा श्रम दूर हो जाता है और मन विश्राम प्राप्त करता है। इसलिए प्रियदर्शन के लिए आतुरता में श्रमित शशिवृता के नैन-मृगों को कवि ने स्नान कराया है।

काव्य सौन्दर्य—१. शशिवृता मुग्धा नायिका है।

२. सात्विक कायिक अनुभावों की योजना है।

३. अलंकार—(क) 'मज्जन सज्जन' में सभंग पद यमक।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३. 'कह काके···कोहि' में 'क' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्त्यानुप्रास।

(ग) 'नैन-कमान' में रूपक।

(घ) 'मन-मृग' में रूपक।

(ङ) 'मन-मृग···मज्जन' में हेतुत्प्रेक्षा।

४. छन्द कुण्डलियाँ—यह मात्रिक विषम छन्द है। दोहा और रोला के मिश्रण से कुण्डलिया छन्द बनता है। इसमें ६ पद होते हैं। इसके प्रारम्भ में दोहा और अन्त में रोला होता है। इस प्रकार प्रत्येक चरण में २४ मात्रायें और पूरे छन्द में १४४ मात्रायें होती हैं। दोहे के अन्त का शब्द रोला के आरम्भ में और रोला के अन्त के कुछ शब्द दोहे के प्रारम्भ में रहते हैं।

## छन्द नाराच

सुगंध केस पासयं । सुलग्गि मुत्त छंडियं ॥
अनेक पुष्प बीचि गुंथि । भासिता त्रिषंडियं ॥
मनों सनाग पुप्फ जाति । तीन पंथि मंडियं ॥
दुती कि नाग चंदनं । चढंत दुद्ध पंडियं ॥१०४॥

शब्दार्थ—केस पासयं=केश-राशि । मुत्त—मुक्त । छंडियं—छोड़ दिया गया था। भासिता—सुशोभित हो रही थी। त्रिषंडियं—तीन वेणियाँ। सनाग—नाग अर्थात् सर्पों से युक्त। पुपफ—पुष्प। जाति=समूह। पंथि—मार्ग। मण्डियं—शोभायमान हो रहा हो। दुती—द्वितीय (उपमा)। दुद्ध पडियं—दुग्ध के समान श्वेत।

सन्दर्भ—यहाँ शशिवृता के केश-कलाप और पुष्प-गुम्फित वेणियों का वर्णन है :

व्याख्या—शशिवृता ने अपनी सुगन्धित केश-राशि को खुले हुये रूप में छोड़ दिया था। उसकी केश-राशि के बीच-बीच में अनेक पुष्प गुंथे हुये थे। पुष्पों से गुम्फित करके उसकी केश-राशि की तीन वेणियाँ गूँथी गई थीं। पुष्पों से गुम्फित वे तीनों वेणियां इस प्रकार शोभायमान थीं, मानों नाग-युक्त पुष्पों का समूह तीन मार्गों में विभाजित होकर सुशोभित हो रहा हो। वे वेणियाँ ऐसी भासित हो रही थीं मानों दुग्ध के समान श्वेत वल्लरी पर सर्प चढ़ रहे हों।

काव्य-सौन्दर्य—१. शशिवृता के केश-कलाप का सौन्दर्य उसके अनुपम होने की सूचना देता है।

२. उत्प्रेक्षा अलंकार के द्वारा कवि ने केश-राशि के सौन्दर्य का सजीव और मनोरम शब्द-चित्र अंकित कर दिया है। पुष्पों से गुम्फित तीनों वेणियों को नाग-युक्त पुष्पों को तीन मार्गों में विभाजित होने एवं दुग्ध-सदृश श्वेत चन्दन वल्लरी पर सर्प के चढ़ने की बड़ी सुन्दर कल्पना है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३. 'दुती कि नाग···पंडियं' में उपमा।

४. छन्द—नाराच—केशवदास ने 'नाराच' छन्द का लक्षण निम्न प्रकार माना है।

"लघु गुरु क्रम ही देव, पद षोडस वरन प्रमान।
छन्द नराच बखानिये, केसवदास सुजान ॥"

अर्थात इसके प्रत्येक चरण में लघु गुरु के क्रम से १६ वर्ण होते है।

५. 'पासयं' 'छडियं' मंडियं, पंडियं और त्रिषंडियं के शब्दान्त में अनुस्वार की प्रवृत्ति है। 'सुलग्गि' और 'मुत्त' में व्यजन-द्वित्व है। 'मुत' का संस्कृत तत्सम रूप 'मुक्त' पुप्फ' का 'पुष्प' 'दुद्ध' का 'दुग्ध' है।

सिंदूर मध्य गुच्छत। भ्रगमदं विराजयं ॥
मनो कि सूर उग्गतें। गहे सु पुत्र लाजयं ॥
सु तुच्छ सुच्छ पाट आट। पेम बाट सोभिय ॥
मनों कि चंद राह वान। बे प्रमान लोभयं ॥१०५॥

शब्दार्थ—गुच्छत—लगी हुई। भ्रगंमदं—कस्तूरी। विराजयं—शोभा दे रही है। उग्गतें—उदित हो रहे हों। गहे—लिये हुये। सु पुत्र—सूर्य अपने पुत्र को अर्थात यमराज को—यमराज का वर्ण श्याम माना गया है और उसे सूर्य का पुत्र कहा गया है। लाजयं—लज्जा से युक्त-कृष्ण वर्ण का पुत्र गोद में लेने के कारण सूर्य लज्जित है। तुच्छ—कुछ-कुछ। सुच्छ—श्वेत। पाट आट—कौशेय रेशमी वस्त्र पेम-बाट—प्रेम पथ पर। राहवान—रास्ता चलने वाले, पथिक। वे प्रमान—बहुत अधिक, वरबस, हठात। लोभयं—आकृष्ट कर लेता है।

सन्दर्भ—यहां कवि ने शशिवृता के भाल में कस्तूरी युक्त सिन्दूर-विन्दु तथा कौशेय वस्त्रों के अनुपम सौंदर्य का वर्णन किया है:

व्याख्या—शशिवृता भाल में सिंदूर धारण किये हुये है। उसके बीच में लगी हुई कस्तूरी ऐसी शोभा दे रही है मानो सूर्य-भगवान अपने पुत्र को गोद में लिये हुये उदित हो रहे हों। पुत्र यमराज श्यामवर्ण का है, अतः श्याम-वर्ण का पुत्र गोद में धारण करने के कारण वे लज्जित हो रहे हैं। [उदित होता हुआ सूर्य सिन्दूरी वर्ण का होता है। उसके बीच में कुछ कालिमा सी होती है। इसे सूर्य का पुत्र यमराज बनाकर कवि ने सर्वथा मौलिक और मनोरम कल्पना की है।] शशिवृता कुछ-कुछ श्वेत रेशमी वस्त्रों को धारण किये हुये प्रेम-मार्ग पर इस प्रकार शोभा पा रही है जैसे सौंदर्यशाली चन्द्रमा वरवस पथिकों को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। जिस प्रकार शरद ऋतु का सुन्दर चन्द्रमा पथिकों की दृष्टि को हठात अपनी ओर आकर्षित कर लेता है, उसी प्रकार कौशेय वसन धारण किये हुये जाती हुई शशिवृता लोगों की दृष्टि को अपनी ओर खींच लेती है।

विशेष—१. "सु तुच्छ...लोभयं" शरद ऋतु का चन्द्रमा कुछ-कुछ पीला होता है। कुमारी शशिवृता के भी कौशेय वस्त्रों से हल्की सी पीत आभा निकल रही है।

२. अलंकार—(क) 'सिन्दूर...लाजयं' में उत्प्रेक्षा।

(ख) अन्तिम पंक्तियों में उपमा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



### छंद नाराच

कनक्क काम कुंडिलं । हलंत तेज उम्भरै ॥
ससी सहाइ मान भाइ । सज्जि सूर दो करै ॥
दुती उपम्म बिंद की । किरन्न चंद दिठ्ठयं ॥
मनों कि सूर इंद गोदि । अप्प आनि बिठ्ठयं ॥१०६॥

**शब्दार्थ**—कनक्क काम—स्वर्ण निर्मित । हलतं तेज उम्भरे—तेज से उभरे हुये हिलते हैं । ससी सहाइ—चन्द्रमा ने अपनी सहायता के लिये । मान भाइ—मन को अच्छे लगने वाले । सज्जि—सजाकर । सूर—सूर्य । दुती—दूसरी । उपम्मन—उपमा, समानता । बिदं—मस्तक में लगी हुई बिन्दी । दिठ्ठयं—दिखलाई पड़ती है । इदं—चन्द्रमा । गोदि—गोद में । अप्प—स्वयं । बिठ्ठयं बैठ गया हो ।

**सन्दर्भ**—नख-शिख-सौन्दर्य वर्णन के प्रस्तुत छन्द में कवि ने शशिवृता के कुण्डलों एवं भाल में लगी बिन्दी के सौंदर्य का वर्णन किया है :

**व्याख्या**—स्वर्ण निर्मित कुण्डल शशिवृता के कानों में हिलते हुये अपने तेज में प्रकाशित हो रहे हैं। ऐसा लगता है मानों चन्द्रमा ने अपनी सहायता के लिये सब के मन को अच्छे लगने वाले सूर्य को दो भागों में करके कुण्डलों के रूप में कानों में लटका लिया हो ।

कवि दूसरी उपमा शशिवृता के भाल पर लगी हुई बिन्दी की देता हुआ कहता है कि वह उसके मुख पर सूर्य की किरणों के समान प्रकाशित हो रही है । उसको देखकर ऐसा लगता है मानों स्वयं सूर्य चन्द्रमा की गोद में आकर बैठ गया हो ।

**काव्य-सौंदर्य**—१. यहाँ उत्प्रेक्षा में सर्वथा मौलिकता है । कवि ने कुण्डलों में सूर्य के दो भाग होने की सम्भावना की है । चन्द्रमा सूर्य का प्रकाश लेकर ही प्रकाशित होता है । इसलिए चन्द्रमा के सहायकों के रूप में कवि ने तो सूर्यों सम्भावना की है। यहां मुख चन्द्रमा है और कानों में लटकते हुये स्वर्ण-कुण्डल सूर्य है ।

इसी प्रकार कवि ने सूर्य को चन्द्रमा की गोद में बिठाया है । मुख चन्द्रमा है और बिन्दी सूर्य हैं ।

२. अलंकार—उत्प्रेक्षा ।

३. चन्द्रमा से मुख की समानता मुख की शीतलता और सौन्दर्य की स्निग्धता को प्रकाशित करती है ।

४. भाव-साम्य :

(क) "तिय मुख लखि हीरा जरी,
बेंदी बढ़ं विनोद ।
सुख-सनेह मनो लिये,
बिधु पूरन बुद्ध गोद ॥"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(ख) "भाल लाल बेंदी ललन,
आखत रहे विराजि ।
इन्दु कला कुज में, बसी,
मानो राहु भय मानि ।।"

—बिहारी

"किधौं गोद चंदजू कै खेले सुत चन्द को।"

छंद नाराच

भुवन्न बंक संक जूअ । नैन अग्ग जूवयं ।।
उरद्धता चपल्ल गत्ति । अच्छ आनि ऊवयं ।।
कटाच्छ नैन बंक संक । चित्त मान बंकयं ।।
सुछंडि वै सु कुंचितं । श्रवन्न बान नंपयं ।।१०७।।

शब्दार्थ—भुवन्न—भौहें । जूअ—युवती शशिवृता । संक—सशंकित । अग्ग—हरिण जूवयं—युवती । उरद्धता—हृदय को बींधने वाली । चपल्ल गति—चंचल चाल । अच्छ—अच्छी । आनि—आ गई है । ऊवयं—युवावस्था । अच्छ आनि ऊवयं—सुन्दर युवावस्था आ रही है । मान वंकयं—तिरछी गति से । सुछण्डि—छोड़े हुये । सु—उसके । कुंचितं—तिरछे । नंपयं—छोड़ती है ।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने शशिवृता के नख-शिख सौन्दर्य-वर्णन के अन्तर्गत उसकी भौंहों, सुन्दर चाल और कटाक्षपातों का वर्णन किया है :

व्याख्या—युवती शशिवृता की भौंहें सशंकित और तिरछी हैं और नेत्र हरिण के नेत्रों के समान सुदीर्घ हैं । उसके चलने की चंचल गति दर्शकों के हृदय को बींध देती है उसके शरीर में सुन्दर युवावस्था प्रवेश कर रही है उसके कटाक्षपात करते हुये तिरछे सशंकित नेत्र देखने वालों के हृदय में प्रवेश कर जाते हैं । शशिवृता के वे तिरछे धनुषाकार नेत्र उसके कानों तक लम्बायमान हैं । इनसे वह कटाक्ष-बाण छोड़ती है ।

विशेष—१. कवि के कथन में उक्ति-वैचित्य है । उसके काननचारी नेत्रों को वंकिम धनुष बना दिया है । फिर वे वंकिम होकर हृदय में प्रवेश कर जाते हैं अतः हृदय में प्रवेश करने के पश्चात किस प्रकार निकल सकते हैं । तिरछी अड़ी हुई वस्तु प्रयास करने पर भी नहीं निकलती । सूर की गोपियाँ भी यही कहती हैं :

"उर में माखन चोर गड़े ।
ते कैसेहु निकसत नहिं ऊधो तिरछे ह्वै जो अड़े ।।"

२. शशिवृता के काननचारी नेत्र धनुष हैं, जो कटाक्ष रूपी बाणों की वर्षा कर देखने वाले पुरुषों का शिकार करते हैं । निम्न उदाहरणों में भाव-साम्य दृष्टव्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



"खेलन सिखये अलि भले, चतुर अहेरी मार।
काननचारी नैन-मृग, नागर नरनु सिकार॥"

— बिहारी

"भौंहैं स्याम धनुक जनु ताना। जा सहुँ हेर मार विष बाना॥
हने धुनै उन्ह भौंहनि चढ़े। केइ हथियार काल अस गढ़े॥

भौंह धनुक, धनि धानुक, दूसर सरि न कराइ।
गगन धनुक जो उगै लाजहि सो छपि जाइ॥"

— जायसी

३. अलंकार—(क) नेत्रों में 'मृग के नेत्रों' का आरोप होने से रूपक।
(ख) 'कटाक्ष' में 'बाणों' का आरोप होने से रूपक।

छंद नाराच

सुगंधता अनेक भांति। चीर चारु मंडियं॥
सु केहरी कटि प्रमान। बीच बंधि छंडियं॥
सुरंग अंग कंचुकी। सुभंत गात ता जरी॥
ओट बनाइ काम पंच बान। ओट जोतलैं धरी॥१०७॥

शब्दार्थ—चीर चारु मंडियं—सुन्दर वस्त्र शोभा पा रहे हैं। केहरी—सिंह। केहरी केटि प्रमान—कमर सिंह के समान है। छंडि—छोड़ दिया है। सुरंग—सुन्दर रंग की। सुभंत—शोभा पाती है। ता जरी—जरी के काम से युक्त। ओट—आड़। जोट—जोड़ा, कुच युग्म। प्रमान—समान।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने शशिवृता के सुन्दर वस्त्रों, क्षीण कटि, कंचुकी और कुचों के सौन्दर्य का वर्णन किया है :

व्याख्या—शशिवृता अपने शरीर पर अनेक प्रकार की सुगन्धियां लगाये हुये है। सुन्दर वस्त्र उसके शरीर पर शोभा दे रहे हैं। उसकी क्षीण कटि सिंह की कमर के समान सुशोभित है। उसने अपनी उस सुन्दर पतली कमर से वस्त्रों को बांधकर उन्हें नीचे की ओर मोड़ रखा है।

शशिवृता सुन्दर रंगों वाली कंचुकी धारण किये है। जरी के काम से युक्त कंचुकी अत्यधिक शोभा दे रही है। कंचुकी और उसके भीतर उभरे हुये कुच युग्मों को देखकर ऐसे लगता है, मानों कामदेव ने शशिवृता के कुच युग्मों के रूप में पंचबाणों को बनाकर कंचुकी की आड़ में छिपा दिया हो।

काव्य-सौन्दर्य—१. वस्त्रों, कटि, कंचुकी और कुचों के उभार का वर्णन शृंगार-रस के उद्दीपन के रूप में है।

२. अलंकार—(क) 'चीर चारु' में छेकानुप्रास।
(ख कमर की समता सिंह की कमर से होने में उपमा अलंकार।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(ग) 'बीच बंधि' में 'ब' वर्ण की एक बार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास।

(घ) 'सुरग''''धरी' में कचुकी की ओट में उभरे हुये कुचों में कामदेव के पंचबाण छिपाने की संभावना से उत्प्रेक्षा।

२. 'ओट-जोट' में वर्ण-साम्य।

## छंद नाराच

सुरंग माल लाल बलि। ता विसाल छंडयं॥
सु पुब्ब वैर जानि काम। अग्गि संभ मंडयं॥
जु भारथी सु गंग लै। सुमेर शृंग तें बही॥१०३॥

शब्दार्थ—माल—माला। छंडयं—छोड़ रखी है। ता—उस, उस कंचुकी के ऊपर। पुब्ब—पहले। काम—कामदेव। अग्गि=आगे। संभ—शिव। मडयं—उपस्थित हो, शोभा पा रहा है। भारथी—भागीरथी। भारथी सुगंग—भारथी गंगा। सुमेर श्रृंग—जीव प्रदेश रूपी सुमेरु।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने शशिव्रता ग्रीवा-प्रदेश से आकर कुचों पर पड़ी हुई सुन्दर माला का वर्णन किया है:

व्याख्या—शशिव्रता बाला के ग्रीवा और वक्षस्थल प्रदेश से लटकती हुई कंचुकी और कुचों के ऊपर लाल रंग की सुन्दर माला शोभा दे रही है। वक्षस्थल पर पड़ी हुई उस माला को देखकर ऐसा लगता है, मानों स्वयं कामदेव ही अपने पूर्व जन्म की शत्रुता का स्मरण कर भगवान शंकर के आगे सुशोभित हो गया है। [सुन्दर माला कामोद्दीप्त करने के कारण कामदेव का प्रतीक है। वह कंचुकी के भीतर उभरे हुए कुचों पर पड़ी है। कुच शम्भु का प्रतीक हैं। इसी को कवि ने कामदेव को शिव सामने उपस्थित कहा है।] अथवा ऐसा प्रतीत होता है कि मानों भागीरथी गगा सुमेरु पर्वत के शिखर से प्रवाहित हो रही हों।

काव्य-सौन्दर्य—१. वक्षस्थल पर सुशोभित हार का शृंगार के उद्दीपन के रूप में वर्णन है।

१. अलंकार—(क) 'माल लाल-बाल' में 'ल' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

(ख) कुचों पर माला के सुशोभित होने में कामदेव के शंभु के सामने उपस्थित होने की सम्भावना में उत्प्रेक्षा।

(ग) 'जु भारथी''''बही' में सन्देह से पुष्ट उत्प्रेक्षा [यहाँ ग्रीवा प्रदेश सुमेरु है।]

२. भाव-साम्य:

'गिरिबर गरुअ पयोधर परसित,
गिम गज मोतिय हारा'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



काम कम्बु भरि कनक-सम्भु परि,
ढारए सुरसरि धारा ॥"
—विद्यापति

"मेरु ऊपर दुइ कमल फुलाएल,
नाल बिना रुचि पाई ॥
मनिमय हार धार बहु सुरसरि,
ते नहिं कमल सुखाई ॥
—विद्यापति

## छन्द नाराच

जराइ चौकि स्याम पाट। रत्ति पत्ति तैं षुली ॥
सुरंग तिथ्थ थान मंडि। ईस शीश तें चली ॥
सुवनं छुद्रघंटिकादि। षोडसं वषानयं ॥
सु मुत्तिता तमोर तन्न। सोदरं वषानयं ॥११०॥

शब्दार्थ—जराइ—जड़ाऊ, नगों आदि से जड़ी। चौकि—कमर में पहनने का एक आभूषण। पाट—रेशम। षुली—निमग्न, रत्ति पति है षुली—पति, विषयक प्रेम में निमग्न। तिथ्य—वहाँ, उस। थान—स्थान। मण्डि—सुशोभित करके। ईस—शिव। सुवनं—स्वर्ण की। षोडसं—सोलह प्रकार का शृंगार। वषानयं—कहा जा सकता है। मुत्तिता—मौत्तिकता। तमोर—ताम्बूल, पान। तन्न सोदरं—वह शृंगार की भगिनी लगती है।

सन्दर्भ—यहां कवि ने शशिवृता की चौकी, श्याम रेशमी वस्त्र, छोटी-छोटी स्वर्ण घण्टिकाओं और ताम्बूल रंजित सौन्दर्य का वर्णन किया है:

व्याख्या—शशिवृता जड़ाऊ चौकी तथा श्याम वर्ण के रेशमी वस्त्र धारण किए हुए शोभा दे रही है। वह उस समय पति विषयक प्रेम में आकण्ठ निमग्न हो रही थी। शरीर के जिस स्थान पर वह चौकी धारण किये हुए थी, अत्यधिक सुशोभित हो रहा था। ऐसा लगता था मानों भगवान शिव के शीश से गंगा प्रवाहित हो रही हो।

शशिवृता कटि में स्वर्ण की छोटी-छोटी घण्टिकाएं धारण किये हुए है। वह सोलहों शृंगार से सजी हुई है। उसका शरीर मुक्ता के समान चमक रहा है। वह मुख से पान चबा रही है वह सजी हुई शृंगार की बहिन ही लगती है।

१. अलंकार—उत्प्रेक्षा।

२. 'रत्ति', 'पत्ति', 'तिथ्य' में व्यंजन द्वित्य की प्रवृत्ति भाषा की प्राचीनता को प्रकट करती है।

३. यहां नख शिख वर्णन शृंगार रस के उद्दीपन के रूप में है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



४. सोलह-शृंगार—

"अंग सुची मंजन बसन, मांग महावर केश।
तिलक भाल, तिल चिबुक में भूषण मेंहदी वेश॥"
मिस्सी, काजल, अगजा, बीरी और सुगन्ध।
पुष्प कली युत होयकर, तब तब सप्त निबन्ध॥

१. शरीर में उबटन लगाना, २. स्नान करना, ३. स्वच्छ वस्त्र धारण करना, ४. केश-प्रसाधान, ५. काजल लगाना, ६. सेंदुर से मांग भरना, ७. महावर लगाना। ८. मस्तक पर तिलक लगाना ९. चिबुक पर तिल बनाना, १०. मेंहदी लगाना, ११. अगंजा लगाना, १२. आभरण धारण करना, १३. पुष्पमाला धारण करना, १४. पान खाना, १५. मिस्सी लगाना, १६. सुगन्ध लगाना।

छन्द नाराच

सुगंध गोप चिन्ह मंडि। पीत रत्त जावकं॥
अभूषणं धरंता चित्त। मित्त हित्त शावकं॥
बनाइ के चौंडोल लाल। चढ़ि ढता सु सुन्दरी॥
सुदोपिता सुरंग थान। अस्तु तास उच्चरी॥१११॥

शब्दार्थ—गोप—प्रच्छन्न रूप में। चिन्ह—आभरण। पीत रत्त—पीला और लाल रंग का। जावकं—महावर। धरंता—धारण करते हुए। मित्त हित्त—प्रियतम पृथ्वीराज का प्रेम। शावकं=मृग शावक। चैंडोल—पालकी। चढ़िढता—चढ़ी। सुदोपिता—शशिवृता सुदोपिता इसलिये है कि कुमारी अवस्था में ही उस के हृदय में कामदेव ने निवास कर लिया है। सुरंग थान—रम्य स्थान अर्थात् हरसिद्धि। अस्तु—स्तुति। तास—उसकी। उच्चरी—उच्चारण किया।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने सोलह शृंगार करके शशिवृता का हरिसिद्धि स्थान के लिए प्रस्थान करने का वर्णन किया है।

व्याख्या—शशिवृता ने प्रच्छन्न रूप से समस्त सुगन्धिमय आभूषणों को धारण किया और फिर उसने पैरों में लाल एवं पीत वर्ण का महावर लगाया। मृग शावक के समान सुन्दरी शशिवृता आभूषणों को धारण करते समय पृथ्वीराज के प्रेम को हृदय में धारण किये हुये थी। लाल वर्ण की सजी हुई पालकी पर सुन्दरी शशिवृता सवार हुई। कौमार्यावस्था में ही उसके हृदय में कामदेव ने घर बना लिया था, इसलिए वह सदोपिता थी। वह हरसिद्धि नामक रमणीय स्थान को पालकी में बैठकर चल पड़ी। उस समय उसका स्तुति गान किया गया।

विशेष—१. अलंकार—अनुप्रास।

२. भारतीय संस्कृति में कुमारी में पति-विषयक अनुराग की उत्पत्ति को दोष कहा गया है।

सजि शृंगार शशिवृत तन। चढ़ि चौंडोल सरंग॥
पूजन को वर अंबिका। आई बाल सु अंग॥११२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शब्दार्थ—सुरंग—सुन्दर। सुअंग—सुन्दर शरीर वाली।

सन्दर्भ—इस दोहे में कवि ने शशिवृता के पालकी में चढ़कर हरसिद्धि स्थान में गौरी पूजन के लिए प्रयाण करने का वर्णन किया है :

व्याख्या—शशिवृता ने अपने शरीर को सोलह शृंगार से सजाया। इसके पश्चात् सुन्दर पालकी पर चढ़कर गौरी-पूजन के लिए उसने हरसिद्धि नामक तीर्थ को प्रस्थान किया।

अलंकार—अनुप्रास।

छन्द नाराच

चली अली घनं बनं। सुभंत सथ्थ संघनं ॥
बिहंग भगयो पुरं। चलंत सोम नोपुरं ॥११३॥

अलीन जुथ्थ आवरं। मनो विहंग सावरं ॥
चुगंत पत्त रत्त जा। उगंत जानि अंबुजा ॥११४॥

कलिंद सीम केसयं। अनंग अंग लोभयं ॥
उठंत कुंभ कुच्चयं। उपंम कब्बि सुच्चयं ॥११५॥

मनो जरंत वाल की। धरी सु आनि लालकी ॥
सुभंत रोम राजयं। प्रपील पंति छाजयं ॥११६॥

मनोज कूप नाभिका। चलंत लोभ आलिका ॥
सुरंभ सोभ पिंडुरी। परादि काम पिंडुरी ॥११७॥

नितंब तुंग सोभए। अनंग अंग लोभए ॥
बनो कि रथ्थ रंभ के। सुरंभ चक्क संभ के। ११८॥

नषदि आदि अच्छनं। मनों कि इन्द्र द्रप्पनं ॥
हारंत रत्त एडियं। उपम्म कब्बि टेरियं ॥११९॥

मनौं कि रत्त रत्तजा। चिकंत पत्र अंबुजा ॥१२०॥

शब्दार्थ—घनं बनं—घने वन में होकर। सुभंत—सुशोभित हो रही थी। सथ्थ—सहेलियां। संघनं—बहुत बड़ी संख्या में। बिहग—पक्षी। भगयो—भाग गया है। पुरं—देवगिरि नगर। चलंत—चलते हुए। शोभ—शोभा पाते हैं। नोपुरं—नूपुर। अलीन—सखियां। जुथ्थ—समूह। आवरं—अन्य। विहंग साबरं—विहंग-शावक। चुगंत—टपकती है। पत्त रत्त—पति-विषयक रति। उगंत—उगते हुए। विकसित होते हुए। अंबुजा—कमल। [११३-११४]

कलिंद—यमुना के समान कृष्ण वर्ण के। सीम—सीमन्त, मांग। केसयं—केशों की। अनंग—कामदेव। लोभयं—लुभाने वाले। कुम्भ—घट के समान। कुच्चयं—कूच, उरोज। सुच्चयं—सोचता है, विचारता है। जरं—जड़ाऊ। सु आनि—लाकर रख दी है। सुभंत—सुशोभित होती है। रोम राजयं—रोमावलि। प्रपील पंति छाजयं—चींटियों की पंक्तियां शोभा दे रही हों। [११५-११६]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



मनोज—कामदेव । कूप - कुआं । नाभिका—नाभि । लोभ - लालायित हो जाते हैं । आलिका—भ्रमर । सुरंग—सुन्दर । सोभ—सुशोभित है । पिंडुरी—पिंडलियां । खरादि —खरीद गई हो । पिंडुरी—छुरी । तुंग —ऊँचे । लोभए—आकृष्ट कर लेते हैं । रम्भ—रम्भा नाम की अप्सरा । चक्क—पहिया संभ —महादेव [११७-११८]

नषादि—नख आदि । अचम्भनं—सुन्दर । दप्पनं—शीशा । ढारंत—ढालू । रत्त —लाल रंग की । टेरियं—सोच रहा है । रत्त रत्तजा—रक्तिम वर्ण के । चिकंत—चिकना, स्निग्ध ।

सन्दर्भ —इन दोहों में कवि ने पुनः शशिवृता के नख-शिख सौन्दर्य का विस्तार से वर्णन किया है :

व्याख्या—कुमारी शशिवृता पालकी पर चढ़कर घने वनों को पार करती हुई हरसिद्धि नामक स्थान को चली । उसके साथ में सखियों का समूह शोभा दे रहा था । पक्षियों के कलख से यह ज्ञात हो रहा था कि देवगिरि नगर बहुत पीछे रह गया है । चलते समय शशिवृता और उसकी सखियों के नूपुर मधुर ध्वनि करते हुए शोभा पा रहे हैं । सहेलियों के समूह में शशिवृता ऐसी शोभा दे रही है, जैसे विहंग-शावकों के बीच में कोई विशिष्ट अन्य विहंग शावक ही हो । अपने विशेष सौन्दर्य एवं रूप रंग के कारण सखियों से घिरी हुई शशिवृता अलग ही जान पड़ती थी । उसके कपोल लाल हो रहे थे, जिनसे पति-विषयक रति टपक रही थी । उसके कपोलों को देखकर ऐसा लगता था, मानों लाल कमल विकसित हो रहे हों । [११३-११४]

शशिवृता के कालिन्दी के समान काले केशों के बीच में कामदेव को लुभाने वाली मांग शोभा दे रही थी घट के समान उसके उठते हुये कुचों की उपमा कवि सोच रहा है । उसके कुच ऐसे दिखाई दे रहे हैं, मानों किसी बाला की जड़ाऊ लाल की लॉकट लाकर रख दी हो । उसकी रोमराजि ऐसी शोभा दे रही है मानों चीटियों की पंक्तियां सुशोभित हो रही हों । [११५-११६]

कामदेव को भी मुग्ध करने वाली शशिवृता की नाभि कूप के तुल्य गंभीर है । उसे देखकर चलते हुए भ्रमर भी लालायित हो जाते हैं । उसकी सुन्दर पिण्डलियां इस प्रकार शोभा दे रही हैं, मानों खराद (शान) पर चढाई हुई कामदेव की छुरिया हों । उसके ऊँचे नितम्ब कामदेव के भी मन को लुभाने वाले हैं । वे ऐसे जान पड़ते हैं मानों रम्भा अप्सरा शिव के रथ के सुन्दर चक्र हों । [११७-११८]

शशिवृता के चमकते हुए नख आदि इन्द्र के दर्पण के समान सुशोभित हैं । उसकी ढुलवां एवं रक्त वर्ण की एड़ियों को देखकर कवि उनकी तुलना के लिए उपमा सोचता हुआ कहता है कि वे रक्ताभ कमल की स्निग्ध पंखुड़ियों के समान लगती हैं ।

विशेष—१ 'नितंब तुग'''चक्क संभ के' में उपमान योजना सार्थक नहीं है . महादेव का वाहन रथ न होकर नन्दी है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२. नख-शिख वर्णन शृंगार-रस के उद्दीपन के रूप में है।
३. अलंकार—अनुप्रास, उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक, सन्देह।

## गाथा

पद्मे रष्षत बाले। लग्गा सेनाय पास चिहुं वीरं॥
धरि धीरं तन दुरयं। रोम राजि रोमयं अंचं॥१२१॥

शब्दार्थ—पद्मे—मध्य में। हरष्षत—रखकर। लग्गा सेनाय—सेना लगा दिया। वीरं—वीरचन्द ने। धारि धीरं—धैर्य धारण करके। तन दुरयं—शरीर को छिपाया। रोमचं अंयं—रोमांच हुआ।

सन्दर्भ—इस दोहे में कवि ने वीरचन्द की सेना द्वारा शशिवृता को घेरे, शशिवृता की आकुलता, धैर्य एवं भय के कारण उत्पन्न रोमांच का वर्णन किया है।

व्याख्या—वीरचन्द ने बाला शशिवृता को बीच में रखकर अपनी विशाल सेना को उसके चारों ओर लगा दिया। अर्थात् शशिवृता वीरचन्द की सेना के घेरे में आ गयी। वीरचन्द की सेना के घेरे के मध्य में अपने को देखकर शशिवृता आकुल हो उठी। परन्तु उसने धैर्य धारण किया और अपने शरीर को ढँका। वह नहीं चाहती थी कि वीरचन्द की उसके शरीर पर दृष्टि पड़े। आसन्न विषम परिस्थिति को देखकर भय के कारण शशिवृता को रोमांच हुआ। उसके रोंगटे खड़े हो गये।

अलंकार—१. 'धरि-धीरं' में 'ध' वर्ण की एक बार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास।

२. 'रोम......रोमयं' में 'र' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

३. 'रोमांच' सात्विक भाव है।

४. 'भय' और 'धीरता' की भाव सन्धि दृष्टव्य है।

## दूहा

बाल धरक्कति बचनि गति। ग्यान मोह विष पान॥
त्यों कमधज्जे देपि कै। बर चितै चहुआंन॥१२२॥
शंकर रस आचार किय। मढ़ दिष्षिय प्रति जोइ॥
मन लग्गिय बंधत सु पय। मन कंद्रप रस भोइ॥१२३॥

शब्दार्थ—धरक्कति—कांपती है। बचनि गति—वचनों अर्थात् श्वास की गति से। पान—पीना। ग्यान मोह—ज्ञान के सामने कांपता है। विष पान—विष पान करने में हाथ कांपता है। चितै—चिन्तन करती है। शंकर रस आचार—शंकर का प्रेम और भक्ति से ध्यान किया। मढ़—मन्दिर। दिष्षिय—देखा। प्रति जोइ—प्रत्येक दिशा में। पय—पद, चरण। मन लग्गिय बंधत सु पयं—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



के चरणों में मन को लगन के साथ बाँध दिया। मन कंद्रप रस मोह—मन कामदेव के रस में मग्न हो रहा था।

सन्दर्भ—वीरचन्द को देखकर शशिवृता की जो स्थिति हुई, उसका वर्णन कवि ने इस छन्द में किया है :

शब्दार्थ—वीरचन्द और उसकी सेना का घेरा अपने चारों ओर देखकर बाला शशिवृता का हृदय श्वासों के साथ ही धड़क रहा है। जिस प्रकार ज्ञान के सामने मोह काँपता है और विष-पान करने से पूर्व हाथ कांपता है, उसी प्रकार कमध्वज वीरचन्द को देखकर राजकुमारी शशिवृता भय से काँपती है। वह अपने प्रियतम पृथ्वीराज चौहान का चिन्तन करने लगती है।

हृदय के अत्यधिक भय का संचार होने पर शशिवृता शंकर का प्रेम और भक्ति से भरकर चिन्तन करती और वह मन्दिर की प्रत्येक दिशा में उनको ही देखती है। शशिवृता भाव-द्वन्द्व की स्थिति से ग्रस्त है। एक ओर तो उसने अपने मन को भगवान शिव के चरणों में बांध दिया है, किन्तु दूसरी ओर उसका मन कामदेव के रस में मग्न हो रहा है अर्थात् वह प्रियतम पृथ्वीराज के प्रेम में डूब रही है।

काव्य-सौन्दर्य—१. भाव-सन्धि के अन्तर्गत अनुभावों की सुन्दर योजना हुई है।

२. अलंकार—दृष्टान्त, अनुप्रास।

**कवित्त**

दहति तीन चौंडोल। मध्य चौंडोल बाल भय॥
भमर टोल झंकार। दासि बिंटिय सु पंच सय॥
सित्त पंच असवार। पंति मंडिय चावद्दिसि॥
अद्ध लष्ष पैदल्ल। सथ्थ आयो सुभंग कसि॥
मंगल विपेक विधि उच्चरे। बंधी बंदनमार करि॥
उत्तरी बाल देवल सुढिग। लग्गि पाइ परदच्छि फिरि॥१२४॥

शब्दार्थ—दहति तीन—दस और तीन अर्थात् तेरह। चौंडोल—पालकियाँ, चौंडोल बाल भव—बाला शशिवृता की पालकी थी। टोल—समूह। झंकार—गुन्जार। दासि—दासियाँ। बिंटिय—घेरे हुए थीं। पंच सम—पांच सौ। सित्त पंच—पाँच सौ। पंति मंडिय—पंक्ति बद्ध सुशोभित थे। चावद्दिसि—चारों ओर। लष्ष=लाख। सथ्थ—साथ में। सुभंग कसि—अपने शरीर पर भली प्रकार अस्त्र-शस्त्र सुसज्जित करके। विवेक—ज्ञानी ब्राह्मण। मंगल—मंगल पाठ। विधि—विधिपूर्वक। उच्चरे—उच्चारण कर रहे थे। देवल—देवालय। सुढिग=समीप। लग्गि पाइ=पैर लगाकर। परदच्छि कर=प्रदक्षिणा की।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने शशिवृता का सखियों और सैनिकों के साथ देवालय पहुँचने और देवता की वन्दना के पश्चात् प्रदक्षिणा का वर्णन किया है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



व्याख्या—शशिवृता की पालकी तेरह पालकियों के बीच में चल रही थी। शशिवृता के शरीर से इतनी अधिक सुगन्ध निकल रही थी कि भ्रमरों का समूह उसकी पालकी के चारों ओर गुंडराता हुआ चल रहा था। उसके चारों ओर पांच सौ दासियां फैली हुई थीं और पंक्तिबद्ध पांच सौ असवार चल रहे थे। उसके साथ अस्त्र-शस्त्रों से सजी हुई अर्द्ध लक्ष सेना भी थी। साथ में चलते हुए विद्वान ब्राह्मण विधि पूर्वक मंगल पाठ कर रहे थे। देवालय के द्वार पर वन्दनवारें बंधी हुई थीं। बाला शशिवृता देवालय के समीप अपनी पालकी से उतरती है। वह देवता के चरणों की वन्दना कर देवालय की परिक्रमा करती है।

विशेष—१. शशिवृता पद्मगंधा है। अतः उसके शरीर की सुगन्धि के साथ भ्रमर-समूह लगा हुआ चलता है।

२. ब्राह्मणों का विधि-पूर्वक मंगल पाठ करना, देवालय के द्वार पर वन्दनवार बंधी होना, शशिवृता का मन्दिर की परिक्रमा करना आदि सभी कुछ हमारे सांस्कृतिक वातावरण को प्रस्तुत करता है।

गाथा

जोइज्जै मन चरियं। हरियं एक कग्गयो संवदं ॥
सव सेना मन कमधज्ज। विटे वा बाल सर सायं ॥१२५॥
वर जैचन्द सुबंधं। प्रोहित पंग रध्धयं आइयं ॥
सहचर चारु सुपढियं। हालाहल वालयं मनयं ॥१२६॥

शब्दार्थ—जोइज्जै=जो-जो। मन चरियं=मन में सोच रही थी। हरियं=हरण कर लिया गया। कग्गयो संवदं=कौवे के शब्द ने। विटे=छितराई हुई। सर सायं=सुशोभित हो रही थी। बंधं=भाई। प्रोहित=पुरोहित। पंग=पंगुल राय जयचन्द या वीरचन्द। सहचर चारु=शाखोच्चारण। सुपढियं=पढ़ा जाने लगा। हालाहलं=तीव्र विष। वालयं=बाला शशिवृता ने। मनयं=मन में विचार किया।

सन्दर्भ—इस छन्द में वीरचन्द से घिरी देखकर शशिवृता द्वारा विषपान करने के चिन्तन का कवि ने वर्णन किया है :

व्याख्या—शशिवृता के मन में पृथ्वीराज को लेकर कामनाओं का ऊहापोह चल रहा था। सहसा कौवे की कर्कश आवाज ने शशिवृता के कल्पना-लोक को भंग कर दिया। वह कल्पना लोक से यथार्थ की भूमि पर आ गई। यथार्थ की स्थिति में आते ही उसने अपने को कमधज वीरचन्द की चारों ओर फैली हुई सेना के बीच में पाया। वह उसकी सेना के मध्य में सुशोभित हो रही थी। इतने में पंगुलराय जयचन्द का भाई वीरचन्द पुरोहित के पास आया और शाखोच्चार किया जाने लगा। इस विषम स्थिति को देखकर शशिवृता ने हलाहल पान करने का निश्चय किया।

विशेष—१. शशिवृता के कल्पना-लोक में खोने में वधू बनी हुई युवती के उमंगों का कवि ने स्वाभाविक वर्णन किया है।

२. भाव-सन्धि दृष्टव्य है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३. छन्द गाथा—यह प्राकृत का प्रसिद्ध छन्द है। इसमें १५, १२ पर यदि देकर २८ मात्राएँ होती हैं।

दूहा

चढ्यौ पुंज नव साज वर। अरु भर लिन्ने सथ्थ।
संभु थांन पूजन मिसह। चलि वर आयौ तथ्थ ॥१२७॥
तव लगि दल चहुआंन के। ग्रह गुपंति कर आइ।
रुक्कि सकै नन मध्य लिये। बोले संमुह धाइ ॥१२८॥

शब्दार्थ—पुंज=शशिवृता का पिता। नव साज वर=नये युद्ध की सज्जा करके। भर=योद्धा। लिन्ने=ले लिए। मिहस=बहाने से। वर=दूल्हा वीरचन्द। तथ्थ=वहां, उस। गुपंति कर=देवालय को घेरा लिया। रुक्कि=रुके, रोक सके। नन=नहीं।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने शशिवृता के पिता पुंज के देवालय पहुंचने और पृथ्वीराज की सेना द्वारा देवालय को चारों ओर से घेरने के प्रसंग का वर्णन किया है :

व्याख्या—शशिवृता के पिता पुंज को यह ज्ञात हुआ कि दूल्हा वीरचन्द भगवान शंकर की आराधना के बहाने वहां देवालय में पहुंच गया है, जहां कि शशिवृता गौरी पूजन के निमित्त गई है। अतः युद्ध की आशंका से उसने युद्ध सज्जा से अपनी सेना को सजाया और उसे लेकर हरसिद्धि देवालय पहुंच गया। इतने में ही वीर पृथ्वीराज चौहान की सेना ने आकर देवालय को चारों ओर से घेर लिया। पृथ्वीराज चौहान की सेना में ऐसे-ऐसे वीर योद्धा थे, जिनको देवालय के मध्य भाग में पहुंचने से कोई रोक नहीं सकता था। वे सामने होकर अपने विपक्षी को ललकारने में सक्षम थे।

विशेष—यहां कवि आगामी भीषण युद्ध की भूमिका प्रस्तुत कर देता है।

कवित्त

सहस सत्त कप्परिय। भेष कीनो तिन धारं ॥
गोप तेग गहि गुपत। कपट कावरि सब भारं ॥
किहुन फरस किहु छुरी। चक्र तिन हाथन माही ॥
किन त्रिसूल किन डंड। सिंग सब सथ्थ समाही ॥
सा अंग सिद्ध चाहुआंन लैं। दूतन दूत बताइ हरि ॥
सा अग बाल उतकंठ करि। पैं लग्गी परदच्छि फिरि ॥१२९॥

शब्दार्थ—सहस सत्त कप्परिय=सात सहस योद्धा कपाली वेश धारण किये हुए थे। गोप=गुप्त, छिपाकर। तेग=तलवारें। कपट कावरि सब भारं=सबके कंधों पर दिखावटी कावरें थीं। किहुन=किसी ने। दण्ड=डण्डा। सिंग सब सथ्थ समाही=सिंह के समान वीर सभी देवालय के भीतर प्रवेश कर गये। सा अंग सिद्ध चाहुआन लैं=पृथ्वीराज चौहान ने सिद्ध का वेष धारण कर रखा था। दूतन-दूत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



बताइ हरि=दूतों ने वह स्थान बता दिया, जहां भगवान शिव की मूर्ति विराजमान थी। पैं लग्गी=पैर छूकर। "सो अंग······फिरि"=पृथ्वीराज ने देखा कि वह बाला शशिवृता बड़ी उत्कण्ठा से भगवान शिव के चरण छूकर प्रदक्षिणा कर रही है।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने पृथ्वीराज और उसके सामन्तों का कापालिकों के वेश में देवालय में पहुँच जाने का वर्णन किया है :

व्याख्या—पृथ्वीराज की सेना के सहस्रों वीरों ने उसी समय कापालिकों का वेश धारण किया। उनमें से कुछ वीरों ने गुप्त तलवारें गुप्त रूप से धारण कर रखी थीं। सभी के कन्धों पर दिखावटी कावरें थीं। कुछ वीरों ने परशु धारण किये और कुछ ने छुरियां लीं। कुछ के हाथों में चक्र थे और कुछ लोगों ने त्रिशूल धारण कर रखे थे।

चौहान राजा पृथ्वीराज ने सिद्ध का वेश धारण कर रखा था। इन लोगों के मन्दिर में प्रवेश करते ही दूतों ने इन्हें वह स्थान बता दिया, जहां पर भगवान शिव की मूर्ति विराजमान थी। वहां जाकर पृथ्वीराज देखते हैं कि वह बाला शशिवृता बड़ी उत्कण्ठा से भगवान शिव के चरण स्पर्श कर प्रदक्षिणा कर रही है।

विशेष—'कपट कावरि'—बद्रीनाथ से लौटे हुये तीर्थ यात्री भगवान शंकर पर चढ़ाने के लिये जल की कांवरें लाते हैं। पृथ्वीराज के सामन्तों ने कांवरें इस लिये धारण कर रखी थीं जिससे उनको तीर्थाटन करने वाला साधू समझा जाय। यहां पृथ्वीराज ने भेद-नीति का आश्रय लिया है।

## अरिल्ल

फिरि परदच्छि बाल अपु लग्गी ।।
सुमन काम कामना सुलग्गी ।।
मन मन बंधि कियौ हथ लेवं ।।
सुमन मन्त्र प्रारम्भ सुदेवं ।।१२०।।

शब्दार्थ—अपु लग्गी=अपना माथा टेक दिया। सुमन—पुष्पों के समान कोमल। कांम-कामना—काम-वासना। हथ लेवं—हाथ में हाथ लेना। सुदेवं—देवता शंकर।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने शशिवृता द्वारा शंकर की त्रिविधि पूजा का वर्णन किया है :

व्याख्या—प्रदक्षिणा करने के पश्चात् बाला शशिवृता ने भगवान शिव की मूर्ति के सामने अपना मस्तक टेक दिया। इस समय उसके मन में पुष्प के समान कोमल कामेच्छा जाग गयी। उसने अपना मन भगवान शिव के ध्यान में अनेक प्रकार बांध दिया। फिर हाथों में पुष्प लेकर देवता शंकर के स्तुतिपरक मंत्रों का उच्चारण किया।

विशेष—१. यहां वैष्णवीय पूजा विधि का वर्णन किया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२. अलंकार—'सुमन काम कामना' में उपमा।

३. "मन-मन'''हथलेव"—इस पंक्ति का निम्न प्रकार भावपूर्ण अर्थ किया जा सकता है :

"शशिवृता ने अपने मन को पृथ्वीराज के मन से बांध दिया और फिर मन ही मन हथलेवा किया।" [भावरों के समय वर वधू का हाथ अपने हाथ में लेता है, इसे 'हथलेवा' कहते हैं।

## दूहा

उतरि बाल चौंडोल तें। प्रीत प्रात्त छुटि लाज ॥
शिवहिं पूजि अस्तुति करी। मिलन करें प्रथुराज ॥१३१॥

शब्दार्थ—प्रीत प्रात्त=प्रेम को प्राप्त करने के लिए। छुटि लाज= लज्जा का परित्याग कर दिया।

सन्दर्भ—इस छन्द में शशिवृता शिव से पृथ्वीराज को बारम्बार वर रूप में मांगती है :

व्याख्या—बाला शशिवृता पालकी से उतरी। पृथ्वीराज का प्रेम प्राप्त करने के लिये उसने अपनी लज्जा का परित्याग कर दिया था। भगवान शंकर की पूजा करने के पश्चात् उसने स्तुति की। उसने स्तुति में बारम्बारता पृथ्वीराज को वर रूप में मांगा।

विशेष—१. छन्द संख्या १२४ में कवि शशिवृता को पालकी से उतार कर देवालय की प्रदक्षिणा करा चुका है। यहां वह पुनः उसे 'पालकी' से उतरने का वर्णन करता है। ऐसा ही स्थल 'रासो' की प्रामाणिकता पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं।

२. विवाही जाने वाली युवती की अभिलाषाओं का मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है।

## कवित्त

सहज सत्त कप्परिय। भेष कीनों तिन बारं ॥
कपट कंध कावरिय। धसिय देवी दरवारं ॥
सर्ब शस्त्र आरम्भ। हस्त आरम्भ सुरी सल ॥
धसिय भीर सन्मूह। जूह पाई समंडि कल।
दलप्रबल उदधिजयों मथन कज। भुज सुकिस्न चहुआंन किय ॥
शशिव्रत बाल रंभह समह। मिलिर गंठि बंधन सुहिय ॥१३२॥

शब्दार्थ—सहस सत्त कप्परिय=सात सहस्र कापालिक। तिन बारं=उस समय। कपट कंध कावरिय=कन्धे पर दिखावटी कांवरे। धसिय=प्रवेश कर गये। देवी दरवारं=देवी के मन्दिर के भीतर। सर्व शास्त्र प्रारम्भ=सभी शास्त्रों से युद्ध करने लगे। सुरीसल=बहुत अधिक क्रोध के साथ। समंडि कल= उपयुक्त मोर्चा देखते हुए छा गये। उदधि ज्यों= समुन्द्र के समान। मथन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



कज— मंथन करने के लिये । सुकिस्न— विराट रूप धारी कृष्ण । रंभह समह— रंभा अप्सरा के समान । 'भिलिय···सुहिय'—शशिवृता तथा पृथ्वीराज दोनों के मिलने पर उनके शुभ हृदयों का उसी समय गठ बन्धन हो गया ।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने पृथ्वीराज के सेना-सहित मन्दिर में प्रवेश करने और शशिवृता की प्राप्ति के लिए युद्ध प्रारम्भ करने के प्रसंग का वर्णन किया है :

व्याख्या—उसी समय पृथ्वीराज की सेना में से सात सहस्र वीरों ने कापालिक का वेष धारण किया । दिखावटी कांवरे अपने कन्धों पर धारण किये हुए थे। अर्थात् तीर्थयात्री साधु का वेष उन्होंने मन्दिर में प्रवेश करने के लिये धारण कर लिया था । वे सभी देवी के मन्दिर में प्रविष्ट हो गये । क्रोधित होकर सभी ने शस्त्राघात करते हुए युद्ध प्रारम्भ कर दिया । पृथ्वीराज के समस्त वीरों का समूह भीड़ को चीरता हुआ मन्दिर में प्रविष्ट होकर उपयुक्त मोर्चों पर छा गया । पृथ्वीराज चौहान ने उदधि के समान उमड़ती हुई प्रबल सेना का मंथन करने के लिए अपनी भुजाओं को विराट रूप धारी कृष्ण की भुजाओं के समान बना लिया । इन्हीं भुजाओं के बल पर उसे रम्भा के समान सुन्दरी शशिवृता प्राप्त हुई । शशिवृता तथा पृथ्वीराज दोनों के मिलने पर उनके शुभ हृदयों का उसी समय गठ बन्धन हो गया ।

विशेष—१. इस प्रसंग को कवित्त संख्या १२६ में भी कहा जा चुका है। अतः दोनों में से एक कवित्त प्रक्षिप्त है ।

२. अलंकार—(क) "दल प्रबल···कज" में उपमा ।

(ख) "भुज सुकिस्न···किय" में उपमा ।

३. 'किस्न' का तत्सम रूप है ।

## कवित्त

दिट्ठि दिट्ठि लग्गी समूह । उतकंठ सु भग्गिय ॥<br>
निष लज्जानिय नयन । मथन माया रस पग्गिय ॥<br>
छल बल कल चहुआंन । वाल कुअंरप्पन भंजै ॥<br>
दोष बीय मिट्यौ । उभय भरि मन रंजे ॥<br>
चोहान हथ्य वाला गहिय । सो ओपम कविचन्द कहि ॥<br>
मानो कि लता कचन लहरि । मत्त वीर गजराज गहि ॥१३३॥

शब्दार्थ—समूह—सामने । दिठ्ठ दिठ्ठ लग्गी समूह – आमना-सामना होने पर दृष्टि से दृष्टि लगी । उतकंठ सु भग्गिय=शशिवृता की उत्कंठा अर्थात् प्रतीक्षा की घड़िया समाप्त हो गयीं । निष=समीप में । लज्जानिय नयन=नेत्र लजा गये। मदन माया=कामदेव की माया अर्थात् काम की मुग्धता । पग्गिय=सराबोर हो गये । कल—सुन्दरा । कुअरप्पन=कौमार्य भंजै=समाप्त कर दिया । मिट्टयौ=समाप्त हो गया । उभय=दोनों में । भरी—बहुत अधिक । मन रंजै—प्रसन्न हुए । ओपम=उपमा । गहिय=पकड़ ली ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**सन्दर्भ**—इस छन्द में कवि ने पृथ्वीराज और शशिवृता के दृष्टि-मिलन और पृथ्वीराज के द्वारा पकड़ने पर शशिवृता की दशा का वर्णन किया है :

**व्याख्या**—पृथ्वीराज और शशिवृता का आमना-सामना होता है। परस्पर दृष्टि मिलते ही शशिवृता की प्रतीक्षा की घड़ियाँ समाप्त हो जाती हैं। प्रियतम पृथ्वीराज को समीप देखकर बाला, शशिवृता के नेत्र लज्जा से भर जाते हैं। दोनों के हृदय कामदेव की माया (प्रेम) के रस में सराबोर हो गये। पृथ्वीराज चौहान ने छल-बल पूर्वक राजकुमारी शशिवृता के कौमार्य को समाप्त कर दिया। कुमारी शशिवृता को कुवाँरपने में प्रेम करने का दोष लग गया था। कुमारी अवस्था में हृदय में काम-वासना का प्रवेश होने के कारण शशिवृता सदोषता थी, परन्तु अब उसे वही पति रूप में प्राप्त हो गया, जिसके लिये कि उसके हृदय में कामेच्छा जागृत हुई थी अतः उसका दोष मिट गया।

शशिवृता और पृथ्वीराज दोनों के हृदय उस समय अत्यधिक प्रसन्न हुए। जिस समय शशिवृता बाला को अपने हाथ से पृथ्वीराज ने पकड़ा, उसकी उपमा देता हुआ कवि कहता है कि उस समय ऐसा लगा, मानों श्रेष्ठ मतवाले हाथी ने लहराती हुई स्वर्ण-लता को पकड़ लिया हो।

**काव्य सौन्दर्य**—१. काव्य-सौन्दर्य और रस-निष्पत्ति की दृष्टि से यह छप्पय बहुत सुन्दर बन पड़ा है। परस्पर दृष्टि-मिलन, शशिवृता के नेत्रों का लज्जा से नमित होना, दोनों का कामदेव की माया में पगना, चौहान पृथ्वीराज तथा शशिवृता का कौमार्य भंग होना, दोनों के हृदय का आल्हादित होना आदि में संयोग-शृंगार की सुन्दर निष्पत्ति है। अनुभावों की योजना है। यहां गुण-श्रवण के आधार पर उत्पन्न पूर्वराम स्थायी प्रेम में परिणत हो जाता है।

२. अलंकार—(क) अनुप्रास।

(ख) "मानो कि लता···गजराज गहि" में वस्तुत्प्रेक्षा।

[शशिवृता लहराती हुई कंचन लता और पृथ्वीराज में मत्त गजराज की संभावना की गई है।]

## चन्द्रायना

गहत बाल पिय पानि। सु गुर जन संभरे ॥
लोचन मोचि सुरंग। सु अंसु बहे परे ॥
अपमंगल जिय जानि। सु नेंन मुष बही ॥
मनों पंजन मुष मुत्ति। भरक्कत नपही ॥१३४॥

**शब्दार्थ**—पानि—हाथ। सु—उसके, शशिवृता के। संभरे—युद्ध करने के लिये प्रस्तुत हो गये। मोचि—छुड़ाकर। सुन्दर रंगों को। अंसु—आंसू। परे—बहुत अधिक मात्रा में। अपमंगल—अपना कल्याण। नेंन मुष—नेत्र-मार्ग से। पंजन—खंजन पक्षी। मुष—मुख। मुत्ति—मोती। भरक्कत—भर-भर कर। नंदहीं—डाल रहे हों।

**सन्दर्भ** पृथ्वीराज जैसे ही शशिवृता को पकड़ता है, हर्षातिरेक में उसके नेत्रों से अश्रु-धारा प्रवाहित हो आती है। कवि ने इस छन्द में शशिवृता की इसी स्थिति का वर्णन किया है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



व्याख्या—पृथ्वीराज ने शशिवृता का हाथ जैसे ही पकड़ा, शशिवृता के पक्ष के तथा अन्य लोग युद्ध के लिये प्रस्तुत हो गये । [यहां अश्रु आने के कई कारण उपस्थित हैं। युद्ध की स्थिति भय का संचार कर आंसू लाती है, परिजनों से स्थायी वियोग जानकर शशिवृता के नेत्रों में आंसू आ जाते हैं। अपने अभिलाषित प्रियतम की प्राप्ति उसके नेत्रों में हर्ष के आँसू ला देती है।] शशिवृता के नेत्रों से निकले हुए आंसू उसके नेत्रों के सुन्दर रंगों को छुड़ाते हुये प्रचुर मात्रा में बहने लगते हैं। शशिवृता ने शृंगार करते समय अपने नेत्रों के चारों ओर सुन्दर रंगों की चित्र-रचना की थी, आंसू उसे मिटा देते हैं।

शशिवृता ने हृदय में भली प्रकार जान लिया था कि पृथ्वीराज के द्वारा उसका हरण अपना ही मंगल है। इसी के हर्ष में उसके नेत्रों से जो आंसू निकल रहे हैं, वह मानों उसका मंगल हो नेत्र-मार्गों से बह रहा हो

शशिवृता के नेत्रों से गिरती हुई अश्रु-लड़ियों को देखकर ऐसा लगता था, मानों खंजन पक्षी अपने मुख में मुक्ता भर-भर कर डाल रहे हों।

काव्य सौन्दर्य—१. संयोग शृंगार—शशिवृता आश्रय और पृथ्वीराज आलम्बन हैं। सात्विक भावों की सुन्दर योजना है।

२. अलंकार—अनुप्रास, उत्प्रेक्षा, रूपक।

## चन्द्रायना

दुहु कपोल कल भेद। सुरंग ढरक्कही ॥<br>
सज्जन बाल बिसाल। सु उरज षरक्कही ॥<br>
सी ओपम कवि चन्द। चित्त में बस रही ॥<br>
मनु कनक कसौटी मंडि। भृग मद कस रही ॥१३५॥

शब्दार्थ—कल=सुन्दर। सुरंग=सुन्दर रंग के आंसू। ढरक्कही=ढल रहे हैं, बह रहे हैं। उरज=कुच। सरक्कही=टूट जाते हैं। ओपम=उपमा। मृग मद कस रही=कस्तूरी कसी जा रही हो।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने शशिवृता के नेत्रों से अश्रु ढलकने और बहने तथा उरोजों पर गिरकर उनके चूर-चूर होने में सौन्दर्य का वर्णन किया है :

व्याख्या—शशिवृता के नेत्रों से सुन्दर आंसू निकल रहे हैं। वे नेत्रों से निकलकर उसके सुकुमार कपोलों पर ढुलक पड़ते हैं। कपोलों से आगे बढ़ कर वे आंसू उस सुन्दरी बाला के विशाल हृदय पर स्थित उन्नत और पुष्ट उरोजों से आकर टकराते हैं और टकराकर चूर-चूर हो जाते हैं।

आंसुओं के कुचों पर टकराकर टूटने की उपमा देता हुआ कवि चन्द कहता है कि उस समय ऐसा लग रहा था, मानों स्वर्ग की कसौटी पर कस्तूरी कसी जा रही हो।

विशेष—१. कुचों से टकराकर आँसुओं के चूर-चूर होकर नष्ट होने से सर्वथा मौलिक कल्पना है। भाव-साम्य निम्न उदाहरण में दृष्टव्य है :

"पयोधरोत्सेधनिपात चूर्णिता"—कालीदास (कुमार संभव)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२. अलंकार— अनुप्रास, उत्प्रेक्षा।

गाथा

मृग मद कसयति चित्ते। मित्तं पुनरोपि चित्तयं वसयं ।।
अजहूँ कन्ह वियोगे। कालिंदी कन्हयो नीरं ।।१३६।।

शब्दार्थ— मृगमद कसयति=हरिण जिसके अन्दर कस्तूरी है। मित्तं=मित्र अर्थात् प्रियतम पृथ्वीराज। चित्तयं वसयं=हृदय में बसा हुआ था। कान्ह=कृष्ण। अजहूँ=अब भी। कान्ह=कृष्ण। कलिंदी=यमुना। कन्हयो=कृष्ण वर्ण का। नीरं=जल।

सन्दर्भ— अब तक पृथ्वीराज के हृदय में बसे होने पर भी शशिवृता उनको दूर मानती थी, परन्तु आज प्रथम मिलन के अवसर पर ही वे हृदय में बस गये। कवि ने इस छन्द में शशिवृता के हृदय की इसी स्थिति का निरूपण किया है :

व्याख्या—कस्तूरी यद्यपि मृग की नाभि में बसती है, परन्तु वह उसे वन की घास में खोजता फिरता है। इसी प्रकार शशिवृता का प्रियतम पृथ्वीराज यद्यपि उसके हृदय में ही बसा हुआ था, परन्तु वह उसे अपने से दूर मानती थी। आज प्रथम मिलन में ही पृथ्वीराज उसके हृदय में पुनः बस गया।

यह यथार्थ सत्य है कि प्रिय के दूर रहने पर उसकी प्रेयसी की दयनीय स्थिति हो जाती है। कृष्ण के वियोग में यमुना का जल आज भी काला हो रहा है।

विशेष— १. प्रेम की अनन्यता का यथार्थ चित्र यहाँ कवि ने दृष्टान्त के द्वारा उपस्थित कर दिया है। प्रेमी परस्पर दूर होते हुए भी समीप रहते हैं।

२. अलंकार—दृष्टान्त।

३. रस— संयोग श्रृंगार।

गाथा

गहियं गह गह कंठी। बचनं संजनाइ मिठ्ठयो कहियं ।।
जानिज्जै सतपत्तं। बंधे सदाइ भवरयं गहियं ।।१३७।।

शब्दार्थ— गहियं=पकड़ने पर। गह गह कंठी=शशिवृता का कंठ गद्गद् हो गया। सजनाइ=साजन से, प्रियतम पृथ्वीराज से। मिठ्ठये=मधुर। कहियं=कहे। जानिज्जै=मानों। सतपत्तं=कमल। बंधे सदाइ भवरयं ग्रहियं=मानों बन्द कमल में स्थित भ्रमर गुंजन कर रहा हो।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने पृथ्वीराज और शशिवृता के प्रथम मिलन के अवसर पर भावमय स्थिति का चित्रण किया है :

व्याख्या— पृथ्वीराज के हाथ पकड़ने पर शशिवृता का कंठ गद्गद् हो गया। वह प्रियतम पृथ्वीराज से मधुर वचन बोलने लगी। शशिवृता का मंद स्वर इतना मधुर था, मानों कमल के भीतर बन्द भ्रमर गुंजार कर रहा हो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



काव्य सौन्दर्य—१. अलंकार (क) 'गहियं गह गह' में 'ग' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

(ख) "जानिज्जै सतपत्रं······गहियं" में उत्प्रेक्षा। यहां शशिवृता का मुख बन्द कमल और मन्द मधुर वचन भ्रमरों की गुंजार है।

२. संयोग-श्रृंगार—'गहियं गह गह कंठी' में सात्विक अनुभाव की सुन्दर योजना है।

गाथा

तपतं दिल में रहियं। अंग तपताइ उप्परं होइ॥
जानिज्जै कसु लालं। घटनो अंग एक्यो सरिसो॥१२८॥

शब्दार्थ—तपतं—सन्ताप, ताप, विरह का ताप। रहियं—रहता है। अंग तपताइ—शरीर का ताप। जानिज्जै—मानों, जैसे। कसु लालं—कुकलाल, कुम्भकार। घटनो—घड़ा। एक्यो—एकसा।

सन्दर्भ—इस छन्द में प्रथम साक्षात्कार के अवसर पर कवि ने शशिवृता के हृदय की दशा का वर्णन किया है:

व्याख्या—हृदय का विरह-जन्य ताप हृदय में ही रहता है। जबकि शारीरिक ताप बाहरी होता है। जैसे कुम्भकार का घट नष्ट होने पर भी उसका बाहरी रूप वैसा ही बना रहता है, ठीक इसी प्रकार की स्थिति शशिवृता की थी। भाव यह है कि शशिवृता बहुत दिनों से अपने प्रियतम के वियोग के कारण संतप्त थी, किन्तु आज प्रथम साक्षात्कार के अवसर पर जहां बाहर से वह आल्हादित दीखती थी, वहाँ हृदय वियोग के सन्ताप से भरा हुआ था।

विशेष—१. संयोग शृंगार के अन्तर्गत प्रथम मिलन के अवसर पर नायिका की दशा का अनुभूति पूर्ण निरूपण हुआ है।

२. 'जानिज्जै···सरिसो' में उपमा अलंकार।

गाथा

अपमंगल अल आले। नेनं नषाइ नष किसलयो॥
जानिज्जै धन कृपनं। सपनंतरों दत्तयं धनय॥१२९॥

शब्दार्थ—अपमंगल—अपने मंगल के समय। अल—अलि, सखी। नेनं नषाइ—नेत्रों के समीप आने पर। नष—नखरा। किसलयो—क्यों करती है। कृपनं—कंजूस। सपनंतरों दत्तत धनयं—स्वप्न में दिये गये धन के समान।

संदर्भ—यहां शशिवृता की एक सखी उससे चुहल करती हुई कहती है कि प्रथम मिलन के इस मंगलमय अवसर पर उसे प्रियतम से नखरा नहीं करना चाहिए।

व्याख्या—हे सखी! अपने मंगल के समय प्रियतम के सामने होने पर तुम नखरा किस लिये कर रही हो। जिस प्रकार एक कंजूस अत्यधिक मात्रा में धन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



रखते हुए भी उसका देना स्वप्न के समान समझता है, उसी प्रकार तेरी कृत्रिम अनिच्छा कृपण के समान हो रही है।

काव्य-सौन्दर्य—१. संयोग-शृंगार।

२. अलंकार—(क) 'नेन···नद' में 'न' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

(ख) दूसरी पंक्ति में उपमा अलंकार है।

कवित्त

गहि शशिवृत नरिंदं। सिढि लघंत ढहि थोरी॥
काम लता कल्हरी। पेम मारुत झकझोरी॥
बर लीनी करि साहि। चंपि उर पुट्ठि लगाई॥
मन सुरंग सोइ बत्त। कन लगि कान सुनई॥
नृप भयो रुद्द करुना सुत्रिय। बीर भोग वर सुभर गति॥
सगपन सुहास बीभच्छरिन। भय भयान कमधज्ज दुति॥१५०॥

शब्दार्थ—गहि—पकड़कर। नरिंदं—राजा पृथ्वीराज। सिढि—सोपान। ढहि थोरी—तनिक पीछे हटी। 'गहि शशिवृता नरिंदं···थोरी—सीढ़ियों को लांघते हुये पृथ्वीराज ने कुछ पीछे हटती हुई शशिवृता को पकड़ लिया। कल्हरी—कोमल। प्रेम मारुत—प्रेम रूपी पवन। बर—दूलह पृथ्वीराज। करि साहि—हाथ पकड़ कर। 'बर लीनी करि साहि'—दूल्हा पृथ्वीराज ने उसे हाथ से पकड़ लिया। चंपि—शीघ्रता से। पुट्ठि लगाई—पीठ से लगा ली, घोड़े पर चढ़ाली। 'चंपि···उर···लगाई'—हृदय से लगाकर घोड़े की पीठ पर बिठा लिया। मन सुरंग सोई बत्त—मन की सुन्दर बात। रुद्द—रौद्र रस। सुत्रिय—स्त्री शशिवृता में। वीर-भोग—वीर रस की निष्पत्ति। सुभर—योद्धा, सामन्त। सगपन—सगे सम्बन्धी। सुहास—हास्य रस। वीभछ—वीभत्स। रिन, युद्ध, रण। भय भयान—भयानक रस हुआ।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने पृथ्वीराज द्वारा शशिवृता को पकड़ कर घोड़े पर बिठाने के समय शशिवृता तथा अन्य लोगों पर पड़े प्रभाव का वर्णन किया है :

व्याख्या—सीढ़ियों को लांघते हुए पृथ्वीराज ने जैसे ही शशिवृता को हाथ से पकड़ा, वह लजाकर कुछ पीछे की ओर हटी, परन्तु पृथ्वीराज ने उसे द्रुत गति से पकड़ लिया। ऐसा लगता था मानों कोमल काम की लता को प्रेम रूपी पवन ने झकझोर दिया है। [शशिवृता पृथ्वीराज द्वारा पकड़ते ही कम्पायमान हो गई।]

दूल्हा पृथ्वीराज ने बलपूर्वक हाथ से उसे पकड़कर हृदय से लगाकर घोड़े की पीठ पर बिठा लिया। प्रियतमा शशिवृता ने अपने मन की बात प्रियतम पृथ्वीराज के कान में कह दी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शशिवृता को हरण कर घोड़े की पीठ पर बिठाते समय पृथ्वीराज में रौद्र रस का उदय हो रहा था, जबकि नारी शशिवृता करुण रस में पगी हुई थी [उसे परिजनों से बिछुड़ने की करुणा थी] वीर सामन्तों में वीर रस का संचार हो गया। वे युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गये। इस अद्भुत घटना को देखकर शशिवृता के सम्बन्धियों में हास्य-रस-युद्ध में वीभत्स-रस तथा कमधज वीरचन्द में भयानक रस निष्पन्न हुआ। अनायास घटित घटना से वीरचन्द भयभीत हो गया।

काव्य सौन्दर्य—१. शृंगार-रस के अन्तर्गत अन्य रसों की स्थिति कवि ने बड़े कौशल से दिखाई है।

२. अलंकार—(क) 'कामलता कल्हरी' में उत्प्रेक्षा।

(ख) 'प्रेम-मारुत' में रूपक।

## दूहा

बीर गत्ति संधिय सुमति। वृत अवृत न जाइ॥
घरी एक आवृत रषि। सुत्रर बाल अनुराइ॥१४१॥

शब्दार्थ—गत्ति—मति। संधिय—साधना की थी। सुमति—श्रेष्ठ मति वाले। वृत—व्रत, प्रतिज्ञा। आवृत—निष्फल। आवृत्त रषि—घेरे रखा। सुत्रर—उस समय। बाल अनुराइ—वाला शशिवृता सहित राजा पृथ्वीराज को।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने पृथ्वीराज के युद्ध में विजयी होकर ही जाने के व्रत का उल्लेख किया है :

व्याख्या—पृथ्वीराज शशिवृता को घोड़े पर बिठालकर तत्काल चल नहीं दिया। श्रेष्ठ मति वाले ने वीरगति की साधना की थी। उसने युद्ध करने का व्रत रखा था। अतः वह बिना युद्ध के जाना नहीं चाहता था। उसका वीर व्रत निष्फल न हो जाय इसलिये वह वहीं डटा रहा। विपक्षी वीरों ने उस समय वाला शशिवृता सहित पृथ्वीराज को एक घड़ी भर घेरे रखा।

विशेष—१. पृथ्वीराज का वीर चरित्र प्रकाशित हुआ है।

२. अलंकार—अनुप्रास।

३. 'वृत्त' 'अवृत' और 'आवृत' में ध्वन्यात्मकता है।

## दूहा

बाल स बैर स बैर त्रिय। भान विरद्ध न कीन॥
सकल सेन साधन घरी। कलहंकृत गति चीन्ह॥१४२॥

शब्दार्थ—बाल स बैर—बाला शशिवृता का मंगल अवसर। बैर त्रिय—बाला शशिवृता को हरण करने के कारण शत्रुता। भान विरद्ध न कीन—राजा भान ने विरोध नहीं किया। साधन घरी—शस्त्र परीक्षा की घड़ी। कलहंकृत—कलह पूर्ण। चीन्ह—पहचाना, अनुसरण किया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सन्दर्भ—इस दोहे में कवि ने स्पष्ट किया है कि शशिवृता के अपहरण के अवसर पर यद्यपि राजा भान विरोध नहीं करते, परन्तु अन्य लोग शस्त्र-परीक्षा के लिये उसे घेर लेते हैं :

व्याख्या—बाला शशिवृता का मंगल अवसर जानकर अपहरण के कारण शत्रुता का बदला भी राजा भान ने नहीं लिया। उसने पृथ्वीराज का किसी प्रकार का विरोध नहीं किया। किन्तु अन्य विपक्षी वीरों अर्थात् वीरचन्द्र के सैनिकों ने शास्त्र-परीक्षा की घड़ी जानकर कलह-पूर्ण मार्ग का अनुसरण कर युद्ध प्रारम्भ कर दिया।

अलंकार—'स बैर' (शुभ वेला) 'स-बैर' (वह शत्रुता) में यमक अलंकार।

## अरिल्ल

आवृंत्त वृत्त गुह निग्रह राज। देव जुद्ध देवत्तह साज ॥
है गै दल सज्जै तिहि बीर। हरे बाल चहुआंन सधीर ॥१४३॥

शब्दार्थ—आवृत्त – घिरा हुआ। बृत्त—व्रत। गुन—समझकर। निग्रह—डटे रहे। राज—राजा पृथ्वीराज। देव जुद्ध – युद्ध में देवताओं के समान। देवत्तह साज —सज्जा भी देवताओं के समान। है गै दल—अश्व सेना और गज-सेना। बीर—वीरचन्द। सधीर—धैर्यशाली।

सन्दर्भ—इस दोहे में पृथ्वीराज के युद्ध के लिये डटे रहने और वीरचन्द के सेना सजाने के प्रसंग का वर्णन किया है :

व्याख्या—राजा पृथ्वीराज विपक्षियों से गिरे होने पर भी अपने वीर व्रत का स्मरण कर डटे रहे। वे युद्ध में देवताओं के समान पराक्रमी थे। उनकी युद्ध-सज्जा भी देवताओं के समान थी। उस समय धैर्यशाली पृथ्वीराज द्वारा शशिवृता का हरण देखकर वीरचन्द युद्ध के लिये अपनी अश्व-सेना और गजसेना को सजाने लगा।

१. अलंकार—(क) 'आवृत-वृत' में अनुप्रास (ख) 'देव…साज' में उपमा।

## कवित्त

सबर बीर कमधज्ज। अरघ अप्पिय षग मग्गं ॥
इष अच्छित उच्छरिहि। जानि परिमाननमग्गं ॥
सार धार पुंषियै। बीर मंगल उच्चारं ॥
सबै साथ बंदियहि। सकल पूजा संभारं ॥
बर मुक्कि बरन बरनी सुबर। इह अपुब्ब पिष्यौ सयन ॥
अप्पनौ बीर सिंगार संग। रुद्र बीर चोरी सयन ॥१४४॥

शब्दार्थ सबर—उस समय। अरघ—अर्घ्य। अप्पिय—अर्पण करने वाला। षग मग्गं— तलवार के मार्ग से, तलवार द्वारा। 'सबर बीर……मग्गं'—इस समय वीरचन्द अपनी तलवार से अर्घ्य अर्पण करने लगा। इष—बाण।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



अच्छिन्न—अबाध गति से। उच्छरिहि—उछाला जा रहा था। परिमानन मग्गं—अत्यधिक मात्रा में। सार धार—तलवार की धार। पुंषियं—पक्षीगण। मंगल उच्चारं—स्तुति-पाठ कहना। वदियहि—वन्दना की। सर्व साथ—समस्त साथी। पूजा संभारं—पूजा की सामग्री। वर—दूल्हा वीरचन्द। वरन—वरण। मुक्कि—छोड़ दिया। वरनी—वरण करने के योग्य, दुलहन शशिवृता। इह—इस अवसर पर। अपुव्व—अलौकिक। दिष्यौ—देखा गया। 'वर मुक्कि······सुवर'—उस समय दूल्हा वीरचन्द ने दुलहिन शशिवृता का वरण करने की इच्छा छोड़ दी। 'इह अपुव्व······नयन'—इस समय वह अलौकिक वीर के रूप में देखा गया। उपन्नो—उत्पन्न हुआ। चौरी—विवाह-मण्डप। चौरी सवन—युद्ध स्थल ही विवाह-मण्डप बन गया।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने पृथ्वीराज और वीरचन्द के भीषण युद्ध में वीरचन्द की वीरता का वर्णन किया है :

व्याख्या—भीषण युद्ध प्रारम्भ हो गया। इस समय वीरचन्द अपनी तलवार से अर्घ्य अर्पण करने लगा। वाणों की निरन्तर वर्षा होने लगी। उनके लगने से योद्धाओं के शरीर से रक्त प्रभूत मात्रा में उछलकर निकलने लगा। तलवार तथा अन्य शस्त्रों की वर्षा प्रारम्भ हो गई। जिस प्रकार चारण युद्ध में वीरों की स्तुति का गान करते हैं, उसी प्रकार पक्षियों का कलरव ही वहां पर मंगल गान बन गया। समस्त साथी मिलकर वन्दना करने लगे। उस समय समस्त सामग्री के साथ मानों वही पूजा थी।

वर वीरचन्द ने उस समय भीषण संग्राम करते हुये वधू शशिवृता के वरण की आकांक्षा छोड़ दी। वह युद्ध करता हुआ अलौकिक वीर दिखाई पड़ रहा था। वीरचन्द दूल्हा वेश में था, अतः वह वीर सामन्त शृंगार की सज्जा से युक्त था। परन्तु युद्ध करते हुये उससे वीर और रौद्र-रस की वर्षा हो रही थी। उसके लिए युद्ध स्थल ही विवाह-मण्डप बन गया था।

काव्य सौंदर्य—१. वीरचन्द पृथ्वीराज के अनुरूप ही प्रतिद्वन्द्वी नायक है। कवि ने उसके असीम शौर्य पराक्रम का प्रकाशन किया है।

२. कवि ने बड़े कौशल से वीरचन्द में शृंगार-रस के साथ वीर एवं रौद्र-रस की प्रतिष्ठा की है।

'अरघ' का संस्कृत तत्सम रूप 'अर्घ्य', 'अप्पि,' का 'अर्पण', 'पग' का 'खड्ग', 'मग्गं' का 'मार्ग', 'पुंषि' का पक्षी' 'मुक्कि' का 'मुक्त' है। ये अपभ्रंश के शब्द भाषा से प्राचीनता प्रकट करते हैं।

४. अलंकार—(क) अनुप्रास।
(ख) स्वभावोक्ति।

दूहा

सिर सोहत बर सेहरौ। टोप ओप अति अंग॥
बगतर बागे केसरे। रुधिर भीजत विषमंग॥१४५॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सकट भग्ग लइ बग्ग वर। कमधज वीर विसेज ॥
मिले वीर बीरत्त वर। दोऊ देवत तेज ॥१४६॥

शब्दार्थ—सिर सोहत वर सेहरौ=शीश पर सेहरा शोभा दे रहा था। तोप=शिरस्त्राण। ओप—शोभा। वगतर=बख्तर, कवच। बागे=बागा, जामा =दूल्हा के पहनने की पोषाक। केसरे=केसरिया। रुधि भीजत=रक्त रंजित होने पर। विषमंग=विषम, कठिन। सकट=शकट-व्यूह। भग्ग=भग्ग कर दिया। लइ=उठाई बग्ग=लगाम। बिसेज=वैसे में, उस समय। देवत तेज= तेज में देवताओं के समान।

सन्दर्भ—इन दोहों में कवि ने पृथ्वीराज और वीरचन्द के भीषण युद्ध के अन्तर्गत वीरचन्द के अतुल शौर्य-पराक्रम का वर्णन किया है :

व्याख्या—वीरचन्द के शीश पर सुन्दर सेहरा बंधा हुआ है। वीरचन्द वर रूप में व्याहने गया था, परन्तु पृथ्वीराज ने आकर शशिवृता का हरण किया। अतः उसे लोहा लेना पड़ा, दूल्हा का परिधान धारण किये हुए उसका अंग-प्रत्यंग शोभा दे रहा था। सिर पर धारण सेहरा शिरस्त्रान की शोभा पा रहा था और उसका केसरिया बागा कवच से होड़ ले रहा था। वह रक्त-रंजित होकर विषम लगने लगा था।

वीरचन्द में युद्धोत्साह उद्दीप्त हो रहा था। वह अपने द्वारा ही बनाये हुए शकट-व्यूह को भंग कर आगे बढ़ता है। वह घोड़े की बाग खींचकर पृथ्वीराज से जा भिड़ता है, पृथ्वीराज और वीरचन्द दोनों श्रेष्ठ वीर परस्पर में भिड़ जाते हैं। दोनों ही वीर तेज में देव-तुल्य थे।

काव्य सौन्दर्य—१. 'भग्ग' 'बग्ग' और 'वीरत्त' में व्यन्जन द्वित्व की प्रवृत्ति भाषा की प्राचीनता प्रकाशित करती है।

२. वीर-रस—पृथ्वीराज और वीरचन्द परस्पर में आलम्बन और उद्दीपन है। स्थायी भाव उत्साह है।

३. शृङ्गार के आश्रय वीरचन्द में वीर-रस की सुन्दर भाव-सन्धि है।

४. अलंकार—क) 'सिर सोहत·········अंग' में उपमा।

(ख) 'वगतर बागे केसरे' में रूपक।

## दूहा

चाहुआंन कमधज्ज वर। मिले लौह छुटि छोह ॥
धार मुरै मुष ना मुरै। मरट मुच्छ क्रत जोह ॥१४७॥

शब्दार्थ—लोह=लोहा, तलवार। छुटि छोह=प्राणों का मोह छोड़कर। धार=तलवार की धार। मुप=मुख। मरट=बट, ताव। मुच्छ क्रत=मुंछों पर ताव देते हुए।

सन्दर्भ—इस दोहे में चन्द ने पृथ्वीराज और वीरचन्द के वीरोत्साह पूर्ण युद्ध का वर्णन किया है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



व्याख्या—पृथ्वीराज चौहान और कमधज वीरचन्द आमने-सामने होकर युद्ध रत हैं। वे एक दूसरे पर तलवारों के प्रहार कर रहे हैं। उन्होंने अपने प्राणों का मोह छोड़ रखा है ! लड़ते हुए दोनों की तलवारों की धारें मुड़ जाती हैं, किन्तु युद्ध से उनका मुख नहीं मुड़ता, भीषण युद्ध की विषम स्थिति में भी वे अपनी मूँछों पर ताव दे रहे हैं।

विशेष—१. वीर-रस—पृथ्वीराज और वीरचन्द परस्पर में आश्रय और आलम्बन हैं। तलवारों के प्रहार और मूँछों पर ताव देने में युद्धोत्साह की सफल अभिव्यक्ति है।

२. मुहावरों का प्रयोग वीर-रस का पोषक है।

दूहा

इह कहि कढ़िढय सार कर। षोलि षग्ग दोउ पानि ॥
मानहु मत्त अनंग द्वे। धूत छुट्टै जम जांनि ॥१४८॥

शब्दार्थ—इहि कहि—यह कह कर। कढ़िढया सार का—हाथ में तलवार निकाल ली। सार—लोहा, तलवार। पोलि—खोलकर। पग्ग—तलवार। पानि—हाथ। मत्त—मतवाले। अनंग—कामदेव। द्वै—दो। धूत छुट्टै—पृथ्वी पर छूट पड़ें हों, पृथ्वी पर युद्ध कर रहे हों। जम जांनि—यमराज होकर।

सन्दर्भ—इस दोहे में चन्द पृथ्वीराज और वीरचन्द दोनों को सौन्दर्य में कामदेव के समान कहकर उनको यमराज के समान युद्ध करने वाला कह रहा है:

व्याख्या—पृथ्वीराज और वीरचन्द परस्पर ललकारते हुए युद्ध-रत हैं। दोनों वीरों ने अपनी-अपनी कमर में कसी तलवारों को खोला और उनको म्यान से बाहर निकाल लिया। वे दोनों वीर उस समय युद्ध करते हुए ऐसे लग रहे थे, मानों दो कामदेव ही पृथ्वी पर अवतार धारण कर और मतवाले होकर युद्ध कर रहे हों। वे युद्ध करते हुए साक्षात् यमराज ही लग रहे थे।

विशेष—१. कोमलता और कठोरता का ऐसा सफल समन्वय अन्यत्र न मिलेगा। पृथ्वीराज और वीरचन्द सौन्दर्य में जहां कामदेव है, वहां युद्ध करने में साक्षात् यमराज हैं।

२. वीर रस।

३. अलंकार—(क) 'कहि कढ़िढय' में 'क' और 'पोलि' 'पग्ग' में 'प' वर्ण की एक बार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास।

(ख) दूसरी पंक्ति में उत्प्रेक्षा है। (मानहु मत्त द्वै······जम जांनि)

४. 'पोलि' और 'पग्ग' प्राकृत भाषा के शब्द हैं।

छन्द त्रिभंगी

मिले हथ्थ वथ्थ न सथ्थं स धारे। मनों वारुनी मत्त गज दंत न्यारे ॥
छुटे लोह पंत्ती परे श्रोन रुंद। मनो रुद्धि धारा वरष्षत वुंद ॥१४९॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



घुमे घाय घायं अघायं अघाय। झुमै झार झारं झनक्कै झकायं ॥
करैं जोगनी जोग काली कराली। फिरे पेट धाये महा विक्कराली ॥१५०॥
परैं सूर बाहैं वहथ्थी कृपान। कढी तांत बाढ़ी मल चारि जान ॥
धमां धम्म मत्ती महीमाहि घानों। पिंजारे सतं रुत्र पीजन्त मानों ॥१५१॥
महादेव मालानि में गूथि मथ्थं। कहे वारवाहं वहे सूर हथ्थं ॥१५२॥

शब्दार्थ—मिले हथ्थ बथ्थं=हाथों में अस्त्र लेकर भिड़ गये। न सथ्थं=साथियों को साथ में लिये बिना ही। बारुनी मत्त=मदिरा पीकर मतवाले बने हुए। गजदत=हाथी। न्यारे=अनुपम। 'मनौ बारुनी·········न्यारे'=मानों मदिरा पीकर उन्मत्त बने हुए हाथी युद्ध कर रहे हों। लौह=शस्त्र। उड़ैं लौह पन्ती=शस्त्रों का शस्त्रों पर बार हो रहा था। परे श्रोन रुंदं=धड़ों से रक्त की धारा प्रवाहित हो रही थीं। रुद्धि=रुककर। धारा=जल धारा, वृष्टि। [१४९]

घाय घायं=घाव पर घाव। अघायं अघायं=डट-डटकर। झार झारं=अग्नि स्फुलिंगों का समूह। झुमैं=निकल रहे थे। झनक्कै=झंकृत हो रही थीं। झकायं=परस्पर रगड़ खाकर। कराली=भंयकर। महा विक्कराली=महा भंयकर। [१५०]

बाहैं—वह रहे थे। वहथ्थी कृपानं—रक्त की धारा में तलवारें तैर रही थीं। महीमाहि—पृथ्वी पर। धमां धम्म मत्ती— उद्धृत नृत्य द्वारा धमाधम की तुमुल ध्वनि हो रही थी। 'कड़ी तांत ········जान'—वीरों की आतें निकल-निकल कर बाहर आ रही थीं। पिंजारे—रुई धुनने वाला। सन्त—सैकड़ों। रुत्र—रुइ। पीजत—धुन रहे हो।वारवाहं—मेघ।

[१५१-१५२]

सन्दर्भ—इन दोहों में कवि ने पृथ्वीराज और वीरचन्द की सेनाओं के भीषण युद्ध का वर्णन किया है :

व्याख्या—दोनों सेनाओं में भीषण युद्ध चल रहा है। वीर अपने-अपने साथियों को साथ में बिना लिए हुए अकेले ही विपक्षी योद्धाओं से भिड़ गये। युद्ध करने की धुन में मस्त बने हुए वे ऐसे लगते थे, मानों मदिरा पीकर मतवाले बने हुए हाथी युद्ध कर रहे हों। शस्त्रों पर शास्त्रों का वार हो रहा था। कटे हुए धड़ों से रक्त की धारा इस प्रकार प्रवाहित हो रही थी, मानों बुन्द वृष्टि का अवरोध कर धारासार वृष्टि हो रही हो। युद्ध में इतनी भीषणता से मार-काट हो रही थी कि रुण्डों से निकला हुआ रक्त वर्षा की धारासार वृष्टि सा प्रवाहित हो रहा था।
[१४९]

वीर डट-डट कर विपक्षी योद्धाओं को घाव-पर-घाव दे रहे थे। शस्त्रों के टकराने से अग्नि की चिनगारियों का समूह निकल रहा था। अस्त्र-शस्त्र परस्पर टकराने और रगड़ खाने से झंकृत हो उठते थे। योगनियां अपनी योग-साधना कर रही थीं। भीषण युद्ध के समय पर ही योगनियों के लिये योग-साधना का अवसर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आता है। महा विकराल भयंकर काली अपने पेट को फैलाये हुए युद्ध-स्थल में दौड़ रही थी। (कात्वी रक्त की प्यासी होती है। भीषण युद्ध की मार काट में ही उसे अघाकर रक्त-पान करने को मिलता है।) [१५०]

युद्ध-भूमि में रुण्डों से निकले हुए रक्त से वेगवती धारा प्रवाहित हो उठी थी। उसमें पड़े हुए वीर बह रहे थे और उनकी तलवारें तैर रही थीं वीरों की आतें निकल-निकलकर बाहर आ रही थीं। इस प्रकार का भीषण युद्ध चार घड़ी तक होता रहा। भूत, वैताल, पिशाच, निशाचिनियाँ, योगिनियां, काली आदि प्रसन्न हो-होकर रक्त पीकर उन्मत्त हो रही थीं। उन्होंने पृथ्वी पर अपने उद्धत नृत्य से धमाधम के द्वारा ऐसी तुमुल ध्वनि उत्पन्न कर रखी थी कि मानों सैकड़ों रुई धुनने वाले रुई धुन रहे हों।

मुण्डमाली भगवान शंकर अपनी माला में वीरों के सिर पिरो-पिरोकर कह रहे थे कि वीरों के हाथ क्या ही बादलों के समान बहते हुए शस्त्राघात कर रहे हैं।

काव्य-सौन्दर्य—१. अलंकार—(क) 'हथ्थं', 'वथ्थं', 'सथ्थं' में वृत्यानुप्रास।

(ख) 'मनो बारुनी..................न्यारे' में उत्प्रेक्षा।

(ग) 'उड़ छीह........बुंद' में उत्प्रेक्षा।

(घ) 'घुमे घाय घायं' में 'घ' वर्ण की एक से अधिक बार आवत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

(ङ) 'अघायं-अघायं' में पुनरुक्तिप्रकाश।

(च) 'झूमैं........झकायं' में 'झ' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

(छ) 'जोगिनी जोग', 'काली कराली' में 'ज', 'क' वर्ण की एक बार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास।

(ज) 'वाहै बहथ्थी' में छेकानुप्रास।

(झ) 'घमां धम्म......मानों' में उत्प्रेक्षा।

(ञ) 'वहैं..............हथ्थं' में उत्प्रेक्षा।

२. वीर रस—युद्ध में स्थायी भाव उत्साह है। दोनों सेनाओं के योद्धा परस्पर में आश्रय और आलम्बन हैं। शस्त्रों के प्रहार में वीर-रस की सफल निष्पत्ति है। परुष व्यंजनों की योजना युद्ध का यथार्थ चित्र उपस्थित कर देती है।

३. 'करैं जोगनी........जानं' तथा 'महादेव मालानि में गूँथि मथ्थं' में वीर-रस के अन्तर्गत वीभत्स-रस की सफल योजना है।

४. हथ्थं, वथ्थं, सथ्थं आदि में नाद-सौन्दर्य दृष्टव्य है।

मुरिल्ली

हाहर रूप कायर प्रचार। छंडीत लज्ज अरु वीर मार ॥
अभ्यासं सूर जिन सूर रूर। देवत्त भूप दिप्पै अनूर ॥१५३॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शब्दार्थ—हाहरे—गिर पड़ते थे। रूष–वृक्ष। प्रकार–तरह। 'हाहरे...... प्रकार'–कायर वृक्ष के समान कटकर गिर पड़ते थे। छडीत–छोड़ दिया था। लग्ग—प्रिया। वीर मार—वीर योद्धा मार-ही-मार किये जा रहे थे अभ्यासे—अभ्यास से ही। सूर रूप—सूर्य के समान भासित होते हैं। देवत्त–देवता के समान। दिष्षै—दिखाई दे रहे थे। 'देवत्त भूप दिष्षै अनूप—पृथ्वीराज देवता के समान दिखाई पड़ रहे थे।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने कायरों के वृक्ष के समान कटकर गिरने, वीरों के मार-मार करने और पृथ्वीराज के देवत्व रूप का वर्णन किया है :

व्याख्या–चलते हुए भीषण युद्ध में कायर वृक्ष के समान कटकर गिर रहे थे। वे योद्धा के वार का प्रहार झेलने में असमर्थ होकर प्रतिकार किये बिना ही गिर पड़ते थे। उधर वीर योद्धा अपनी प्रियाओं का भी ध्यान और मोह छोड़कर प्रतिपक्षियों पर वार-पर बार कर रहे थे, वे मार-मार की धूम मचाये हुए थे। वीर लोग युद्ध में वीरता दिखाने पर ही सूर्य के समान प्रकाशित होते हैं। उस समय युद्ध करते हुए पृथ्वीराज देव-तुल्य दिखाई पड़ रहे थे।

काव्य-सौन्दर्य—१. वीर रस—पक्षी और प्रतिपक्षी योद्धा परस्पर में आश्रय और आलम्बन हैं। युद्ध करते हुए पृथ्वीराज देव-तुल्य हो रहे हैं। कायरों का गिरना एवं वीरों का मार-ही-मार मचाना युद्ध का सजीव चित्र प्रस्तुत कर देता है।

२. अलंकार—(क) 'सूर' 'सूर' में यमक अलंकार (पहले 'सूर' का अर्थ 'वीर' दूसरे 'सूर' का अर्थ 'सूर्य' है।)

(ख) 'देवत्त भूप दिष्षै अनूप' में उपमा अलकार।

३. छन्द—मुरिल्ली—मुरिल्ली या मुरिल्लों छन्द में १६ मात्राओं का नियम प्रायः मिलता है और इन १६ मात्राओं में गुरु, लघु या चौकलों की स्वच्छन्दता है। इसमें जगणों का भी प्रयोग मिलता है।

**कवित्त**

विषम जग्य आरम्भ। वेद प्रारम्भ शस्त्र बल॥
है गै नर होमिये। शीश आहुत्ति स्वस्ति फल॥
क्रोधकुंड विस्तरिय। कित्ति मन्डप करि मंडिय॥
गिद्धि सिद्धि वेताल। पेपि पल साकृत छंडिय॥
तुंवर सु नाग किंनर सु चर। अच्छरि अच्छ सु गावहीं॥
मिलि दान अस्स अप्नन भुगति। भुगति मुगति तत पावहीं॥१५४॥

शब्दार्थ—विषम जग्य आरम्भ—युद्ध रूपी भीषण यज्ञ प्रारम्भ हो गया। वेद—वेद-विधान। शस्त्र बल—शस्त्रों द्वारा बल प्रदर्शन। 'बेद............बल'—शस्त्रों द्वारा बल-प्रदर्शन ही यज्ञ का वेद-विधान था।' हय गय नर होमिये'—अश्व गज और मनुष्यों का होम किया जा रहा था। स्वस्ति—स्वस्ति-वचन। शीश आहुति स्वस्ति फल—सिरों की आहुति के साथ स्वस्ति-वचन हो रहा था। विस्तारिय—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विस्तार किया गया था। 'कत्ति......मंढिय'=कीर्ति का ही मण्डप तांना गया था। पल—मांस। साकृत—शाकल, हवि-पदार्थ, हवन सामग्री। छंडिय=छोड़ा जाना। 'गिद्धिसि द्धि......छंडिय'=गिद्धों, योगिनियों तथा वैतालों द्वारा मृत वीरों के मांस का इधर-उधर फेंका जाना ही सामग्री का आहुति के रूप में फेंका जाना था। चर—दूत, भाट। अच्छरि—अप्सरायें। अच्छरि......गावहीं—यज्ञ में गाये जाने वाला मंगल पाठ। अस्स—असु, प्राण। अप्पन—अर्पण करना। भुगति—भक्ति। मुगति—मुक्ति। तत—तत्काल।

संदर्भ—इस छन्द में चन्द ने युद्ध में यज्ञ का आरोप करते हुए युद्ध की भीषणता का युद्ध किया है :

व्याख्या—भयंकर युद्ध रूपी यज्ञ प्रारम्भ हुआ। शास्त्रों के द्वारा वीर योद्धा जो अपना बल प्रदर्शन कर रहे थे, वही वेद-विधान बना हुआ था। उस युद्ध रूपी यज्ञ में अश्व, गज एवं मनुष्यों का होम किया जा रहा था। योद्धाओं के सिरों की आहुति के साथ में स्वस्ति-वाचन हो रहा था। वहां पर क्रोध ही के कुण्ड का विस्तार किया जा रहा था। कीर्ति का मण्डप ताना गया था। योद्धा युद्ध करते हुए वीर गति प्राप्त कर अपना कीर्तिमान स्थापित कर रहे थे।

गृद्धों, सिद्धों, योगिनियों तथा वैतालों द्वारा मृत वीरों का मांस जो इधर-उधर फेंका जा रहा था, वही हवि-द्रव्य इधर-उधर डाला जा रहा था। तुम्बर, नाग, किन्नर, भाट तथा अप्सराओं का गान ही युद्ध यज्ञ में मंगल पाठ था। समस्त वीर मोक्ष प्राप्ति की आकाँक्षा से प्राणों का विधि-पूर्वक अर्पण कर रहे थे, जिसके द्वारा वे वीर गति प्राप्त होने के साथ ही भक्ति और मुक्ति को प्राप्त कर लेते थे।

काव्य-सौन्दर्य—१. अलंकार—(क) सम्पूर्ण छन्द में साँग रूपक अलंकार है। युद्ध में यज्ञ का अंगों सहित निम्न प्रकार आरोप किया गया है :

१. युद्ध में यज्ञ का आरोप।
२. शस्त्र-संचालन में यज्ञ-विधान का आरोप।
३. हाथी, घोड़ों और मनुष्यों के मरने में होम होने का आरोप।
४. शीश कटकर गिरने में स्वस्ति-फल आहुति का आरोप।
५. क्रोध में यज्ञ-कुण्ड का आरोप।
६. कीर्ति में मंडप का आरोप।
७. गिद्धों आदि के द्वारा माँस बिखरे जाने में हविष्य के बिखरे जाने का आरोप।
८. तुंबर, नाग, किन्नर आदि के गान में यज्ञ के मंगल-पाठ का आरोप।
९. योद्धाओं का स्वयं के अर्पण में यज्ञ-दान का आरोप।

(ख) यन्त्र-तन्त्र अनुप्रास है।

२. वीर-रस का सम्यक् निरूपण है। युद्ध की भीषणता का सजीव चित्र प्रस्तुत हो गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



४. युद्ध-यज्ञ का निम्न रूपक भाव-साम्य के लिये दृष्टव्य है :

"चाप स्रुवा सर आहुति जानू। कोपु मोर अति घोर कृसानू ॥
समिधि सेन चतुरंग सुहाई। महा महीप भए पसु आई ॥
मैं एहि परसु काटि बलि दीन्हे। समर जग्य जग कोटिन्ह कीन्हे ॥"

—रामचरित मानस

## दूहा

करि सुचार आचार सब। समद किति फल दीन ॥
गुरुजन मिसि करना करिय। कायर हाहर कीन ॥१५५॥

शब्दार्थ—सुचार—सदाचार। आचार=व्यवहार। समद—प्रसन्नता पूर्वक। किति-फल—कीर्ति-लता की फलस्वरूप शशिवृता। दीन—ले जाने दी। मिसि—बहाना। हाहर—हा शिव ! हा शिव !!

सन्दर्भ—इस दोहे में समर-यज्ञ में कवि ने कायरों को गुरुजन कहकर उनके द्वारा पृथ्वीराज की यज्ञ के फल रूप में शशिवृता देने की बात बड़ी मार्मिकता एवं कौशल से कही है :

व्याख्या—युद्ध से मुख मोड़ने वाले जो कायर व्यक्ति थे, उन्होंने इस समर-यज्ञ में गुरु जन होने का बहाना किया। उन्होंने सदाचार को व्यवहार में लाने तथा करुणा करने की शिक्षा देते हुए उस भीषण मार-काट को देखकर हा शिव ! हा हा शिव !! का उच्चारण किया और प्रसन्नता पूर्वक कीर्ति-लता की फल स्वरूप शशिवृता को पृथ्वीराज को ले जाने दिया। उन्होंने शशिवृता को ले जाने में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं डाला। क्योंकि वे युद्ध से अलग हो गये थे।

विशेष—१, कायरों द्वारा गुरुजनों का बहाना बनाने में सटीक व्यंग्य है।

२. कवि के कथन में सर्वथा मौलिकता है।

३. उक्ति-वैचित्र्य की छटा दृष्टव्य है।

४. अलंकार—(क) साँग रूपक।

(ख) 'हाहर कीन' में वीप्सा अलंकार।

(ग) 'सुचार आचार' में सभंग पद यमक।

(घ) 'कीत्ति-फल' में रूपक।

(ङ) 'गुरुजन मिसि' में भेदकातिशयोक्ति।

## दूहा

तब चहुआँन सु कन्ह वर। ठढ्डौ करि कुरुराज ॥
हुक्म न्रपति छुट्टौति इम। जनु तीतर पर बाज ॥१५६॥

शब्दार्थ—कन्ह—पृथ्वीराज चौहान का एक प्रमुख सामन्त। ठड्डौ करि—युद्ध के लिये खड़ा किया। कुरुराज—कुरुवंशी या भरतवशी राजा पृथ्वीराज। छुट्टौति—टूटता है। इम—इस प्रकार।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**सन्दर्भ**—इस दोहे में पृथ्वीराज द्वारा सामन्त कान्ह को युद्ध की आज्ञा और कान्ह द्वारा भीषण युद्ध प्रारम्भ करने के प्रसंग का वर्णन किया है :

**व्याख्या**—कुरुवंशी राजा पृथ्वीराज चौहान ने श्रेष्ठ वीर सामन्त का को युद्ध करने की आज्ञा दी। राजा पृथ्वीराज की आज्ञा पाते ही वह शत्रु की पर झपटता हुआ ऐसा लग रहा था, मानों तीतर पर बाज झपटा हो।

**काव्य सौन्दर्य**—१. वीर रस।

२. दूसरी पंक्ति में उत्प्रेक्षा अलंकार।

**कवित्त**

मुष छुट्टत नृप बैन। नैन दिठ्ठौ धावंतौ ॥
क्रम बंध बल मोह। छोह बंध्यो सुबरत्तौ ॥
सुबर सेन चहुआंन। सिग जद्दुन नवाई ॥
जनु मन्दिर विय बार। ढंकि इक बार बनाई ॥

तकसीर करन दोउ अंस वर। कित्ति मग्ग करतव्य कर ॥
अथवंत रविह आदित्य दिन। अगनि सार बुड्डिय कहर ॥१५७।

**शब्दार्थ**—मुष छुट्ठत नृप बैन—पृथ्वीराज के मुख से वचन निकलते ही, उनकी आज्ञा होते ही। नैन दिढ्ठो धावंतो—आगे बढ़ता देखा गया। बल—सेना। छो—उत्साह। बंध्यो—बंधा हुआ। सुबरत्तो—क्रोध में जलता हुआ। सुबर सेन—सेना में बलशाली योद्धा। सिग—सिर। जद्दुनं—यादव योद्धा पुंय या लक्ष्मण नहीं। विय बार—उस समय। मन्दिर—मन्दराचल पर्वत। ढंकि—दबाकर। इ—एक दूसरे को। बार—बालू, रेत, चूर्ण। बनाई—बना देना चाहते थे। तकसी—अपराध, दूषित कर्म। अंस वर—श्रेष्ठ अंश। कित्ति मग्ग करतव्य कर—कीर्ति मार्ग पर अपना-अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए। अथवंत रविह—सूर्यास्त के सम आदित्य दिन—रविवार। अगनि सार—लोहाग्नि। बुड्डिय कहर—कहर ढा वाली भयानक लोहाग्नि बढ़ानी आरम्भ कर दो।

**सन्दर्भ**—इस छन्द में चन्द में पृथ्वीराज के प्रमुख सामन्त कान्ह तथा याद योद्धा पुंज या लक्ष्मण का सूर्यास्त-वेला में रविवार के दिन भीषण युद्ध आरम करने के प्रसंग का वर्णन किया है :

**व्याख्या** - राजा पृथ्वीराज चौहान की आज्ञा पाते ही वीर सामन्त का युद्ध करने के लिये आगे बढ़ता हुआ देखा गया। उसने अपनी सेना को व्यूहब किया। उत्साह और उमंग से भरा हुआ वह वीर योद्धा विपक्षियों पर क्रोध जल रहा था। पृथ्वीराज की सेना के सामन्त कान्ह की तरह यादव सेना में पुंज या लक्ष्मण नाम का पराक्रमी योद्धा था। उसने भी कान्ह को सिर नहीं झुकाया वे दोनों योद्धा उस समय मन्दराचल पर्वत के समान जान पड़ते थे। वे एक-दूस को दबाकर चूर्ण बना देना चाहते थे। दोनों ही श्रेष्ठ अंश धारी थे, परन्तु इ समय हिंसा पर उतारु हो रहे थे। वीर योद्धा के कीर्ति-मार्ग पर चलकर अ कर्त्तव्य का पालन करते हुए उन्होंने सूर्यास्त के समय रविवार को भयंकर लोहाग्नि बढ़ानी आरम्भ की, अर्थात भयंकर युद्ध प्रारम्भ कर दिया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विशेष—१. वीर रस।

२. अलंकार—क "मुख छुट्टत........धावंतो' में कारण के साथ हीं कार्य का होना कथन होने से चपलातिशयोक्ति।

(ख) 'जनु मन्दिर' में उत्प्रेक्षा [कान्ह और यादव योद्धा में मन्दराचल सम्भावना है।

(ग) 'कित्ति मग्ग' में रूपक।

३. 'तक्सीर' अरबी का शब्द है।

## गाथा

मुष छुट्टा नृप बैनं। कै ढिठ्ठाय धावता नैनं॥
वज्जी बाहु सुवारं। धार ढारि मत्तयौ धरयं॥१५८॥

शब्दार्थ—कै=कि। धावता—दौड़ता हुआ। बज्जी बाहु—वज्र के समान भुजाओं वाला। सुवारं—उस समय। धार—तलवार की धार से। ढारि—गिरा दिया। मत्तयौ धरयं—मतवाले हाथियों को पृथ्वी पर गिरा दिया।

संदर्भ—इस छन्द में कवि ने सामन्त कान्ह के युद्ध-पराक्रम का वर्णन किया है।

व्याख्या—राजा पृथ्वीराज के मुख से आज्ञा निकलने के साथ ही वीर सामन्त कान्ह विपक्षी योद्धाओं की ओर दौड़ता हुआ दिखाई दिया। उस समय वज्र के समान सुदृढ़ भुजाओं वाले वीर कान्ह ने अपनी तलवार से अनेक मतवाले हाथियों को काटकर पृथ्वी पर गिरा दिया।

काव्य-सौन्दर्य—१. वीर रस।

२. अलंकार—(क) प्रथम पंक्ति में कारण (पृथ्वीराज की आज्ञा) के साथ ही कार्य का होना (कान्ह का शत्रु पक्ष पर झपटना) वर्णन होने से चपलातिशयोक्ति

(ख) 'वज्जी बाहु' में उपमा।

## कवित्त

भान कुंअरि शशिवृत्ति। नैन शृंगार सुराजै॥
वीर रूप सामन्त। रुद्र प्रथिराज विराजै॥
चन्द अदम्भुत जानि। भए कातर करुनामय॥
बीभछ अरिन समूह। सांत उप्पनो मरन भय॥

उप्पज्यो हास अपछरि अमर। भो भयान भावी बिगति॥
कूरंभराव प्रथिराज वर। लरन लोह चिते तरनि॥१५९॥

शब्दार्थ—भान कुंअरि—राजा भान के लघु भ्राता पुंज की पुत्री शशिवृता। रुद्र—रौद्र-रस। कातर—कायर। करुनामय—करुण रस से युक्त। बीभछ—वीभत्स रस। उप्पनो—उत्पन्न हुआ। मरन भय—मृतकों में। अपछरि—अप्सराओं में।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



अमर—देवता। भो=हुआ। भयान=भयानक। भावी निगति=भविष्य के विषय में सोचकर। लरन लोहै=लड़ने के लिये लोहा (तलवार)। चिते—चाहा। तरनि—सूर्य के अस्त होने पर भी।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने यह वर्णन किया है कि सूर्यास्त के समय युद्ध प्रारम्भ होते ही किस-किस में किस-किस रस का संचार हुआ :

व्याख्या—भीषण युद्ध का प्रारम्भ देखकर राजा भान के भाई पुंज की पुत्री शशिवृता के नेत्रों में शृंङ्गार-रस भली प्रकार सुशोभित हुआ। वह अपने प्रियतम के अंक में सटी हुई उसके साथ अश्व की पीठ पर बैठी हुई है। अतः उसके नेत्रों में शृंगार-रस छाया होना स्वाभाविक ही है। युद्ध के लिये सन्नद्ध सामन्तों में वीर-रस था। सभी युद्धोत्साह से भरे हुए थे। पृथ्वीराज में रौद्र-रस विराज रहा था अर्थात् वे विपक्षी दल को नष्ट करने के लिये रौद्र रूप हो रहे थे। अनायास भीषण युद्ध की स्थिति कवि चन्द में आश्चर्य भर कर अदभुत रस की सृष्टि कर रही थी। युद्ध के मार के कारण कायरों की कारुणीक स्थिति हो गयी थी। अतः उनमें करुण-रस उदय हो गया था। मार-काट में मृत्यु की सम्भावना से शत्रु-समूह में वीभत्स रह, मृतकों में शान्त रस, अपनी सखी का मंगल अवसर जानकर अमर अप्सराओं में हास्य-रस (शशिवृता चित्ररेखा अप्सरा का अवतार थी) तथा भविष्य के विषय में भयानक विनाश का चिन्तन करने वालों में भयानक रस निष्पन्न हुआ। कमधज्ज वीरचन्द और श्रेष्ठ वीर पृथ्वीराज सूर्यास्त समय लोहा लेने का निश्चय कर रहे थे।

विशेष—१. अलंकार—(क) अनुप्रास (ख) उल्लेख।

२. इस छन्द में कवि की काव्य-बहुज्ञता स्पष्ट है। एक ही छन्द में नव-रस को कौशल से दिखाना उसके शास्त्रीय काव्य-ज्ञान को प्रकट करता है। 'बाण-वेध प्रस्ताव' में चन्द ने कहा है :

"रासो असंभ नव रस सरस, चन्द छन्द किय अमिय सम।
शृंगार, वीर करुना, विभछ, भय अद्भुत हसंत सम॥,,

छद त्रिभंगी

कवि चन्द सुवरन करं सुरकरनं सूरह लरनं भर भिरनं॥
तिरभंगी छद नाग नरिंदं कथ्य करिंदं दुष हरनं॥
पढमइ दह मत्ता पुनि अठ मत्ता असुवसु मत्ता रस मत्ता॥
घन घाइ सघत्ता रस सरत्ता मेगल मत्ता करि घत्ता॥१६०॥

शब्दार्थ—सुवरनं करं=सुन्दर वर्णन करता है। लरनं भर भरनं—वीरों के लड़ने और भटों के भिड़ने। 'तिरभंगी……करिंद'=त्रभंगी छन्द का आश्रय लेकर राजा पृथ्वीराज की कहानी कह रहा है। दुष हरनं—दुःख को हरण करने वाली। पढमइं=पढ़ने पर। दह मता=दुगना। अठ मत्ता=अठगुना। असु-वसु मत्ता=प्राणदायिनी। रसमत्ता=रसवती। घन घाइ=बहुत घाव। सघत्ता—लगे हैं। रस सरत्ता=रस सरसाने वाला। मेगल मत्ता=मतवाले हाथियों के वर्णन से युक्त। करघत्ता=जो हरण से सम्बन्धित है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



संदर्भ—इस छन्द में कवि ने अपनी वर्णन की हुई कथा की विशेषताएँ बतलाई हैं :

व्याख्या—मैं कवि चन्द वीरों के लड़ने तथा भटों के भिड़ने का वर्णन कर रहा हूँ। मैं त्रिभंगी छन्द में राजा पृथ्वीराज की ऐसी कहानी कह रहा हूँ, जो दुख का हरण करने वाली है, जिसके पढ़ने से दुगना उत्साह बढ़ता है और जिसके मनन करने से अठ गुना उत्साह आता है। जो प्राणदायिनी और रसमय है, जिसमें ऐसे वीरों का उल्लेख है, जिनके शरीर पर अनेकों घाव लगे हैं, जिससे रक्त टपकता है। जिसमें मतवाले हाथियों का वर्णन है तथा जो शशिवृता के अपहरण से सम्बन्धित हैं।

विशेष—'लरनं, भिरनं, हरनं' आदि प्राकृत भाषा और 'कथ्य' दुप, मत्ता, घत्ता, सरत्ता, आदि अपभ्रंश के शब्द हैं।

## छंद त्रिभंगी

बज्जै बर कोहं लग्गै लोहं छक्कै छोह तजि मोहं ॥
सूरा तन सोहं स्वामिन दोहं मत्तं ढोंहं रिन डोहं।
बर वांन बिछुट्टे बगतर फुट्टै पारन बुट्टै अहुट्टै घर तुट्टै ॥
तरवारिन तुट्टै धम्मर लुट्टे अंग अहुट्टे गहि जुट्टे ॥१६१॥

शब्दार्थ—कोहं=क्रोध। छक्कै=भाग जाता है। छोहं=मोह। सोहं=सुशोभित हो रहे हैं। दोहं—दुहाई। ढोंहं=ढो रहे हैं रिन=रण, युद्ध। द्रोहं=द्रोह को, शत्रुता। बिछुट्टै=छूट रहे हैं। बगतर=बख्तर। पारन=तहें फुट्टे=टूट जाती हैं। अहुट्टै=लोटते हैं, गिरते हैं। घर=धड़। धम्मर=धड़।

संदर्भ--इस छन्द में कवि ने दोनों सेनाओं के वीरों के बीच में भीषण युद्ध का वर्णन किया है:

व्याख्या—भीषण तलवार चल रही है। तलवार के लगते ही वीर अपना समस्त मोह छोड़कर क्रोध में डूबे हुए प्रहार का उत्तर प्रहार से दे रहे हैं। वीरों का रक्त-रंजित शरीर अति शोभा दे रहा है। वे वीर अपने स्वामी की दुहाई देते हुए रण-क्षेत्र में अपने विपक्षियों के प्रति द्रोह को वहन कर रहे हैं। अर्थात् क्रोध के आधिक्य से विपक्ष पर प्रहार कर रहे हैं। तीव्र बाण छूट रहे हैं। उनके लगते ही कवच टूट जाता है, बाण कवच के भीतर प्रवेश करता हुआ उसकी तहों को तोड़ देता है। धड़ टूट-टूटकर पृथ्वी पर लोट रहे हैं। तलवारों के प्रहार से धड़ पृथ्वी पर टूट-टूटकर गिरने लगते हैं। समस्त शरीरावयव छिन्न-भिन्न होकर इधर-उधर पृथ्वी पर फैले पड़े हैं।

विशेष १. वीर-रस की सम्यक् निष्पति है।

२. ध्वन्यात्मकता दृष्टव्य है।

३. अलंकार--अनुप्रास।

४. अनुस्वार एवं व्यजन- द्वित्व का प्रयोग भाषा की प्राचीनता सिद्ध करता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## छन्द त्रिभंगी

वीरा रस रज्जं सुर सगज्जं सिन्धुअ बज्जं गज गज्जं ॥
अच्छरि तन मज्जं बरै बर जंजं चित्त बज्जं मन मज्जं ॥
कायर रन भज्जं तज्जि सलज्ज स्वामिसु कज्जं भर सज्जं ॥
जम दढ्ढ सु सज्जे हथ्थह मज्जे छिन्छन छज्जे रिन रज्जै ॥१६२॥

शब्दार्थ—वीरा रस रज्जं—वीर-रस में ओत प्रोत हो। सगज्जं—गर्जना कर रहे हैं। सुर—वीर। सिन्धुअ—समुद्र की तरह। बज्जं—तरंगायमान। गज गज्जं—हाथी चिंघाड़ रहे हैं। अच्छरि—अप्सरायें। मन मज्जं—रक्त से सने शरीर वाले। बरं बर–वर के रूप में वरण कर रहीं हैं। जंजं–जो-जो। चित्त—चित्त में। बज्जं मन मज्ज—जिन-जिन पर उनका मन मुग्ध होता हैं। भज्जं—भाग गये। तजि सलज्जं—लज्जावती प्रियाओं को छोड़कर। स्वामिसु कज्जं—स्वामी के कार्य के लिये। भर—योद्धा। सज्जं—युद्ध के लिए सजकर। जम दढ्ढ—यमराज की दाढ़ अर्थात् काल। हथ्थह—हाथी। मज्जे–डूब गये। छिन्छन—क्षण-क्षण में। छज्जे—शोभा पा रहा था। रिन—रण, युद्ध। रज्जे—ढंग।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने भीषण युद्ध का वर्णन किया है क्षण-क्षण में युद्ध की भीषण स्थिति बदल रही है :

व्याख्या—वीर योद्धा वीर रस में डूबकर गर्जना कर रहे हैं। हाथी तरंगायमान समुद्र की लहरों की गर्जना के समान चिंघाड़ रहे हैं वीर युद्ध में वीर गति प्राप्त कर-रंजित बने हुए स्वर्ग को प्रयाण करते हैं। अप्सरायें, जिन-जिन वीरों पर मुग्ध होती हैं, उनको पति रूप में वरण करती हैं; कायर-युद्ध-भूमि छोड़कर भाग गये हैं किन्तु वीर योद्धा अपने अपने स्वामियों के कार्य के लिये अपनी लज्जावती प्रियाओं को विस्मृत कर युद्ध कर रहे हैं। वीर यमराज की दाढ़ के नीचे जाकर वीर गति प्राप्त कर रहे हैं। युद्ध में इतना अधिक रक्त-प्रवाह हुआ कि उसमें हाथी डूब गये। भीषणता से हो रहे युद्ध का ढंग क्षण क्षण में बदल रहा है।

विशेष—१. युद्ध का सजीव वर्णन है।

२. स्थायी भाव उत्साह होने से 'वीर-रस' है। योद्धाओं की गर्जना, वीर गति प्राप्त वीरों का अप्सराओं द्वारा वरण, कायरों का भागना, रक्त की धारा में हाथियों का डूबना युद्ध का यथार्थ चित्र प्रस्तुत कर देता है।

३. 'रज्जं' 'गज्जं', 'बज्जं', 'जंजं' 'मज्जं', 'भज्जं', 'सज्जं', में व्यंजन- द्वित्व एवं शब्दान्त में अनुस्वार भाषा की प्राचीनता द्योतक है।

४. 'सिन्धुअ' में स्वारागम विभक्ति का सूचक है।

५. 'तज्जि', 'हथ्थह' प्राकृत के शब्द हैं।

६. 'अच्छरि' का संस्कृत रूप 'अप्सरा', 'छिन्छन' का 'क्षण-क्षण' तथा 'हथ्थह' का 'हस्ति' है।

अलंकार—अनुप्रास।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## दूहा

सुवर वीर पावास षिजि । कढ्ढही बंकी अस्सि ॥
सोभै सीस गयंद के । मनु तेरस कौ सस्सि ॥१६३॥

शब्दार्थ—सुवर—उस समय । पावास—खास खिदमतगार, वीरचन्द का नाई । षिजि क्रोधित होकर । कढ्ढही बंकी असि—टेढ़ी तलवार निकाली । गयंद—हाथी ; सस्सि—चन्द्रमा ।

सन्दर्भ—इस दोहे में कवि ने तलवार निकालकर युद्ध के लिये उद्यत वीरचन्द के नाई का वर्णन किया है :

व्याख्या—उस समय (चलते हुए भीषण युद्ध) में वीरचन्द के मुख्य सेवक नाई ने अपनी वंकिम तलवार निकाली और युद्ध के लिये उद्यत हो गया। वीर नाई हाथी पर बैठा हुआ ऐसा शोभा दे रहा था, मानो त्रयोदशी का चन्द्रमा हो।

१. अलंकार—नाई में त्रयोदशी के चन्द्रमा की संभावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार।

२, 'अस्सि' का संस्कृत रूप 'असि' और 'सस्सि' का 'शशि' है।

## कवित्त

सुबर बीर पावास। षिझ्झ बढ्ढी सु बंकि असि॥
सुभै सीस गज राज । अद्ध तेरसि कि बाल ससि॥
मुठ्ठि चंपि द्रग पानि । नीर बानं सुद्धारह॥
मनु मुत्तिय बारुन्न । बंदु बंधे इन वारह॥
सा मरम देन पावरि धनि । स्वामिसु अंतर फुनि मिलिय॥
जीरन युमास संदेश सदि। गल्ह एक जुग जुग चलिय॥१६४॥

शब्दार्थ—षिझ्झ=क्रोधित होकर । बढ्ढी सु बंकि असि= अपनी टेढ़ी तलवार आगे बढ़ाई । मुठ्ठि चंपि=मुठ्ठी बांधकर । द्रग पानि=हाथ पर दृष्टि लगाकर । सुद्धारह=संधान किया । मुत्तिय=मुक्तामय । बारुन्न—समुद्र । बंदु =बांध । मरम=मर्मस्थल अर्थात् प्राण । पावरि=सेवक । धनि=धन्य है । अन्तर=हृदय । फुनि=पुनः, फिर । जीरन—जीवन । युमास—दो मास का । सदि=शब्द कर, पुकार कर । गल्ह=बात ।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने युद्ध के लिये उद्यत वीरचन्द के नाई के त्याग और स्वामि-भक्ति का वर्णन किया है।

व्याख्या—वीरचन्द के स्वामि-भक्त वीर नाई ने क्रोध में भरकर अपनी बंकिम तलवार को आगे बढ़ाया । वह श्रेष्ठ हाथी पर त्रयोदशी के चन्द्रमा के समान सुशोभित हो रहा था । उसने मुठ्ठी बांधकर और हाथ पर दृष्टि जमाकर नीर वाण का संधान किया । उसके नीर वाण ऐसे लगते थे ; मानो वे मुक्तामय समुद्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



के बारह बांध बांधने के लिये छूट रहे हों। स्वामी के लिये प्राण देने वाला वह सेवक नाई धन्य है। वह अपने हृदय से स्वामी से मिलता है अर्थात् युद्ध प्रारम्भ करने से पूर्व स्वामी का स्मरण करता है। वह पुकार कर यह कहता है कि यह जीवन दो महीने भर का है। उसका यह सन्देश युगों तक चलता रहेगा।

विशेष—१. सामन्त युग के युद्ध में क्षत्रिय ही नहीं अपितु स्वामि-भक्त नाई तक भाग लेते थे।

२. अलंकार—(क) 'सुभ……ससि' में नाई में त्रयोदशी के चन्द्रमा की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार।

(ख) 'मनु……बारह' में उत्प्रेक्षा।

३. (क) 'गल्ह' पंजाबी का शब्द है।

(ख) 'सुद्धारह' का संस्कृत रूप 'संधान' है, 'जीरन' का शुद्ध रूप 'जीवन' 'फुनि' का 'पुनि' और 'युमास' का 'युग मास' है।

४. नाई के स्वामि-भक्त पूर्ण वीर चरित्र का प्रकाशन हुआ है।

कवित्त

सुबर वीर कमधज्ज। राज संमुह चरि झारिय॥
मरन पूंज पावास। मरन अप्पन्नो विचारिय॥
सब सु सथ्थ पुच्छयो। तंत मंतह उच्चारिय॥
सकल मंत रजपूत। मंत मो देहु सुचारिय॥
हारियै धृमं जित्तै सुसब। बा उप्पर तन रष्षियं॥
मो मंत सुनो तो हूं कहूं। दुज्जन दल बल भष्षियै॥१६५॥

शब्दार्थ—सुबर=उस समय अर्थात् नाई के मारे जाने के पश्चात्। राज समुह=राजा पृथ्वीराज के समक्ष। चरि=आकर। झारिय=लोहाग्नि की वर्षा करने लगा। मरन पुंज पावास=नाई के मारे जाने से क्रोधित होकर। अप्पन्नो=स्वयं का भी। विचारिय=सोचा। सथ्थ=साथियों। सब=समस्त। पुच्छयो=पूछा। तन्त मंतह=महत्वपूर्ण बात। उच्चारिय=कहा। मन्त रजपूत=मंत्रणा में निष्णात राजपूतो। मंत=सलाह, मन्त्रणा। सुचारिय=भली प्रकार सोचकर। धृमं=धर्म। सुसब=सब कुछ। रष्षियै=रखा जाय। तन रष्षियै=जीवन-निर्वाह करें। हूं कहुं=मैं कहता हूं। दुज्जन=दुष्ट पृथ्वीराज। दल बल=सैन्य शक्ति। भष्षियै=नष्ट करना चाहिये।

सन्दर्भ—वीर नाई के वीरगति पाने पर वीरचन्द अपनी भी मृत्यु निश्चित समझ लेता है। वह अपने साथी राजपूतों से युद्ध विषयक मन्त्रणा करता है और उनको भी युद्ध के लिये प्रेरित करता है।

व्याख्या—वीरचन्द्र का नाई वीरता से युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ। नाई के मारे जाने पर कमधज वीरचन्द पृथ्वीराज चौहान के समक्ष आ गया और उन पर लोहाग्नि की वर्षा करने लगा। अपने मुख्य सेवक नाई के मारे जाने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



से खीझकर उसने अपना भी मरण निश्चित समझ लिया। वह अपने समस्त साथियों को सम्बोधित करता हुआ तत्व पूर्ण बातें कहने लगा। उसने कहा कि मन्त्रणा में निष्णात मेरे राजपूत साथियो ! सोच समझकर मुझे मन्त्रणा दो। मैं समझता हूँ कि यदि हम अपने धर्म को हारकर अन्य कुछ प्राप्त करलें और उसके ऊपर अपना जीवन-निर्वाह करें, तो ऐसे जीवन निर्वाह को धिक्कार है। अन्य समस्त पदार्थों में धर्म ही श्रेष्ठ है। हमारा धर्म वीरता है, इसको हमें नहीं गँवाना चाहिये। यदि आप लोग मेरा मत सुनना चाहते हैं, तो मैं तो यही कहूँगा कि दुष्ट पृथ्वीराज की सेना का विनाश किया जाना चाहिये।

विशेष—वीरचन्द का कथन सर्वथा वीरोचित है। वीर का धर्म युद्ध करना है। युद्ध में उसे विजय चाहे मिले और चाहे न मिले। वीरचन्द के रूप में प्रतिनायक की उपस्थिति उचित बन पड़ी है।

गाथा

अस्तमितं बर भानु। पाया नौ परम संतोषं॥
जानिज्जै जस वंधुअं। नव चंदनं तिलकयौ दीयं॥१६६॥

शब्दार्थ—अस्तमितं=अस्त होने पर। पाया नौ=प्रयाण किया, लौटी। जानिज्जै=जान पड़ी। वंधुअं=१, नव विवाहिता युवती, २. चन्द्रमा। नव=नवेली।

सन्दर्भ—इस छन्द में रात्रि आने पर दोनों सेनाओं को विश्राम हेतु प्रयाण करने का वर्णन किया गया है :

व्याख्या—सूर्यास्त होने पर दोनों सेनाएँ विश्राम के लिये लौट पड़ीं। युद्ध से विराम मिलने पर सेनाओं ने सन्तोष का अनुभव किया। वे दिन भर युद्ध करते हुये थक चुके थे। अतः सन्तोष का अनुभव करना उनके लिये स्वाभाविक ही था। उस समय चन्द्रमा से युक्त रात्रि ऐसी जान पड़ी, मानों किसी नव विवाहिता वधू ने चन्दन का तिलक लगाया है।

काव्य-सौंदर्य—१. अलंकार—(क) 'बन्धुअं' में यमक।
(ख) दूसरी सम्पूर्ण पंक्ति में उत्प्रेक्षा है।

२. गाथा छंद—यह प्राकृत भाषा का सुप्रसिद्ध छन्द है। इसमें १५, १३ पर यति देकर २८ मात्राएँ होती हैं।

चन्द्रायना

दुरि निसान गत भान भइग बर।
सिंधु संपत्तौ जाइ तिमिर चढ गुर॥
कुमुद विमुद अंकूर सुरातन धरियं।
मानौ तम कौ तेज सु तत्तउ बरियं॥१६७॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शब्दार्थ—निसान—चिह्न । भान—सूर्य । भइग—हो गया । 'दूरि निसान ……भान'—जब सूर्य का चिह्न भी समाप्त हो गया । सिंधु संपतो—सूर्य पश्चिमी समुद्र में डूब गया । तिमिर—अन्धकार । सुर—घना : विमुद—विशेष प्रसन्नता के साथ । अंकुर—अंकुरित या विकसित होने लगे । सुरातन घरियं—रात्रि की सुन्दर घड़ियाँ । तत्तउ घरियं—कुमुदों के तेज से दबा लिया हो ।

सन्दर्भ—सूर्यास्त होने पर पृथ्वीराज और वीरचन्द दोनों की सेनाएं विश्राम करने को प्रयाण करती हैं । यहाँ कवि रात्रि की सुषमा का वर्णन करता है :

व्याख्या—सूर्यास्त होने के पश्चात् सूर्य का चिह्न भी समाप्त हो गया, सूर्य पश्चिम सागर में डूब गया और घना अन्धकार छाने लगा । रात्रि की सुहावनी घड़ियों में कुमुद प्रसन्नता-पूर्वक खिलने लगे । सरोवरों में खिले हुये कुमुद पुष्पों से एक प्रकाश-सा छा गया । उस प्रकाश को देखकर कवि संभावना करता हुआ कहता है कि मानों अन्धकार के तेज को कुमुदों के तेज ने दबा लिया हो ।

विशेष—१. प्रकृति का आलम्बन रूप में यथार्थ चित्र उपस्थित हुआ है । सूर्यास्त-वेला का सहज चित्र सामने आ जाता है । सूर्य धीरे-धीरे अस्त होता हुआ ऐसा लगता है मानों पश्चिम-दिशा के सागर में डूब गया है । गहन अन्धकार छाने और कुमुदों का विकसित होना रात्रि की सहज प्रकृति को सूचित करता है ।

२. अलंकार—उत्प्रेक्षा ।

मुरिल्ल

वर भान संपतो थांन गुरं । सरसीरुह उद्दित मुदित वरं ॥
बर बीर कमोदनि की सुगती । भए रिंसिराज उदोतपती ।.१६८॥

शब्दार्थ—संपतो—प्राप्त होने पर । सरसीरुह—कमल । उद्दित—विकसित मुदित वर—अत्यधिक प्रसन्न होकर । सुगतो—वही दशा । रिंसिराज—चन्द्रमा ।

सन्दर्भ—इस छन्द में रात्रि में कुमुदों के विकसित होने के सौन्दर्य का वर्णन कवि ने किया है :

व्याख्या—जिस प्रकार अपने गुरु सूर्य के प्राप्त होने पर अर्थात् सूर्योदय होने पर कमल अति प्रसन्न होकर विकसित हो जाते हैं, उसी प्रकार चन्द्रमा को उदित देखकर रात्रि में कुमुद-समूह विकसित हो गया ।

विशेष—१. प्रकृति का स्वाभाविक चित्र उपस्थित हुआ है । दिन में सूर्योदय होने पर कमल खिलते हैं और रात्रि में चन्द्रोदय होने पर कुमुद खिलते हैं :

"कमल तुम्हारा दिन है,
कुमुद यामिनी तुम्हारी है ।"

—साकेत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२. छन्द मुरिल्ल—इसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राओं का नियम प्रायः मिलता है और इन १६ मात्राओं में गुरु-लघु या चोकलों की स्वच्छन्दता होती है। इसमें जगणों का भी प्रयोग मिलता है।

३, अलंकार—दृष्टान्त।

## दूहा

निसि गत वंछे भान बर। भंवर चक्कि अरु सूर ॥
मंतह मत्त पयान गति। गर भारथ्थ अंकूर ॥१६६॥

शब्दार्थ निसि गत बछे—रात्रि की समाप्ति की इच्छा करते हैं। भान बर—सूर्योदय। चक्कि—चक्रवाक। सूर—वीर योद्धा। मंतह मत्त—उन्मत्तता युक्त मंत्रणा। गर—गला, मन, हृदय। भारथ्थ—युद्ध। अंकूर—इच्छा।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने रात्रि की समाप्ति और वीरों की युद्धेच्छा का वर्णन किया है :

व्याख्या—रात्रि के व्यतीत होने एवं सूर्योदय की भ्रमर, चक्रवाक एवं वीर योद्धा तीनों ही इच्छा करते हैं। सूर्योदय होने पर कमल खिल जाते हैं और भ्रमर उन पर विहार करते हैं। सूर्योदय होने पर रात्रि के वियुक्त चक्रवाक युग्म मिल जाते हैं और रात्रि के कारण वीर योद्धाओं ने जो युद्ध करना बन्द कर दिया था, सूर्योदय होते ही युद्ध करने लगते हैं। रात्रि के आगमन से पृथ्वीराज और वीरचन्द की सेना ने युद्ध करना बन्द कर दिया था। युद्ध से लौट आने की दशा में भी वीरों में उन्मत्तता युक्त मन्त्रणा होती रही तथा उनके हृदय में युद्ध की इच्छा बनी हुई थी।

विशेष—भ्रमर, चक्रवाक और योद्धाओं से दिन-रात का सम्बन्ध स्थापित कर कवि ने प्रकृति का सहज चित्रण किया है।।

## कवित्त

कुमुद उघरि मूंदिय । सु बंधि सतपत्र प्रकारय ॥
चकिय चक्क बिच्छुरहि। चक्कि शशिवृत्त निहारय ॥
जुवती जन चढ़ि कांम । जांहि कोतर तर पंषी ॥
अवृत वृत सुंदरिय । काम बढ़िढय बर अंषी ॥
नव नित्त हंस हंसहि मिलै। बिमल चन्द उग्यो सुनभ ॥
सामंत सूर नृप रष्षि कै। करहि बीर बीश्राम सभ ॥१०७॥

शब्दार्थ—उघरि—बिकसित हो गये। मूंदिय—बन्द कर लिया। सतपत्र—कमल। प्रकारय—चहारदीवारी। चक्रिय चक्क—चक्रवाक और चक्रवाकी। बिच्छुरहि—वियुक्त होने लगे। चक्कि—चकित होकर। जुवती जन चढि काम—युवतियों के पतियों में काम वासना जागृत हो गई। जांहि - जाने लगे। कोतर—कोटर। पंषी—पक्षी। अवृत—लगातार। वृत्त सुंदरिय—सुन्दरियों का समूह। बर अंषी—सुन्दर नेत्रों में। नव नित्त—नित्य प्रति नवीन रहने वाले। हंस हंसहि।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



—हँस हँसकर। सुनभ—आकाश में। नृप रष्षि के—राजा की रक्षा का प्रबन्ध करके। सभ—सभी।

संदर्भ—यहां कवि ने रात्रि का वर्णन शृंगार के उद्दीपन के रूप में किया है। वीर शशिवृता-सहित पृथ्वीराज की रक्षा का प्रबन्ध करके विश्राम करने लगे :

व्याख्या—रात्रि के आगमन पर कुमुद विकसित होने लगे कमलों ने अपने संपुट (चहरदीवारी) में भ्रमरों को बन्द कर लिया (रात्रि में कमल सपुटित हो जाते हैं और भ्रमर उन्हीं में बन्द हो जाते हैं) चकवी-चकवा बिछुड़ने लगे। कुमारी शशिवृता चकित होकर पृथ्वीराज की ओर देख रही थी। युवतियों के पतियों के हृदय में काम-वासना जागृत हो गयी। पक्षी अपने-अपने कोटरों में जाने लगे। सुन्दरियों के सुन्दर नेत्रों में काम की अविराम वृद्धि होने लगी। नित-नूतन रहने वाले प्रेमी-युगल हँस-हँसकर मिलने लगे। आकाश में स्वच्छ चन्द्रमा उदित हो गया। सभी सामन्त तथा वीर शशिवृता-सहित पृथ्वीराज की रक्षा का सुप्रबन्ध करके विश्राम करने लगे।

विशेष—१, रात्रि की प्रकृति को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया गया है।

२. कवि समय के अनुसार रात्रि होने पर कमल संपुटित हो जाते हैं। उन पर बैठे हुए भ्रमर उन्हीं में बन्द हो जाते हैं।

३, कवि समय के अनुसार चकवी-चकवा रात्रि में मिलते हैं और दिन में बिछुड़ जाते हैं।

४. अलंकार—(क) चकिय-चवक' में 'च' वर्ण की एक बार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास।

(ख) सम्पूर्ण छन्द में स्वभावोक्ति अलंकार है।

५. युद्ध-भूमि की रात्रि में प्रेमी-युगलों का हंस-हंसकर मिलना, युवतियों के पतियों में काम-वासना जागृत होना औचित्य पूर्ण नहीं है। सामन्त-युग में स्त्रियां युद्ध में साथ नहीं चलती थीं।

## अरिल्ल

तत्त सार प्रति प्रतिप्रमानं। जाहु राज दिल्ली चहुआंन ।।
गुत बढ्ढे हम वड्ढे सस्त्रं। दुष्ष मानि सुनि सुनिय विरत्तं ।।१७१।।

शब्दार्थ—तत्त—तत्वपूर्ण। सार—सारपूर्ण। प्रतिप्रमांनं—प्रामाणिक। गुनवढ्ढे—गुणों में बढ़े हुए। बढ्ढे सस्त्रं—सस्त्रों में बढ़े हुए। दुष्ष—दुःख। विरत्तं—विरक्त भाव से।

सन्दर्भ—पृथ्वीराज से सामन्त दिल्ली जाने को कहते हैं। पृथ्वीराज को इससे दुःख होता है। वे अपने साथियों को छोड़कर युद्ध-भूमि से नहीं हटना चाहते :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



व्याख्या — वीर सामन्त पृथ्वीराज से विनय करते हुए कहते हैं कि आप हमारी तत्वपूर्ण एवं सार-पूर्ण प्रामाणिक बात मानकर शशिवृता-सहित दिल्ली चले जाइये। हम सभी गुणों तथा शस्त्रों दोनों में ही बढ़े हुए हैं। अतः शत्रु से युद्ध कर उसे पराजित करने में समर्थ हैं।

पृथ्वीराज को सामन्तों की बातों को सुनकर बड़ा दुःख होता है। वे विरक्त भाव से उनकी बातें सुनते रहते हैं।

विशेष—१. पृथ्वीराज कुशल सेनापति और वीर राजा थे। उनके लिए यह कब सम्भव था कि वे युद्ध सामन्तों पर छोड़कर स्वयं युद्ध भूमि से पलायन कर जायें सामन्तों की ऐसा मंत्रणा सुनकर तभी तो उनको दुःख होता है।

२ छन्द—अरिल्ल—इसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ होती हैं। चरणांत में दो लघु होते हैं। कहीं-कहीं यगण भी होता है।

**कवित्त**

दुष मानि सो रत्त। सुनैं सामंत सूर बर॥
चंद उडुगन काम। सर्‌यो कहुं दिष्षि सूर नर॥
भान काम मन सरै। अरुन जो होइ तेज़ बर॥
काम राम नन सरै। हनू उद्योत लंकछर॥
नन सरै काम मंगल सुबिधि। जो मंगल आक्रुत तप॥
सामंत सूर इम उच्चरैं। कढ्ढि मोहि झुझ्झहुति अप॥१७१॥

शब्दार्थ—रत्त – रात्रि। उडूगन—तारागण। दिष्षि—देखकर। सूर बर—हे वीर सामन्तो। भान—सूर्य। नन—नहीं। भान काम नन सरे—सूर्य काम पूरा नहीं होता। हनू—हनुमान। लंकछरं—लंका को छलांग लगाने वाले। सुविधि—उसी प्रकार। मंगल आक्रुत—अरुण वर्ण। इम—इस प्रकार। कढ्ढि मोहि—मुझे भेजकर। झुझ्झहुति—युद्ध करोगे।

सन्दर्भ—पृथ्वीराज के सामन्त पृथ्वीराज से दिल्ली चले जाने को कहते हैं। पृथ्वीराज अपने साथियों को युद्ध-भूमि में अकेला नहीं छोड़ना चाहते। वे कई दृष्टान्त देखते हुए कहते हैं कि उनकी अनुपस्थिति में समुचित युद्ध नहीं हो सकेगा :

व्याख्या—पृथ्वीराज के समक्ष उस रात्रि में श्रेष्ठ सामन्तों ने दिल्ली चले जाने का प्रस्ताव आग्रह-पूर्वक रखा। उसे सुनकर पृथ्वीराज बहुत दुखी हुए। उन्होंने अपने वीर सामन्तों को सम्बोधित करते हुए कहा कि कहीं चन्द्रमा का कार्य तारागण सम्पन्न कर सकते हैं अर्थात् समस्त तारे मिलकर भी चन्द्रमा के बराबर प्रकाश नहीं कर सकते। इसी प्रकार क्या सूर्य का काम अत्यधिक तीव्र अरुणिमा कर सकती है। अर्थात् ऊषा कालीन अरुणिमा चाहे कितना ही अधिक प्रकाश क्यों न करे किन्तु वह सूर्य के समान प्रकाश नहीं दे सकती।

इस प्रकार छलांग लगाकर समुन्द्र को पार कर लंका पहुँचने वाले हनुमान से राम का काम क्या पूरा हुआ? राम ने ही लंका पर अभियान कर कार्य पूरा किया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पृथ्वीराज अपने सामन्तों से प्रश्न करते हुए कहते हैं कि क्या मंगल नामक ग्रह का काम मंगलकृत अरुणिमा से बना पड़ा है ? तात्पर्य यह है कि 'मंगल' नाम होने से ही 'मंगल ग्रह' समस्त मंगल करने में समर्थ नहीं है। इसी प्रकार हे सामन्तो! मुझे दिल्ली भेजकर क्या तुम सफल युद्ध करने में समर्थ हो सकोगे ? अर्थात युद्ध की सफलता के लिये मेरी उपस्थिति अनिवार्य है।

विशेष—१. अलंकार—(क) सम्पूर्ण छन्द में दृष्टान्त है।

(ख) 'मंगल', 'मंगल' में यमक है।

२. पृथ्वीराज की रण-नीति युद्ध-कौशल और शौर्य का प्रकाशन हुआ है। सेनापति के युद्ध-भूमि से हटने पर विजय कभी सम्भव नहीं हो सकती।

दूहा

मुहि कढ्ढिरु तुम रहो बर। जियत जांहि उन थान ॥
ऐसी रीति अरीत पर। पढ्ढी नह चहुआंन ॥१७३॥

शब्दार्थ—मुहि—मुझे। कढ्ढिरु—विदा करके। उन थान—उस स्थान अर्थात् दिल्ली। अरीति—कुरीति, वीर के विपरीत नीति। नह-नहीं।

सन्दर्भ—युद्ध-भूमि को छोड़कर दिल्ली चले जाने के सामन्तों के प्रस्ताव से पृथ्वीराज चौहान के आत्म-सम्मान को ठेस लगती है। वे सगर्व कहते हैं :

व्याख्या—तुम सब मुझे दिल्ली भेजकर स्वयं युद्ध करना चाहते हो। परन्तु ऐसा नहीं हो सकता। चौहनवंशी पृथ्वीराज ने ऐसी अनीति का पाठ नहीं पढ़ा है कि वह अपने सामन्तों को अकेला छोड़कर युद्ध भूमि से चला जाय।

विशेष—पृथ्वीराज के कथन में उनका शौर्यपूर्ण चरित्र प्रकाशित हुआ है।

गाथा

अंकुर बीर सुभट्टं। अघटं घट्टाइ क्रोधयो कलहं ॥
हय मुक्या चलि बंधी। निढुर सथ्थव सठयो बीरं ॥१७४॥

शब्दार्थ—अंकुर बीर सुभट्टं—वीरों में वीर-रस का अंकुर अंकुरित हो गया। अघटं घट्टाइ—अघटित घटना घटी। क्रौधयो कलहं—क्रोधपूर्ण युद्ध आरम्भ हो गया। हय मुक्या—घोड़ा बढ़ा दिया। बलि बँद्धि—चाल बांधी। निढर—निड्डुर राय। सथ्थव—साथ में। सठयो—साठ।

सन्दर्भ—पृथ्वीराज के कथनों से उत्तेजित होकर सामन्त युद्ध प्रारम्भ कर देते हैं। निड्डुर राय आगे बढ़कर अपने साथियों सहित युद्ध करने लगता है :

व्याख्या—पृथ्वीराज के शौर्यपूर्ण कथनों ने वीर सामन्तों में वीर-रस अंकुरित कर दिया। वे युद्धोत्साह से उद्दीप्त होकर युद्ध करने लगे। इससे एक अघटित घटना घटित हो गई। वीर सामन्त निड्डुरराव ने अपने घोड़े को आगे बढ़ाया और सेना को क्रम से संगठित किया। निड्डुरराव के साथ मे साठ सामन्त और थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



छन्द-गाथा—यह प्राकृत भाषा का प्रसिद्ध छन्द है। इसमें १५,१३ पर यति देकर २८ मात्राएँ होती हैं।

दूहा

वीर वीर वीराधि वर। कढँ लोह तजि छोह॥
सूर धीर सामंत गति। नहिं माया न हिं मोह॥१७५॥

शब्दार्थ—वीर वीराधि वर—वीरों में श्रेष्ठ वीरचन्द। कढँ—निकाल लिये। लोह—अस्त्र, तलवार। तजि छोह—जीव का मोह छोड़कर। सूर धीर सामन्त गति—वीर सामन्तों की गति बड़ी धैर्यशाली होती है।

सन्दर्भ – इस दोहे में वीरचन्द के योद्धाओं के द्वारा वीरता से युद्ध प्रारम्भ करने के प्रसंग वर्णन किया गया है :

व्याख्या—वीरों में श्रेष्ठ वीर वीरचन्द के वीरों ने भी प्राणों का मोह छोड़कर अपने-अपने अस्त्र सम्हाल लिये। यथार्थ में वीर सामन्तों की गति तो बड़ी धैर्यशाली होती है। वे संसार के माया-मोह को छोड़कर युद्ध करते हैं।

विशेष—१. योद्धाओं में युद्धोत्साह का वर्णन होने से वीर-रस।
२. अलंकार—(क) 'वीर-वीर' में यमक अलंकार।
(ख) 'वीर……वर' में 'व' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।
(ग) दूसरी पंक्ति में निदर्शना है।

रसाबल

भिते सूर पत्ती। लगे लोह तत्ती॥
नचे सुर छत्ती। उठे काल तत्ती॥१७६॥

जुटे जोध पत्ती। उडी रेन गत्ती॥
सहा बै न तत्ती। कला कोटि छत्ती॥१७७॥

ग्रवै ग्राम गत्ती। सुरं पंच छत्ती॥
मचै कुह मत्ती। षचे रोम रत्ती॥१७८॥

करै घाव कत्ती। इसे सूर चित्ती॥
गिए फल्ल सत्ती। घुमें घाइ घत्ती॥१७९॥

भजे भीम भत्ती। हनुमान जत्ती॥
अनाभूत अत्ती। दिपै दारु दत्ती॥१८०॥

रुधि धार रुक्कं। भभक्कै भभक्कं॥
धका धीग धक्कं। बकै मार बक्कं॥१८१॥

इसै चित्त अक्कं। छुटै मत छक्कं॥
डकारंत डक्कं। त्रिलोकंत हक्कं॥१८२॥

मनो मोह थक्कं। हको हक्क बक्कं॥१८३॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शब्दार्थ —जिते—जिस ओर। सूर पत्ती—सूरों की पंक्ति बढ़ जाती थी। तत्ती—गर्म, भीषण। लगे लोह तत्ती—भीषण लोहाग्नि बरसने लगती थी। छत्ती—छाती। नचे सूर छत्ती—युद्धोत्साह में वीरों के हृदय नाच रहे थे। [१७६]

"जुटे जोध पत्ता" - योद्धाओं की पंक्तियाँ आमने-सामने डटी हुई थी। रेन—धूलि । गत्ती—बहुत अधिक मात्रा में । सह्यो न तत्ती—भीषण मार सही नहीं जा रही थी। कला कोटि कत्ती—वीर करोड़ों कलाओं से युद्ध कर रहे थे। [१७७]

ग्रीवं ग्राव—प्रत्येक कंठ से। गत्ती—गाये जा रहे थे। पंच—पंचम स्वर। छत्ती – छत्तीसों राग। मत्ती—मस्ती। षचे रोष रत्ती—वीरों में क्रोध की मात्रा चरमसीमा पर पहुँच गई थी।

कत्ती—अनेक। इसे सूर चित्ती—उसे वीर कहते हैं। शिए—शिव। सत्ती—पार्वती। घुमें घाइ धत्ती—घायल मृतकों की घात में घूम रहे हैं। [१७९]

मत्ती—मतवाले। जत्ती—यती। अनाभूत अत्ती—बहुत बड़ी संख्या में वीर प्राण-विहीन हो गये थे। दारु—लकड़ी का दंड। दत्ती—दत्तात्रेय मत के मानने वाले अर्थात् कायरों ने हाथ में डण्ड लेकर अपना साधु वेश बना लिया। [१८०]

रुक्कं—रुक रुक कर। भभक्कं—भभक-भभक कर निकल रही थी। धाक धीग धक्कं—धक्का मुक्की। बकै मार बक्कं-मार मार की बकवास हो रही थी। [१८१]

इसं-जिसका। अक्कं—स्थिर। मत्त—मतवाले । छक्कं – छक्के। थक्कं-थक गया हो। हको हक्क—हुंकार पर हुंकार। बक्के—बक रहे थे।

[१८२-१८३]

सन्दर्भ—इन छन्दों में कवि ने दोनों सेनाओं के बीच में घमासान युद्ध का वर्णन किया है :

व्याख्या- पृथ्वीराज और वीरचन्द की सेना में भीषण युद्ध प्रारम्भ हो गया। जिस ओर वीरों की पंक्तियां बढ़ जाती थीं, उसी ओर भयंकर लोहाग्नि बरसने लगती थी। युद्धोत्साह में वीरों के हृदय नृत्य कर रहे थे। चारों ओर भयंकर मृत्यु छाई हुई दृष्टिगोचर होती थी। [१७६]

योद्धाओं की पंक्तियां आमने-सामने डटकर युद्ध कर रही थीं। सैनिकों के पदाघात से अत्यधिक धूल उड़ रही थी। योद्धाओं की परस्पर की भीषण मार सही नहीं जा रही थी। वीर करोड़ों कलाओं एवं कौशल से युद्ध कर रहे थे।

[१७७]

प्रत्येक कंठ से पंचम स्वर में छत्तीसों राग अलापे जा रहे थे। उस समय युद्ध स्थल में कुछ और मस्ती फैली हुई थी। वीरों के क्रोध की मात्रा चरमसीमा पर पहुँच गई थी।

[१७८]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



जो विपक्षी वीरों को बढ़-बढ़ कर घाव दे, उसे वीर कहते हैं। भगवान शंकर पार्वती को साथ लेकर घायल मृतकों की घात में घूम रहे थे। वे अपनी मुण्डमाला के लिए वीरों के शिरों का चयन कर रहे थे। [१७९]

युद्ध की भयंकरता को देखकर मतवाले भीम तथा यती हनुमान भी भाग गये। बहुत बड़ी संख्या में वीर मृत्यु को प्राप्त हुए। जो कायर थे, वे हाथ में दण्ड को लेकर दत्तात्रेय के अनुयायी हो गये। उन्होंने भयभीत होकर साधु का वेश इस लिए धारण कर लिए, जिससे उन पर कोई आघात न करे।

[१८०]

रुण्डों से रक्त की धारा रुक-रुक कर और भभक-भभक कर निकल रही थी। चारों ओर धक्का-मुक्की मची हुई थी। सभी योद्धा मार-मार का उद्घोष कर रहे थे। [१८१]

ऐसे समय जिसका चित्त स्थिर रह सके, वही वास्तविक वीर है। बड़े-बड़े मतवाले योद्धाओं के भी छक्के छूट रहे थे। युद्ध में रत योद्धाओं की हुंकार और गर्जना तीनों लोकों में छा गई थी। वीरों के मन का मोह थकित हो गया था। वे प्राणों का मोह को छोड़कर हुंकार करते हुए भीषण युद्ध में रत थे।

[१८२-१८३]

**काव्य-सौन्दर्य**—युद्ध का सजीव वर्णन है। युद्धोत्साह, हुंकार और शस्त्र प्रहार से वीर-रस की सम्यक् निष्पत्ति हो गई है। कर्ण-कटु शब्दावली और व्यंजन-द्वित्व की योजना से वीर-रस साकार हो उठा है।

**कवित्त**

हक्को हक्कि वंजिय प्रकार। सार बज्जैं सु बीर बर॥
सु बुधि बुद्ध आवुद्ध। मत्त लग्गैं सु असि बर झर॥
इकत रुद्ध आरुद्ध। नद्द नारद अधिकारिय॥
रंभ सिंभ आरम्भ। सिद्ध बुद्धं दे तारिय॥
धनि धन्नि सूर दिन धनित बल। छल छत्रिय अंकूर रजि॥
कलहंत काल कालह विषम। सुवर बीर बीरत्त रजि॥१८४॥

**शब्दार्थ**—हक्को-हक्कि—हुंकार पर हुंकार। वंजिय—वज्र। प्रकार—तुल्य। सार—लोहा, तलवार। बज्जैं—बजने लगे। बीर बर—श्रेष्ठ वीर। सु बुधि—बुद्धिमान। बुद्ध आवुद्ध—सुध-बुध भूलकर। मत्त—मतवाले होकर। असि बर झर—तलवार की झड़ी लग रही थी। इकत रुद्ध—एक को रौंदा जाने पर। आरुद्ध—घेरे में नहीं रहता था, युद्ध के घेरे से बाहर हो जाता था। नद्द—नाद। नद्द नारद अधिकारिय—नारद संगीत के अधिकारी दक्ष बनकर बीणा बजाये जा रहे थे। रंभ-रंभा। सिंभ—शिव। रंग सिंभ आरम्भ—युद्ध स्थल में रंभा और शिव का आना प्रारम्भ हो गया। सिद्ध बुद्धं दे तारिय—बुद्धिमान सिद्ध ताली बजाकर अपनी प्रसन्नता प्रकट कर रहे थे। धनित बल—उस बल को धन्य है। छत्रिय अंकूर रजि—क्षत्रियत्व को अंकुरित कर दिया था। कलहंत काल—युद्ध करते समय। कालह विषम—भयंकर काल के समान। सुवर—उस समय। बीर बीरत्त रजि—वीरों में वीर-रस सुशोभित हो रहा था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने पृथ्वीराज और वीरचन्द की सेना के बीच के घमासान युद्ध का वर्णन किया है :

व्याख्या—युद्ध-भूमि में वीर योद्धा हुंकार पर हुंकार कर रहे थे और लोहा (तलवार) बरसा रहे थे। उनके अस्त्र वज्र-तुल्य विपक्षियों पर पड़ रहे थे। यद्यपि वे वीर विवेक-युक्त थे; परन्तु युद्ध-भूमि में मतवाले होकर अपनी सुध-बुध भूल रहे थे और खड्ग प्रहार की झड़ी लगा रहे थे। जिस समय एक विपक्षी को रौंदा जाता था, उस समय दूसरा युद्ध व्यूह से बाहर हो जाता था।

चलते हुए भीषण युद्ध में नारद संगीत के अधिकारी बनकर अपनी वीणा बजाये जा रहे थे। रंभा अप्सरा तथा भगवान शिव का युद्ध-भूमि में आना प्रारम्भ हो गया। रंभा वीरगति को प्राप्त श्रेष्ठ वीर का वरण करने के लिए आ गई और शिव अपनी मुण्डमाला में वीर-गति प्राप्त योद्धाओं के मुण्डों को धारण करने के लिए आ गये।

बुद्धिमान सिद्ध ताली बजा-बजाकर अपनी प्रसन्नता व्यक्त कर रहे थे। उन वीरों को धन्य है, तथा धन्य है उस दिन को, जिस दिन वीरों ने अपना बल-प्रदर्शन कर क्षत्रियत्व को अंकुरित कर दिया था। युद्ध करते हुए वीर योद्धा काल के समान भयानक लग रहे थे। उस समय उन पर वीर-रस छाया हुआ था।

काव्य-सौन्दर्य—१. वीर-रस—स्थायी-भाव उत्साह है। शस्त्र-प्रहार और भीषण मार काट एवं हुंकारों में युद्ध का सजीव चित्र सामने आ जाता है।

युद्ध करते हुए योद्धा परस्पर में आश्रय और आलम्बन हैं। शस्त्रों का प्रहार और हुंकार उद्दीपन है।

२. अलंकार—(क) 'हकी हकि' में 'ह' वर्ण की एक बार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास।

(ख) 'बज्जैं सु बीर बर' में 'ब' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

(ग) 'बुद्धि-बुद्धि आबुद्ध' में वृत्यानुप्रास।

(घ) 'नद्द नारद' में छेकानुप्रास।

(ङ) 'रंभ सिभ आरम्भ' में 'भ' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

(च) 'कलहंत काल कालह' में 'क' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

(छ) सम्पूर्ण छन्द में अनुप्रास की सुन्दर योजना है।

३. व्यंजना द्वित्व की योजना भाषा की प्राचीनता प्रकट करने के साथ-साथ युद्ध का सजीव चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## दूहा

स्वामि काज लग्गे सुमति । पंड पंड घर धार ।।
हार हार मंडै हियै । गुथ्थि हार हर हार ।।१८५।।

शब्दार्थ—सुमति—बुद्धिमान सामन्त । पंड पंड—खण्ड-खण्ड । घर—रुण्ड । धार—तलवार की धार से । हार-हार—मालायें ही मालायें । मंडै—सुशोभित कर लिये थे । गुथ्थि हार—हारों को गूंथते-गूंथते । हर हार—शिव जी हार गये ।

सन्दर्भ—इस दोहे में कवि ने योद्धाओं के वीरत्व प्रदर्शन का वर्णन किया है :

व्याख्या–युद्ध में रत बुद्धिमान सामन्त अपनी तलवार की धार से विपक्षी योद्धाओं के रुन्डों को खन्ड-खन्ड करते हुए अपने स्वामी के कार्य में लगे हुए थे । उन्होंने इतनी अधिक मार-काट की कि भगवान शिव ने अपने वक्षःस्थल पर हार-ही हार सुशोभित कर रखे थे तथा मुन्ड मालाओं को गूंथते-गूंथते वे थक गये थे ।

काव्य सौन्दर्य—१. वीर रस—स्थायी भाव उत्साह है ।

२. युद्ध में मार-काट का सजीव वर्णन हुआ है ।

३. अलंकार—(क) अनुप्रास ।

(ख) 'पंड-पंड' में पुनरुक्तिप्रकाश ।

(ग) 'हार-हार' में यमक ।

## कवित्त

घटिय पंच दिन घट्यो । उमरि आरब्ब पुंज पिरि ।।
एक दिना दोउ सेन । मोह छड्यो क्रम निक्करि ।।
बान गंग पत्तयो । वीर ग्यारसि दिन सोमं ।।
सूर धीर सामंत । सूर उड्डै रन रोमं ।।
क्रत काम काज साँई विभ्रम । दल दंतिय पंतिय गमै ।।
सामंत सूर सांई बिभ्रम । रोम रोम राजी भ्रमै ।।१८६।।

शब्दार्थ—घटिय—घड़ी । घट्यो कम हुआ, व्यतीत हुआ । उमरि—उत्साहित होकर । आरब्ब पुंज—अरबी घोड़ों का समूह । पिरि—आगे बढ़ाया । 'उमरि······पिरि—अरबी घोड़ों के समूह को आगे बढ़ाया । एक दिना—उस दिनों मोह छंड्यो—प्राणों का मोह त्याग दिया । । क्रम निक्करि —युद्ध के व्यूह से निकलकर । 'मोह छंड्यो·········निक्करि'—वीर योद्धा युद्ध का व्यूह भंग कर बाहर निकल आये । पत्तयो—पहुँच गया । बान गंग पत्तयो—बाण-गंगा के तट पर पहुँच गया । ग्यारसि दिन सोमं—एकादशी सोमवार के दिन । उड्डै—उड़ा दिये, काट दिये । रन रोमं—रोम-रोम को, शरीर के प्रत्येक अवयव को । क्रत काम—सफल कार्य । काज साँई—स्वामी के कार्य के लिये । बिभ्रम—भ्रान्ति उत्पन्न कर दी । दल दंतिय—हाथियों की सेना । पंतिय—पंक्ति । गमै—नष्ट कर दी । राजी—रजो गुण । भ्रमै—भासित हो रहा था ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सन्दर्भ—इस छन्द में चन्द ने पृथ्वीराज के सामन्तों के शौर्य-पराक्रम एवं अपने स्वामी के कार्य के लिये बलिदानी भावना का वर्णन किया है :

व्याख्या—पाँच घड़ी दिन व्यतीत हो जाने पर वीर योद्धाओं ने युद्धोत्साह से भरकर अरबी घोड़ों के समूह को आगे बढ़ा दिया। उस दिन पृथ्वीराज एवं वीर चन्द दोनों की सेनाओं के वीर योद्धा अपने प्राणों का मोह छोड़कर युद्ध करने के लिये उद्यत हो गये। एकादशी सोमवार को पृथ्वीराज बाणगंगा के तट पर पहुँच गये। धैर्यशाली वीर सामन्तों ने युद्ध-भूमि में वीरों के अंग-प्रत्यंग को काट दिया अर्थात् विपक्षी योद्धाओं के टुकड़े-टुकड़े कर दिये।

पृथ्वीराज की सेना के वीरों ने अद्भुत साहस दिखाया। पृथ्वीराज शशिवृता का हरण कर सफल मनोरथ हो चुके थे। अतः अपने सफल मनोरथ स्वामी पृथ्वीराज के कार्य के लिये सामन्तों ने विपक्ष की गज-सेना की पंक्तियों को समाप्त करते हुए भ्रम उत्पन्न कर दिया। उस समय पृथ्वीराज और उसके सामन्तों के रोम-रोम में रजोगुण भासित हो रहा था। इसके कारण ही विपक्षी योद्धाओं में भ्रम फैला हुआ था।

विशेष—१. 'घटिय' का संस्कृत रूप 'घटिका' है।

२. 'सोम', 'रोम' में अनुस्वार की प्रवृत्ति भाषा के प्राकृत रूप को स्पष्ट करती है।

३. अलंकार—(क) 'रन रोम' में छेकानुप्रास।

(ख) क्रत 'काम काज' में 'क', 'सामंत सूर सांई' में 'स' और 'रोम राजी' में 'र' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।

(ग) 'दल दंतिय' में छेकानुप्रास।

(घ) 'दंतिय पंतिय' में सभंग पद यमक।

४. वीर-रस की स्थल निष्पत्ति है।

## दूहा

रोम राज राजी भ्रमहि। थोर थनी ढुंढि बाल ॥
उतकंठा उतकंठ की। ते पुज्जी प्रतिपाल ॥१८७॥

शब्दार्थ—'रोम राज राजी भ्रमहि'—उस समय पृथ्वीराज चौहान के रोम-रोम में रजोगुण भासित हो रहा था। थोर थनी—छोटे-छोटे कुचों वाली। ढूंढ़—ढूंढ़ रही थी, देख रही थी। उतकंठा उतकंठ—उत्कंठा युक्त अभिलाषा रखने वाली। पुज्जी—पूर्ण कर दी। प्रतिपालक—प्रीति-पालक।

सन्दर्भ—चलते हुए भीषण संग्राम ने बीच में शशिवृता सतृष्ण नेत्रों से युद्ध से निकल चलने की अभिलाषा व्यक्त करती है। पृथ्वीराज उसे पूरी करने का संकल्प करते हैं :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



व्याख्या—पृथ्वीराज भीषण संग्राम में रत थे। उस समय उनके रोम-रोम से और शरीर के प्रत्येक अंग से रजोगुण टपक रहा था। उस छोटे-छोटे कुचों वाली शशिवृता ने राजा की ओर बड़े सतृष्ण नेत्रों से देखा। प्रेम-पालक पृथ्वीराज ने उत्कंठा से भरी हुई शशिवृता की अभिलाषा पूर्ण करदी।

काव्य-सौंदर्य—१. यहां शृंगार और वीर-रस की भाव-सन्धि सुन्दर बन पड़ी है। शृंगार और वीर परस्पर विरोधी रस हैं परन्तु यहां उनकी मैत्री स्थापित हो जाती है। वीर-रस की वेगवती धारा को कवि अनायास शृंगार रस की ओड़ मोड़ देता है।

२. अलंकार— क) 'रोम······राजी' में वृत्यानुप्रास।

(ख) 'थोर थनी' में 'थ' वर्ण की एक बार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास।

(ग) 'पुज्जो प्रतिपाज्ञ' में छेकानुप्रास।

(घ) 'उतकंठा उत्‍तकंठ' में यमक।

३. 'थोर थनी' में ग्रामत्व-दोष है। थन पशुओं के स्तन कहे जाते हैं, युवतियों के नहीं। जैसे गाय का थन, बकरी का थन आदि।

गाथा

आरंभ प्रारंभो। उ कंठा क्रिनयो वृतयं॥
साधा धरी सुधरयं। नन छुट्टै तीनयौं पनयं ॥१८८॥

शब्दार्थ—आरंभ प्रारंभो—युद्ध के प्रारम्भ में। क्रिनयो=की थी। 'उत्कंठा ······वृतय'—व्रतधारिणी शशिवृता ने पृथ्वीराज के अर्धांग में बैठने की अभिलाषा की थी। साधा—इच्छा, अभिलाषा पूरी कर दी। धरी सु धरयं—उसको धारण कर लिया अर्थात् अर्धांग में स्थान दे दिया। नन—नहीं। तीनयो—उसके। पनय—प्रण, अभिलाषा।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने शशिवृता की पृथ्वीराज के अर्धांग में बैठने की अभिलाषा और पृथ्वीराज का उसे पूरा करने का उल्लेख किया है:

व्याख्या—युद्ध प्रारम्भ होने से पूर्व उस व्रतधारिणी शशिवृता ने पृथ्वीराज के अर्धांग में बैठने की अभिलाषा की थी। पृथ्वीराज ने यह सोचकर कि कहीं शशिवृता की अभिलाषा टूट न जाय, उसको अपने अर्धांग में स्थान देकर पूरा किया।

काव्य-सौन्दर्य—१. यही हृदय के भावों का मनोवैज्ञानिक विवेचना है। प्रेमी अपनी प्रिया की प्रत्येक अभिलाषा को पूरा करने का ध्यान रखता है।

२. अलंकार—अनुप्रास।

३. 'वृतय' का संस्कृत रूप 'व्रतम्' है। 'पनय' का संस्कृत रूप 'प्रण' है।

४. वीर-रस के अन्तर्गत कवि ने शृंगार-रस की सुन्दर योजना की है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## दूहा

नह चल्लै पृथ्वीराज रिन । लज्ज लपट्टिय पाइ ॥
त्रिय जोरैं कर हथ्थ दो । चलि संभरिवै राइ ॥१८९॥

शब्दार्थ—नह—नहीं । चल्लै=हटा । रिन—रणक्षेत्र । लज्ज लपट्टिय पाइ—लज्जा ने पैरों को जकड़ लिया था । त्रिय—बाला शशिवृता । हथ्थ दो= दोनों हाथ । संभरिवै राइ—शाकंभरी नरेश ।

संदर्भ—यहां कवि ने पृथ्वीराज के प्रेम और. कर्त्तव्य-द्वन्द्व का निरूपण किया है :

व्याख्या—शशिवृता युद्ध-भूमि से चलने के लिये पृथ्वीराज से हाथ जोड़कर विनय करती है । एक ओर तो पृथ्वीराज के पैरों को क्षत्रियत्व की लज्जा ने जकड़ रखा है ।, परन्तु दूसरी ओर शशिवृता दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रही है कि हे शाकंभरी· नरेश आप यहां से चलिये । पृथ्वीराज को प्रेम और कर्त्तव्य के द्वन्द्व ने घेर लिया था ।

काव्य-सौन्दर्य—१. भाव-संधि एवं प्रेम और कर्त्तव्य के द्वन्द्व का सुन्दर चित्रण हुआ है ।

२. अलंकार—'लज्ज लपंट्टिय' में 'ल' वर्ण की एक वार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास ।

## दूहा

तूं वै एकह पन रहै । रंग कसुंभ प्रमान ॥
हौं नन छंडौं पास तुम । तीनों पनह समान ॥१९०॥

शब्दार्थ—वय—युवावस्था । एकह पन—एक ही रंग में । प्रमान—तरह । हौं—मैं । नन—नहीं । छंडौं=छोड़ती हूं ! पास तुम—तेरे समीप रहते हुए भी । तीनों पनह—तीन बातें—दान, खड्ग और स्वरूप

संदर्भ—इस छन्द में कवि ने लज्जा और युवावस्था के विवाद का वर्णन किया है :

व्याख्या—लज्जा वय से प्रश्न करती है कि हे वय ! तू भी कुमुद के पुष्प के समान सदैव एक सी बनीं रहती है । किन्तु मैं तेरे पास रहते हुए भी दान, खड्ग और स्वरूप—ये तीन बातें नहीं छोड़ती । मैं तीनों ही को एक प्रकार ग्रहण करती हूं ।

विशेष—१. युवती शशिवृता वय की प्रतीक हैं ।

२. लज्जा और वय का संवाद नाटकीयता लिए हुए है ।

३. 'तूं वै एकह······प्रमान' में उपमा अलंकार ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



दूहा

तूँ लज्जी मो सथ्थ है। दान षग्ग अरु रूप ॥
मों चल्लैं तीनों चलैं। सची चवै न भूप ॥१६१॥

शब्दार्थ—लज्जी=लज्जा। मो सथ्थ—मेरे साथ। षग्ग—तलवार। मों चल्लै—मेरे चलने से, वृद्धावस्था आने पर। संची—सच्ची बात। चवै न भूप—राजा से क्यों नहीं कहती।

संदर्भ—यहाँ वय का कथन लज्जा के प्रति है :

व्याख्या—वय लज्जा को उत्तर देती हुई कहती है कि दान, खड्ग-धारण तथा सौन्दर्य—इन तीनों में ही तू मेरे साथ है। मेरे चलने पर (युवावस्था के व्यतीत होने पर और बुढ़ापा आने पर) यह तीनों ही चलने लगते हैं। यह सच्ची बात तू राजा से क्यों नहीं कहती।

विशेष—१. वय और लज्जा का संवाद पृथ्वीराज को युद्ध-भूमि से हटने की नाटकीय पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है।

२. 'सथ्थ', 'चल्लै' और 'चवै' प्राकृत के शब्द हैं।

दूहा

परैं सुमर दोऊन दल। निढ्ढर देष्यौ बंध ॥
कौन भुजा बल जुध करैं। सुनि कमधज्ज अमुंद्ध ॥१६२॥

शब्दार्थ—सुमर—संस्कृत तत्सम रूप। 'समर'—युद्ध-भूमि। निढ्ढर—निड्डुरराय। देष्यौ—देखा। बंध वीरचन्द। जुध करैं—युद्ध कर रहे हो भमुंद्ध—अमूढ, बुद्धिमान।

संदर्भ—पृथ्वीराज को वय की बात माननी पड़ती है। वे शशिवृता को लेकर युद्ध-भूमि से चले जाते हैं। सामन्त निड्डुरराय वीरचन्द को समझाता हुआ कहता है कि अब अधिक रक्तपात करना व्यर्थ है :

व्याख्या—हे बुद्धिमान कमधज वीरचन्द। देखो, दोनों सेनाओं के असंख्य वीर युद्ध-भूमि में मृत पड़े हैं और राजा पृथ्वीराज चौहान भी शशिवृता को लेकर जा चुके हैं। अतः अब तुम किस भुजा का आश्रय लेकर युद्ध करना चाहते हो? अब व्यर्थ में रक्तपात न करके युद्ध बन्द कर देना चाहिए।

विशेष—१. इस दोहे में कवि ने रूप और यौवन की विजय दिखाई है। पृथ्वीराज को शशिवृता की इच्छा पर ही युद्ध-भूमि से हटना पड़ता है।

२. पृथ्वीराज का शशिवृता सहित जाना उनकी विजय सूचित करता है।

३. 'जुध' का संस्कृत तत्सम रूप 'युद्ध' है।

४. 'अमुद्ध' शब्द प्राकृत का है और भाषा की प्राचीनता सूचित करता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## दूहा

बाला लै प्रथिराज मय । गहिय बग्ग कमधज्ज ।।
रोस रीस विरसोज मय । रह बाजे अनवज्ज ।।१८३।।

शब्दार्थ—बाला लै प्रथिराज गय—बाला शशिवृता को लेकर पृथ्वीराज चले गये । बग्ग—घोड़े की लगाम । गहिय बग्ग कमधज्ज—वीरचन्द घोड़े की लगाम कसकर पृथ्वीराज को घेरने के लिये आगे बढ़ा । रोस रीस—क्रोध के आवेश के कारण । विरसोग—नीरसत्ता । रह बाजे अनवज्ज—बाजे बिना बजे ही रह गये ।

सन्दर्भ—जब वीरचन्द को यह पता लगता है कि पृथ्वीराज शशिवृता-सहित युद्ध-भूमि से निकल गये हैं, वह उनको आगे बढ़कर घेरने के लिये अपने घोड़े को तेजी से आगे बढ़ा देता है :

व्याख्या—जब वीरचंद को यह ज्ञात हुआ कि पृथ्वीराज शशिवृता को लेकर युद्ध-भूमि से चले गये हैं, वह आगे बढ़कर उनको घेरने के लिए आतुर हो उठता है । वह घोड़े की लगाम खींचकर वेग से आगे बढ़ता है । उस समय क्रोध के आवेश के कारण सेना में नीरसता का वातावरण छा जाता है और बाजे बिना बजे ही रह जाते हैं ।

विशेष—१. वीरचन्द की शशिवृता के प्रति लगन द्रष्टव्य है । वह उसी के कारण पृथ्वीराज को घेरने के लिये घोड़ा वेग से आगे बढ़ाता है ।

२. 'बग्ग' और 'अनवज्ज' में व्यंजन-द्वित्व की प्रकृति भाषा की प्राचीनता को सूचित करती है ।

३, 'रोस रीस' में 'र' वर्ण की एक बार आवृति होने से वृत्यानुप्रास ।

## कवित्त

अद्ध कोस नृप अग्ग । बीर ठढ्यो करि ठढ्ढो ।।
मद समूह गजराज । छंडि पट्टे बल गढ्ढो ।।
लाज बंधि संकरिय । बीर बंध्यो सु अष्ट कसि ।।
अरिन बीर खंडे न । क्रन्न मंडे दिल्ली दिसि ।।
मनमत्य महावत बंधि अति । मन मत्तो उन को धरै ।।
घन घाइ रुधिर छुट्टै परे । अमर पुहप पूजा करै ।।१८४।।

शब्दार्थ—अद्ध कोस—आधा कोस । अग्ग=आगे से । बीर—वीरचन्द । ठढ्यो करि—घेरकर । ठढ्ढो—खड़ा हो गया । 'बीर······ठढ्ढो'—वीरचन्द पृथ्वीराज को घेरकर खड़ा हो गया । मद समूह गजराज—मतवाले हाथियों के समूह । छंडि—काट दिया । गढ्ढो—गढ़ा, दृढ़ । "छंडि······गढ्ढो"—वीरचन्द की सेना को काट कर फेंक दिया । संकरिय—शृंखला, जंजीर । लाज बंधि संकरिय—लज्जा की शृंखलाओं में जकड़ा हुआ था । बीर—वीरचन्द । बंध्यो बांध लिया । अष्ट—आक्रमण करने वाले हाथी के आठ अंग—दो दांत, सूंड, चार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पैर—राजाओं के आठ कार्य—१. दुष्टों को दंड देना, २. योग्य का सम्मान करना, ३. सम्यक रूप से प्रजापालन, ४. यज्ञादि के द्वारा देवताओं को प्रसन्न करना, ५. न्याय पूर्वक धन-संग्रह करना, ६. राजाओं को आधीन करना, ७. शत्रुओं को दबाना, ८. मित्रों को प्रसन्न करना। अरिन वीर छडँ—शत्रुओं को वीर की भांति छाँट रहा था, नष्ट कर रहा था। क्रन्न—कान। मंडँ—लगाये। न क्रन्न मंडँ दिलीय दिसि—दिल्ली की ओर कान लगाये हुये नहीं था। मनमत्थ महावत—कामदेव रूपी महावत। बंधि अति—वश में कर रहा था। मन मत्तौ-मतवाला। उनको धरँ—उस कामदेव रूपी महावत को दबा लेता था। घन घाइ—बहुत घाव। छुटटँ परँ—छूट पड़ा, बह रहा था। अमर पुहप पूजा करँ—देवता पुष्पों की वर्षा कर पूजा कर रहे थे।

सन्दर्भ—इस छन्द में वीरचन्द द्वारा पृथ्वीराज को घेरने और पृथ्वीराज का उसको सेना को काट डालने के प्रसंग का कवि ने वर्णन किया है :

व्याख्या—युद्ध-भूमि से निकलकर पृथ्वीराज आधा कोस ही आगे बढ़ पाये थे। वीरचन्द आगे बढ़कर उनको घेरकर खड़ा हो जाता है। परन्तु वीर पृथ्वीराज चौहान अपने दृढ़ पट्टे के ऊपर बल पर वीरचन्द के मतवाले श्रेष्ठ हाथियों के समूह को काट कर फेंक देते हैं। शशिवृता के साथ होने से पृथ्वीराज यद्यपि उस समय लज्जा की श्रृंखलाओं में जकड़े हुऐ थे। इतने पर भी आक्रमण करने वाले हाथी के अष्टांग की भांति वे राजाओं के अष्ट कर्म को पालन करने वाले हैं, उन कर्मों के बल से ही वे वीरचन्द को कसकर बांध लेते हैं।

पृथ्वीराज बड़ी वीरता से शत्रुओं को नष्ट कर देते हैं। उस समय उनके कान दिल्ली की ओर नहीं लगे थे। भाव यह है कि उस समय उनको शशिवृता को लेकर दिल्ली की ओर जाने का ध्यान तक न था। वे स्थिर होकर युद्ध में डटे हुये थे।

कामदेव रूपी महावत मतवाले हाथी के समान युद्ध की मस्ती में मस्त उस राजा पृथ्वीराज को अपने वश में कर रहा था। किन्तु उस मतवाले राजा ने उस समय कामदेव रूपी पीलवान को भी अपने वश में कर लिया था। तात्पर्य यह है कि इस समय युद्ध करते हुए पृथ्वीराज ने कामवासनाओं पर विजय प्राप्त कर ली थी।

पृथ्वीराज शत्रुओं को घने घाव दे रहा था। पृथ्वीराज के प्रहार से शत्रुओं के शरीर से रक्त प्रवाहित हो रहा था। पृथ्वीराज की युद्ध में ऐसी वीरता देखकर देवता आकाश से पुष्पों की वर्षा करते हुये उसकी पूजा कर रहे थे।

काव्य-सौन्दर्य—१. वीर-रस—पृथ्वीराज आश्रय, वीरचन्द आलम्बन, पृथ्वीराज के प्रहार, शत्रुओं को काटना और वीरचन्द को बांधना अनुभाव।

२. युद्ध का सजीव चित्र प्रस्तुत हो रहा है।

३. पृथ्वीराज के शौर्य-पराक्रम का बड़ा ओजपूर्ण वर्णन हुआ है।

४. अलंकार—(अ) 'मनमत्थ महावत' में रूपक।

(ब) अनुप्रास।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



### कवित्त

षूब राज प्रथिराज । षूब जैत्रंद बंध बर ॥
षूब सूर सामंत । षूब नृपु सेना पंग बर ॥
षूब सेन ढंढोरि । षूब झोरी करि डारिय ॥
षूब षेत ब्रिधि गाम । बान गंगा पथ झारिय ॥
आसरे आस छडिय नृपति । विपति संपति जानी भरय ॥
सुठिहार राज प्रथिराज को । घरं सबइ चौंडोल घर ॥१६५॥

शब्दार्थ—षूब—धन्य है। षूब राज प्रथिराज—राजा पृथ्वीराज धन्य है। षूब जैचन्द बंध बर—जयचन्द का भाई वीरचन्द धन्य है। ढंढोरि—परख लिया। झोरी करि डारिय—झोली में उठाने योग्य हो गये। बिधि गाम—ब्रह्मगाँव—मध्य प्रदेश में बाण-गंगा के तट का एक गाँव—यहीं पृथ्वीराज और वीरचन्द का युद्ध हुआ था। झारिय—अस्त्र शस्त्रों की झड़ी लगा दी। आसरे—दुर्ग, दिल्ली। छडिय-छोड़ दी। नृपति—राजा पृथ्वीराज। विपति संपति जानी भरय—वीरों ने उस विपत्ति को संकट माना। सुठिहार—सूँठालिया—मध्य-प्रदेश का एक छोटा सा राज्य। चौंडोल—डोली।

सन्दर्भ—इस कवित्त में चन्द ने पृथ्वीराज, वीरचन्द, वीर सामन्तों और युद्ध स्थल को धन्य-धन्य कहकर प्रशंसा की है तथा सुठियार के राजा द्वारा पृथ्वीराज तथा उसके घायल सामन्तों को डोली में अपने घर लेजाकर उनका उपचार करने के प्रसंग का उल्लेख किया है :

व्याख्या—पृथ्वीराज धन्य है, जिन्होंने वाण-गंगा तट के युद्ध में वीर विपक्षी को पराजित किया और जयचन्द का भाई श्रेष्ठ वीर वीरचन्द भी धन्य है, जिसने जमकर पृथ्वीराज से लोहा लिया। वीरता से युद्ध करने वाले पृथ्वीराज चौहान के सूर सामन्त और राजा वीरचन्द की सेना भी अपना शौर्य प्रदर्शन के कारण धन्य है। दोनों सेना के योद्धा और सामन्तों ने वीरता से युद्ध किया। वे घायल होकर झोली में उठाने योग्य हो गये।

धन्य है ! ब्रह्मगांव का क्षेत्र तथा बाण गंगा का तट, जहां योद्धाओं ने शस्त्रों की झड़ी लगा दी। युद्ध इतनी भीषणता से हुआ कि पृथ्वीराज को दिल्ली पहुँचने की आशा न रही। वीर-योद्धाओं ने इस विपत्ति को ही सम्पत्ति माना अर्थात् प्राणों का मोह छोड़कर युद्ध में अपने प्राणों का बलिदान किया। युद्ध की समाप्ति पर सुठिहार के राजा पृथ्वीराज तथा उनके घायल सामन्तों को डोली में उठवाकर उपचार के लिये अपने घर ले गये।

विशेष—१. यहां सामन्ती युग के युद्ध शौर्य पर प्रकाश पड़ता है। युद्ध में वीरता और शौर्य का प्रदर्शन करने वाले पक्षी और विपक्षी दोनों ही प्रशंसा के पात्र और धन्य होते थे।

२. युद्ध के भौगोलिक स्थान का परिचय दिया गया है।

३. अलंकार—(क) अनुप्रास।

(ख) स्वभावोक्ति।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## दूहा

चाहुआन चतुरंग जिति। निगम बोध रहि राज॥
बर शशिवृत जित्तिगो। धाम सु ढिल्ली साज ॥१९६॥

शब्दार्थ—जित्ति—जीत गया। चहुआन चतुरंग जिति—पृथ्वीराज ने वीरचन्द की चतुरंगिणी सेना पर विजय प्राप्त की। निगम बोध—एक स्थान का नाम। निगम बोध रहि राज - पृथ्वीराज ने निगम बोध पर डेरा डाला। जित्तिगो—जीत ली। धाम सु छिल्ली साज—दिल्ली के प्रासाद सजाये गये।

सन्दर्भ—इस दोहे में कवि ने पृथ्वीराज द्वारा वीरचन्द की चतुरंगिणी सेना पर विजय प्राप्त कर उनके दिल्ली और दिल्ली के प्रासादों को सजाये जाने के प्रसंग का उल्लेख किया है :

व्याख्या—पृथ्वीराज चौहान ने वीरचन्द की चतुरंगिणी सेना पर विजय प्राप्त की। दिल्ली को प्रस्थान करते हुए उन्होंने निगम बोध नामक स्थान पर डेरा डालकर विश्राम किया। पृथ्वीराज ने शशिवृता को जीतकर विवाह कर लिया है। पृथ्वीराज के विजयी होकर आने का समाचार सुनकर उनके स्वागत के लिये दिल्ली के प्रासादों को सजाया गया।

विशेष—१. हाथी, रथ, घोड़े और पैदलों से गठित सेना चतुरंगिणी सेना कही जाती है।

२. राजा के विजयी होकर लौटने पर उसके स्वागत में राजधानी को सजाने की प्रथा थी।

३. अलंकार—अनुप्रास।

## दूहा

सारिन चालैं पंस बर। सारि पंस बर भोग॥
सुन्नर सूर सामन्त लै। करि ढिल्ली प्रतिजोग ॥१९७॥

शब्दार्थ—सारिन—सारि, चौपड़ के घर, गोटें। पंस—पासे। बर—बल। 'सारिन······बर'—राजा पासे के बल पर सारें चलते हैं। भोग—भोगते हैं, चली जाती हैं। 'सारि पंस बर भोग' सारों के अच्छे दांव पर ही पासे की चालें चली जाती हैं। सुन्नर—श्रेष्ठ। करि—कर रखा। प्रतिजोग—योग्य, अच्छा।

सन्दर्भ—इस छन्द में कवि ने पृथ्वीराज और सामन्तों के परस्पर के मधुर सम्बन्ध एवं अच्छे सम्पर्क का उल्लेख किया है :

व्याख्या—जिस प्रकार पासे के बल पर सारें चली जाती हैं और सारों के अच्छे दांव पर ही पासे की चालें चली जाती हैं, उसी प्रकार राजा पृथ्वीराज ने अपने वीर सामन्तों सहित दिल्ली राज्य में अच्छा सम्पर्क स्थापित कर रखा था। अर्थात् जिस प्रकार पासे और सारें परस्पर में सम्बद्ध हैं, तथा एक के बल से दूसरे का बल है, उसी प्रकार सामन्तों की शक्ति से पृथ्वीराज और पृथ्वीराज की शक्ति से सामन्तों का महत्व है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विशेष—१. अलंकार—(क) सम्पूर्ण दोहे में निदर्शना अलंकार है।
(ख) 'सुवर······सामन्त' में 'स' वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास।
२. राजा और सामन्तों की संयुक्त शक्ति के महत्व का प्रतिपादन है।

## दूहा

जै जै जस लद्धो सुबर। बैर नृपति सुरतान॥
सुवर बैर बर बड्ढयौ। सुवर जित्त चहुआंन॥१६८॥

शब्दार्थ—जै जस—विजय का यश। लद्धो—प्राप्त किया। सुबर—उस समय। नृपति—पृथ्वीराज चौहान। सुरतान। सुल्तान गोरी। सुवर— बलशाली जयचन्द। बढ्ढयौ—शत्रुता बढ़ाई। जित्त—विजय प्राप्त की।

सन्दर्भ—इस दोहे में पृथ्वीराज के शौर्य-प्रकाशन के अन्तर्गत उनकी सुल्तान गोरी और जयचन्द पर बारम्बार विजय का उल्लेख किया गया है :

व्याख्या—जब-जब सुल्तान गोरी शत्रुता बढ़ाकर पृथ्वीराज पर चढ़ आया और युद्ध हुआ, तब-तब पृथ्वीराज ने उसे पराजित कर विजय-यश प्राप्त किया। इसी प्रकार कन्नोजेश्वर जयचन्द से जब जब शत्रुता बढ़ी और युद्ध हुआ, तब-तब पृथ्वीराज विजयी हुये।

विशेष—१. पृथ्वीराज के वीर चरित्र का प्रकाशन है।
२. अलंकार—अनुप्रास।
३. 'लद्धो' अपभ्रंश का शब्द है।

## अरिल्ल

भई जीति चहुआंन। अरिज भजे अभंग भर॥
जै जै सुर वषान। देव नषैं सुमन्न वर॥
लै शशिवृता राज। अप्प दिल्ली संपत्तो॥
अरि अवनि कोन मंडै मनहु। षग्ग दाग अरि षंडइय॥
कवि चंद दंद दारुन कयहि। इक अडंड कारि डंडइय॥१६९॥

शब्दार्थ—अरिज—शत्रु। भजे—विनाश किया। अभंग भर—कभी हार न मानने वाले योद्धा। अरिज भंजे अभंग भर—ऐसे वीर जिन्होंने कभी पराजय नहीं मानी। जै जै सूर वषान—वीर सामन्तों ने जय-जयकार किया। नषैं—बरसाये। देव नषैं सुमन्न वर—देवताओं ने सुन्दर पुष्पों की वर्षा की। राज—राजा पृथ्वीराज। दिल्ली संपत्तो—दिल्ली पहुँचा। अप्प—स्वयं। अरि शत्रु। अवनि—पृथ्वी। मंडै—अभिनन्दित करता था। मनहु—नहीं। अरि अवनि मंडै—पृथ्वी पर ऐसा कौन शत्रु है, जो पृथ्वीराज का अभिनन्दन न करता हो। षग्ग दाग—तलवार से दग्ध करना अर्थात तलवार से काट देना। अरि षंडइय—शत्रु को खण्ड-खण्ड कर देता था। दंद दारुन - भीषण युद्ध। कयहि— कहता है, वर्णन करता है। अडंड—अदण्डित। डंडइय—दण्डित करता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सन्दर्भ—शशिवृता प्रकरण के इस अन्तिम छन्द में चन्द पृथ्वीराज के शौर्य-पराक्रम का वर्णन करते हुए उनकी शत्रु विनाशक शक्ति और पराजित शत्रु के प्रति उदारता का वर्णन किया है :

व्याख्या—वीरचन्द से भीषण युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की विजय हुई। उसने ऐसे ऐसे विपक्षी वीर योद्धाओं का विनाश किया, जिनको कभी युद्ध में न तो घाव लगा था और न जिनकी हार ही हुई थी। पृथ्वीराज के समस्त सामन्तों ने उसकी जय-जयकार की, और देवताओं ने उनकी वीरता पर पुष्पों की वृष्टि की।

राजा पृथ्वीराज विजयी होकर शशिवृता को लेकर दिल्ली आ गये। पृथ्वी के ऊपर ऐसा कौन शत्रु है, जो उनका अभिनन्दन नहीं करता। वे अपनी तलवार से शत्रुओं को खडित कर उनको नष्ट कर देते थे। चन्द कवि कहते है कि उनके भीषण युद्ध को देखकर शत्रु कंपायमान हो जाते थे। वे शत्रुओं को अपने वश में करके किसी को दण्डित करते थे और किसी को बिना दण्ड दिये ही छोड़ देते थे।

विशेष—इस कवित्त में चौथी पंक्ति छूटी हुई है। अन्य संस्करणों में यह पंक्ति निम्न प्रकार मिलती है :

"अति तोरन आनन्द। चित्त रत्तौ रस मत्तौ।।"

अर्थ—जब पृथ्वीराज शशिवृता को लेकर दिल्ली पहुंचे, तब वहां तोरणोत्सव मनाया गया। तदन्तर पृथ्वीराज नवपरिणीता के रस (प्रेम) में मतवाले हो गये।

२. पृथ्वीराज की वीरता और शौर्य का प्रकाशन हुआ है।

३. अलंकार—अनुप्रास।

४. 'पग्ग', 'षंडइय' अपभ्रंश के शब्द हैं।

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# आलोचनात्मक अध्ययन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# १

# जीवन वृत्त

**प्रश्न १—चन्दबरदाई के जीवन-वृत्त पर प्रकाश डालिए।**

**उत्तर—इतिहास मौन है**—हिन्दी के प्रथम महाकवि चन्दवरदाई के जीवन-वृत के सम्बन्ध में इतिहास मौन है। इनके द्वारा निर्मित 'पृथ्वीराज रासो' के आधार पर ही इनके जीवन के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि चन्दवरदाई के विषय में वहिर्साक्ष्य नहीं के बराबर है। हिन्दी के प्रथम महाकाव्य 'पृथ्वीराज रासो' के आधार पर ही इनके जन्म-समय, जन्म-स्थान आदि के विषय में जाना जा सकता है। आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' में इनके जीवन के विषय में केवल इतना लिखा है कि "रासो के अनुसार यह जाति के जागत नामक गोत्र के थे। इनके पूर्वजों की भूमि पंजाब थी, जहां लाहौर में इनका जन्म हुआ था। इनका और महाराज पृथ्वीराज का जन्म एक ही दिन हुआ था और दोनों ने एक ही दिन यह संसार भी छोड़ा था। ये महाराज पृथ्वीराज के राजकवि ही नहीं, उनके सखी और सामन्त भी थे, तथा षट्भाषा, व्याकरण, काव्य, साहित्य, छन्द शास्त्र, ज्योतिष, पुराण, नाटक आदि अनेक विद्याओं में पारंगत थे। इन्हें जालंधरी देवी का इष्ट था, जिसकी कृपा से ये अदृष्ट-काव्य भी कह सकते थे। इनका जीवन पृथ्वीराज के साथ ऐसा मिला-जुला था कि अलग नहीं किया जा सकता है। युद्ध में, आखेट में, सभा में, यात्रा में सदा महाराज के साथ रहते थे. और जहां जो बातें होती थीं, सब में सम्मिलित रहते थे।"

शुक्लजी का उपर्युक्त कथन यद्यपि अधिकांश में सत्य है, तथापि विद्वानों ने विश्लेषणात्मक, अध्ययन के आधार पर चन्द के जीवन के सम्बन्ध में अधिक विस्तार के साथ जानकारी प्राप्त की है। इस विवेचना को ध्यान में रखकर हम चन्दबरदाई के जीवन-वृत्त का अध्ययन करते हैं।

**चन्दबरदाई का जन्म-स्थान**

इनके पूर्वज पंजाब के रहने वाले थे और चन्दवरदाई का जन्म लाहौर में हुआ था। पृथ्वीराज रासो के निम्नलिखित छन्द में इनके जन्म-स्थान का स्पष्ट उल्लेख है—

> हुअ निड्डर कनवज्ज जैत सलप लब्बूगढ़।
> मंडोवर परिहार करपि पंगुर हाहुलि ढिढ़॥
> वलिभद्र सु नागौर चन्द उप्पजि लाहौरह।
> दिल्लय अत्ताताइ वियाधर सांनत सोरह॥

इत्यादि (छन्द ५८४, समय—१)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री ने सन् १६०६ से सन् १६१३ तक प्राचीन ऐतिहासिक काव्यों की खोज मे राजपूताने की तीन यात्राएं की थीं। बंगाल की रॉयल ऐशियाटिक सोसाइटी ने इन यात्राओं का विवरण प्रकाशित किया था। इस वर्णन का उल्लेख करते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि "इस विवरण में 'पृथ्वीराज रासो' के विषय में बहुत कुछ लिखा है और कहा गया है कि कोई कोई तो चन्द्र के पूर्व पुरुषों को मगध से आया हुआ बताते हैं, यह पृथ्वीराज रासो में लिखा है कि चन्द का जन्म लाहौर में हुआ था।"

कहते हैं कि चन्दवरदाई पृथ्वीराज के पिता सोमेश्वर के समय में राजपूताने में आया था। पहले वह सोमेश्वर का दरबारी बना और बाद में पृथ्वीराज का मन्त्री सखी और राजकवि हुआ। अतः यह निर्विवाद सत्य है कि चन्दवरदाई का जन्म स्थान लाहौर है।

जन्म संवत्—आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी-साहित्य के इतिहास के चन्दवरदाई का समय संवत १२२५ से १२४९ तक लिखा है। इस प्रकार चन्दवरदाई की आयु केवल २४ वर्ष ठहरती है। यह तर्क सम्मत प्रतीत नहीं होता है। शुक्ल जी स्वयं लिखते हैं कि चन्दवरदाई सोमेश्वर तथा उसके पुत्र पृथ्वीराज का दरबारी रहा था। २४ वर्ष की अल्पायु में दो पीढ़ियां देख लेना यद्यपि असम्भव तो नहीं है, तथापि विशेष युक्तियुक्त भी प्रतीत नहीं होता है।

'पृथ्वीराज रासो' के अन्तर्गत उल्लेखों के अनुसार चन्दवरदाई दानव-क्षत्रिय वंश में उत्पन्न ढुंढा नामक श्रेष्ठ राक्षस की जिह्वा से उत्पन्न हुए थे। रासो के आधार पर ढुंढा राक्षस ने काशी में अपने अंगों को काटकर हवन किया था। इसकी ज्योति से पृथ्वीराज, हड्डियों से शूर सामंत, जिह्वा से कविवर चन्द और रूप से संयुक्ता की उत्पत्ति हुई थी।

इस वर्णन के आधार पर पृथ्वीराज और चन्दवरदाई की समवयस्कता स्पष्ट हो जाती है। एक छन्द के अनुसार तो दोनों का जन्म संवत् ही क्यों, जन्म दिन भी एक ही ठहरता है।

दानव कुल क्षत्रीय नाम ढुंढा रष्षस वर।
तिहि सु जोत प्रथिराज सूर सामंत अस्ति भर।
जीह जोति कवि चंद रूप संजोगि भोगि भ्रम।
इक्क दीह उत्पन्न इक्क दीहे समाय क्रम॥

इत्यादि (१/६२)

इसका समर्थन रासो में एक अन्य स्थान पर भी प्राप्त हो जाता है—

ज्यों भयो जनम कवि चन्द को, भयो जनम सामन्त सब।
इक घरन जनम मरनह सु हक, चलहि कित्ति ससि लगि रव।

'रासो' के अनुसार पृथ्वीराज का जन्म अनन्द विक्रम शाक ११९५ निकलता है—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



एकादस सै पंच दह विक्रम साक अनंद।
तिहि रिपु जयपुर हरन को भए प्रिथिराज नरिंद्र।

(१/६९४)

इस प्रकार चन्दवरदाई का जन्म अनन्द संवत् १११५ अथवा विक्रमी संवत् १२०६ निकलता है :

'पृथ्वीराज विजय' नामक ग्रन्थ के अनुसार पृथ्वीराज का जन्म ज्येष्ठ मास की द्वादश को हुआ था। उसमें संवत् का उल्लेख नहीं है। 'बलभद्र विलास' नामक ग्रन्थ के अनुसार पृथ्वीराज का जन्म माघ शुक्ला त्रयोदशी संवत् ११३२ को हुआ था। पृथ्वीराज की मृत्यु संवत् ११९२ सुनिश्चित है। इस प्रकार पृथ्वीराज एवं चन्द की आयु १६७ वर्ष ठहरती है, जो असंगत है। जब तक कोई अन्य अधिक ठोस बहिरंग प्रमाण प्राप्त न हो, तब तक चंदवरदाई का जन्म १२०६ वि० ही मानना अधिक समीचीन है।

नाम—'चन्दवरदाई' का वास्तविक नाम पृथ्वीचन्द अथवा पृथ्वीभट्ट था। परन्तु उसने अपने नाम का उल्लेख केवल 'चन्द' शब्द द्वारा ही किया है। 'रासो' में भी चन्द नाम का ही उल्लेख मिलता है। 'रासो' में यत्र-तत्र चन्दवरदाई के लिये 'पहुमि वन्दीजन' अथवा 'पृथ्वी कवि' नामों का उल्लेख भी मिलता है।

चन्द को देवी की सिद्धि प्राप्त थी और उसने देवी के दर्शन किए थे। देवी सरस्वती का वर-दानी 'चन्द' आगे चलकर चन्दवरदाई कहलाया। अतः 'वरदाई' उसकी उपाधि थी। 'रासो' में उपलब्ध अनेक वाक्यों के आधार पर यह सिद्ध हो जाता है। देवी को निम्नलिखित वाक्य द्रष्टव्य है।

बिजै है मति राज, इक तिजो बहु धरयो।
मोहि चन्दवरदाई, सु, अन्तर मति शरयो॥

(छन्द ७०७, समय ५८)

महोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री ने 'वरदायी' शब्द का स्पष्टीकरण किया है। उसके अनुसार 'वरदायी' सम्भवतः अशुद्ध है, उसे 'वरदिया' होना चाहिए। पठानों में वरदायी नामक एक जाति होती है। ये लोग अपने को चन्द का वंशी कहते हैं और अपने पूर्व पुरुषों को बलात् मुसलमान बना लिया जाना बतलाते हैं।

जो भी हो, यह मत महोपाध्याय पं० हरप्रसादजी को भी मान्य है कि चन्द ज्वालादेवी का वरदानी था। पृथ्वीराज रासो के अनुसार तो वह दुर्गा और सरस्वती दोनों का वरदानी था। परन्तु कवि होने का वरदान तो उसे वस्तुतः देवी सरस्वती द्वारा ही मिलता था—

या पुच्छी कवि चन्द को, हिय हरष्षत सुषदाय।
जु कछु भयो सु कहो तुम, तुम बानी वरदाय॥

(छन्द ४ समय २२)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सारांश यह है कि कवि का नाम 'चन्द' था और वह 'वरदायी' की पदवी धारण करके 'चन्दवरदायी' नाम से विख्यात हुआ।

### चन्दवरदाई के माता-पिता

'पृथ्वीराज रासो' में चन्दवरदाई की माता के नाम का कोई उल्लेख नहीं है। पिता के नाम का उल्लेख तीन प्रकार से मिलता है—(क) वेन (ख) राव तथा (ग) मल्हा 'वेन' नाम संदिग्ध है। 'मल्ह' नाम स्पष्टतः मिलता है :

> विन आयस प्रथिराज कै धाय नवायो बाज।
> को रहषे सुत मल्ह को, सुर नूर मुख लाज॥
>
> (छन्द १८६४ समय ६१)

इसकी पुष्टि में एक छन्द सं० ५ समय ६७ के भी उद्धत किया जाता है। इस प्रकार चन्दवरदाई के पिता का नाम 'मल्ह' ही ठहरता है।

### चन्दवरदाई की जाति

चन्दवरदाई भट्ट जाति के थे। 'पृथ्वीराज रासो' में इस सम्बन्ध में अनेक उद्धारण उपलब्ध हो सकते हैं।

एक बार चन्द अपने स्वामी एवं सखा पृथ्वीराज के साथ शिकार खेलने गये। मार्ग भूल गये और एक ऋषि के आश्रम में जा पहुँचे। ऋषि को उन्होंने जो अपना परिचय दिया, उसमें 'भट्ट' जाति का स्पष्ट उल्लेख है।

> भट्ट जाति कवियन नृपति,, नाथ नाम मो चन्द।
> आलष में गंगा वही, अत्र गए सत्र दंद॥
>
> (छन्द २५ समय ६)

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल प्रवृति विद्वानों ने चन्दवरदाई को भट्ट जाति जगात गोत्र में उत्पन्न माना है, परन्तु रासो में इसका कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिलता है।

### चन्दवरदाई का धार्मिक मत

चन्दवरदाई ने रासों में अनेक देवताओं की स्तुति की है। इस कारण यह निश्चय करने में कुछ कठिनाई होती स्वाभाविक है कि वह किस मत के अनुयायी थे। इसका समाधान इस प्रकार किया जा सकता है कि उनका वही धर्म था जो धर्म उनके स्वामी एवं सखा पृथ्वीराज का था। अतः वह शैव थे।

### चन्दवरदाई का विवाह एवं सन्तान

चन्दवरदाई के दो विवाह हुए थे। उनकी पत्नियों के नाम कमला अथवा मेवा तथा गोरी अर्थात् राजोरी था। उनकी दूसरी पत्नी गोरी उनके काव्य की प्रेरणा थी। इस कारण वह उससे अपेक्षाकृत अधिक प्रेम करते थे। उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि गोरी ही पृथ्वीराज रासो के सृजन की मूल प्रेरणा थी। चन्दवरदाई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



की उक्त दोनों पत्नियों द्वारा दस पुत्रों का जन्म हुआ। इनके नामों का उल्लेख एक छन्द में किया गया है। इनके नाम हैं (१) सूर (२) सुन्दर (३) सुजान (४) जल्हन (५) वल्ह (६) बलिभद्र (७) केहरि (८) वीरचन्द (९) अवधूत तथा १० गुनराज। कुछ विद्वानों के मतानुसार उनके पुत्री भी थी जिसका नाम राजबाई था।

जल्हन उनको सर्वाधिक प्रिय था, क्योंकि वह सब पुत्रों में अत्यन्त गुणज्ञ एक विद्वान था। वह गजनी जाते समय उसी को पुस्तक सौंप गये थे :

दहति पुत्र कवि चन्द के सुन्दर रूप सुजान।
इक जल्लह गुन बावरो, गुन समन्द सषि मान॥
आदि अन्त लगि वृत मन, वृन्नि गुनी गुन राज॥
पुस्तक जल्हन हस्त दै चलि गज्जन नृप क़ाज॥

(छन्द ८४. ८५, समय ६७)

**चन्दरबाई के वंशज**

पृथ्वीराज ने नागौर बसाया था और वहीं बहुत सी भूमि चन्द को दी थी। नागौर मे अब चन्द वंशज रहते हैं। इनके वंशधर प० नानूराम भट्ट से महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री ने भेट की थी और चन्द का वंश वृक्ष प्राप्त किया था नानूराम का कहना है कि चन्द के पुत्रों की संख्या दस न होकर केवल चार थी। ना इनमें एक मुसलमान हो गया, दूसरे का पता नहीं तीसरे के वंशज आमेर मे जा बसे और चौथे पुत्र जल्ह का पं० नानूराम द्वारा प्राप्त वंश-वृक्ष इस प्रकार है

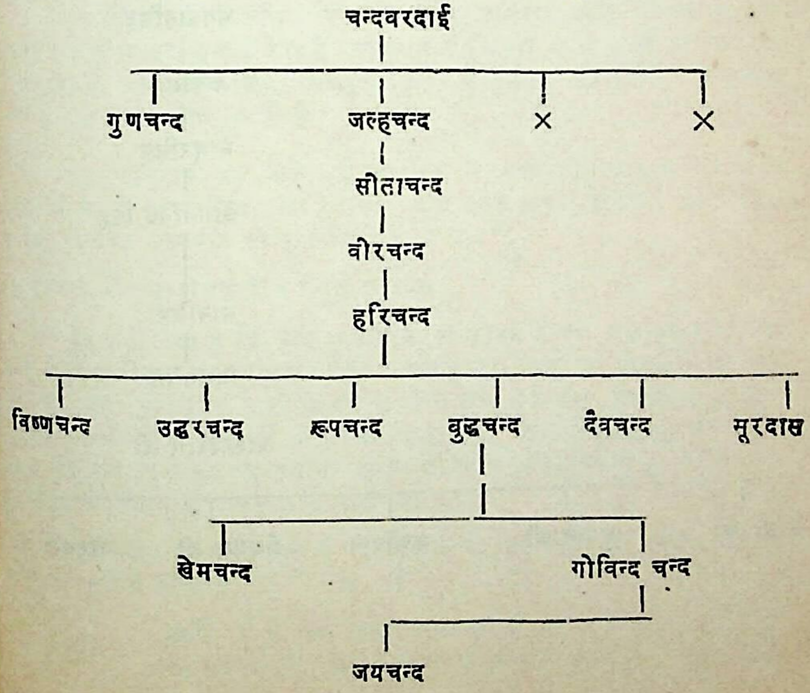


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



- मदनचन्द
  - चौथचन्द
  - बेनीचन्द
    - गोकुलचन्द
      - कर्णचन्द
        - गुणगंगचन्द
          - जगन्नाथ
        - मोहनचन्द
          - रामेश्वर
            - गंगाधर
              - भगवानसिंह
                - कर्मसिंह
                  - माथुरसिंह
                    - वाग्गोविंद सिंह
                      - मानसिंह
                        - विजयसिंह
                          - आनन्दराम जी
                            - आसो जी
                            - गुमान जी
                            - कर्णीदान
                            - जैयमल जी
                            - वीरचन्द जी
    - वसुचन्द
    - लेखचन्द
- शिवचन्द
- बलदेवचन्द

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



घमण्डीराम जी — बुध जी

घमण्डीराम जी
|
वृद्धचन्द जी
|
नानूराम

प्रो० रामशंकर त्रिपाठी ने जो वंशवृक्ष सरस्वती (नवम्बर १९१९) में प्रकाशित किया था, उसमें नानूराम जी के आगे की परम्परा का भी उल्लेख है :

नानूराम
|
रामसिंह (दत्तक पुत्र)
|
माधोसिंह — मोहन सिंह — प्रभुदयाल

सूरदास कृत 'साहित्यलहरी' में एक पद के अन्तर्गत सूरदास की वंशावली दी गई है। उसके अनुसार 'सूरदास' चन्दवरदायी के वशंज सिद्ध होते हैं।

'साहित्यलहरी' में वर्णित परम्परा और नानूराम प्रदत्त परम्परा के मध्य केवल एक ही अन्तर दिखाई देता है। नानूराम ने जिनको जयचन्द की वंश-परम्परा में बताया है, उनको सूरदासकृत 'साहित्यलहरी' में गुणचंद की परम्परा में बताया गया है। शेष नाम प्राय: वे ही हैं।

पं० नानूराम का कहना है कि चंद ने कुल तीन-चार हजार श्लोक संख्या में अपना काव्य लिखा था। उसके बाद उसके लड़के जल्हन ने अन्तिम दस 'समय' लिखकर उस ग्रन्थ को पूरा किया।

चन्दवरदाई और पृथ्वीराज के मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध

यह सर्वविदित है कि चन्द पृथ्वीराज के जीवन में एक दम घुल-मिल गया था। वह पृथ्वीराज का दरबारी कवि, सलाहकार, सहायक, विश्वासपात्र मित्र सभी कुछ था। पृथ्वीराज रासो के कई छन्दों में कवि चंद और पृथ्वीराज के पारस्परिक दृढ़ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की चर्चा मिलती है। वह पृथ्वीराज के दरबार में उनके गुरु राम पुरोहित के समान श्रेष्ठ आसन पर विराजमान होता था, तथा पृथ्वीराज के समान ही ठाट-बाट से रहता था।

एक स्थान पर कवि चन्द ने पृथ्वीराज के स्नेह-बन्धन का स्मरण बड़े ही भावपूर्ण शब्दों में किया है :

हमहिं राज इक वास, सथ्थ उपन्ने संग सदि।
नेह बंध बंधियै, करिय अति प्रीति राज रिदि॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सामंत संकल्प अति प्रेम तर, बाल नेह उर धुर कियौ।
बलि भद्र-नेह संसार सुप, किम सुनेह छंडे जियौ॥

(छन्द १७०२, समय ६६)

अपनी खोज रिपोर्ट में डाक्टर हरप्रसाद शास्त्री ने कवि चन्द और राजा पृथ्वीराज के दृढ़ सम्बन्धों की चर्चा इस प्रकार की है—"चंद का पृथ्वीराज के पिता सोमेश्वर के दरबार में जाना तथा राजा और राजकुमार का प्रिय पात्र होना कहा जाता है। सिंहासन पर बैठने के उपरान्त पृथ्वीराज ने नागौर और खाटू बसाये। उन्होंने चन्द को नागौर मे विस्तृत भूमि दी जिस पर कवि के वंशजों का अब तक अधिकार है।"

### चन्दबरदाई की मृत्यु

चन्दबरदाई और पृथ्वीराज की मृत्यु एक साथ हुई थी। पृथ्वीराज की मृत्यु विक्रमी संवत ११८२ में हुई थी— यह एक ऐतिहासिक तथ्य है। अत: हम यह निर्विवाद रूप में कह सकते हैं कि चन्दबरदाई की मृत्यु ११८२ वि० में हुई।

चन्द और पृथ्वीराज की मृत्यु के सम्बन्ध में एक कहानी प्रचलित है। कहते हैं कि पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन गोरी को कई बार परास्त किया था, परन्तु वह मानता ही नहीं था। अन्तिम आक्रमण के समय पृथ्वीराज ने चंद से कहा कि वह कांगड़ा दुर्ग के सामन्त हाहुली हमीर को लिवा लाए। हाहुली हमीर किसी कारणवश पृथ्वीराज से अप्रसन्न हो गया था। इसी कारण उसको मनाने के लिये चंद को भेजा गया था, परन्तु उसने चंद की एक भी नहीं मानी। उल्टे इसने धोखे से चंद को जालंधरी देवी के मन्दिर में बन्द करवा दिया और भाग कर गोरी का सहायक बन गया।

पृथ्वीराज गोरी के हाथों पराजित हो गया। गोरी उसको कैद करके गजनी ले गया। उसने वहाँ पृथ्वीराज को अन्ध कारागार में बन्द कर दिया।

चदंबरदाई ने किसी प्रकार जालंधरी देवी के मन्दिर के कारावास से मुक्ति पाई और वह दिल्ली (योगिनीपुर) आया। वहाँ उसने ढाई महीने के भीतर रासौ की रचना की और शेष रासौ की रचना का उत्तरदायित्व अपने सुयोग्य पुत्र जल्हन को सौंप कर वह गजनी आया। लिखा है कि चलते समय उसने अपनी पुत्री और पुत्रों से विदा ली थी और वह योगी का वेष धारण करके गजनी पहुँचा :

१. उभै मास दिन अद्धवह, किय रासौ चहुआन।
रसना मह सु चन्द की, बोलि उमा परमान।

(छन्द ४९, समय ६७)

२. आदि अन्त लग वृत्त मन, बृन्नि गुनी गुन राज।
पुस्तक जल्हन हथ्य दै, चलि गज्जन नृप काज।

(छन्द ८५, समय ६७)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



गजनी पहुंचकर उसने पृथ्वीराज से मिलना चाहा। पहले तो गोरी ने उसको पृथ्वीराज से मिलने की आज्ञा नहीं दी, परन्तु जब चन्द ने गोरी को पृथ्वीराज के युद्ध-कौशल की चर्चा करके द्वारा शब्द-वेधी बाण का अद्भुत चमत्कार दिखाने की आज्ञा मांगी, तो गोरी राजी हो गया। पृथ्वीराज के कौशल दिखाने के लिये एक बड़े समारोह का आयोजन किया। वह दिन गुरुवार (जुमेरात) का था। पृथ्वीराज का लक्ष्य-वेध कौशल देखने के लिये बहुत भारी भीड़ एकत्र थी। गोरी भी एक मंच पर बैठा था। पृथ्वीराज की आँखों से पट्टी बांध कर लाया गया। चंदवरदाई ने अपने वाक्-चातुर्य द्वारा पृथ्वीराज को गोरी के मंच का संकेत दे दिया।

१. चार बांस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमान।
ता ऊपर सुल्तान है, मत चूकै चौहान।

छन्द ५५४, समय ६७

आज्ञा मिलते ही पृथ्वीराज ने बाण चलाया। बाण गोरी के दांत, रसना, तालु आदि को बींधता हुआ पार गया—गोरी मृत्यु को प्राप्त हुआ। गोरी के सिपाही, अंग रक्षक आदि इन दोनों को मारने के लिये दौड़े। जब तक वे इनके पास पहुँचे, तब तक वे दोनों आपस में एक दूसरे को कटार मार कर इस लोक के परे जा चुके थे :

छुरिका कविंद जट मझ्झ थी, कटि्ट भट्ट सीस अप।
ता पाछे चन्दवरदाय ने, ददय राज वर हथ्थ नृप।

इस प्रकार हिन्दी के आदि कवि तथा हिन्दी के प्रथम महाकाव्य के रचयिता कवि चन्दवरदायी ने अपने स्वामि-धर्म का पालन करते हुये स्वामी के साथ ही संसार से प्रयाण किया। उनके द्वारा वर्णित उनके स्वामी पृथ्वीराज का विमल यश आज भी दिग् दिगंत में व्याप्त है :

इक्क दीह उपन्न इक्क दीहै समायक्रम

अथवा

इक थान जनम मरनहु सु इक,
चलहि कित्ति ससि लग्गि रव।

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# २

# रासो-परम्परा

**प्रश्न २—'रासो' शब्द की व्युत्पत्ति की खोजपूर्ण विवेचना कीजिए।**

**उत्तर—रासो काव्य की व्युत्पत्ति**

वीरगाथा काल में अनेक चरित काव्य लिखे गए। इन चरित-काव्यों के नामकरण 'रूपक' 'विलास', प्रकाश अथवा रासो आदि किए गये। हिन्दी साहित्य के इतिहास में आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल ने वीरगाथाकाल की काव्य-प्रेरणाओं एवं प्रवृत्तियों का विवेचन करते हुये लिखा है कि "उस समय तो केवल वीरगाथाओं की उन्नति सम्भव थी। ये वीरगाथाएं दो रूपों में मिलती हैं—प्रबन्ध काव्य के साहित्यिक रूप में और वीर गीतों (Ballads) के रूप में। साहित्यिक प्रबन्ध के रूप में जो सबसे प्राचीन ग्रन्थ उपलब्ध है, वह है "पृथ्वीराज रासो।" वीर गीत के रूप में सबसे पुरानी पुस्तक 'बीसलदेव रासो' मिलती है, यद्यपि उसमें समयानुसार भाषा-परिवर्तन का आभास मिलता है। यहां पर वीरगाथा-काल के उन ग्रन्थों का उल्लेख किया जाता है जिनकी या तो प्रतियां मिलती हैं या कहीं उल्लेख मात्र पाया जाता है। ये ग्रन्थ 'रासो' कहलाते थे।" आचार्य शुक्ल के इस कथन से स्पष्ट है कि वीरगाथा काल में वीरगाथाएं रासो नाम से प्रचलित थीं। अब विचारणीय बात यह है कि रासो शब्द का अर्थ क्या है—इसका प्रयोग किस प्रकार की रचना के लिये किया जाता है। रासो शब्द की व्युत्पत्ति की समस्या को हल करने का प्रश्न कई विद्वानों द्वारा किया जा चुका है, परन्तु सुनिश्चित समाधान अभी तक प्रस्तुत नहीं किया जा सका है।

'डिंगल' तथा पिंगल शब्दों के समान 'रासो' शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में भी विद्वानों में मतभेद है। फ्रांसीसी इतिहासकार गास दि तासी इसकी व्युत्पत्ति 'राजसूय' से मानते हैं। क्यों मानते हैं, इसका उन्होंने कोई कारण नहीं दिया है। ऐसी स्थिति में तासी साहब की मान्यता को स्वीकार करना दुस्कर है।

नरपति नाल्ह की एक पंक्ति "नाल्ह रसायन आरंभई, शारदा तूठी ब्रह्म-कुमारि" के आधार पर आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल रासो शब्द की उत्पत्ति "रसायण" से मानते हैं। कुछ विद्वान इसका सम्बन्ध 'रहस्य से' जोड़ते हैं और कुछ रसिक से। इसकी उत्पत्ति 'रसिक' से मानने वालों में नरोत्तम स्वामी प्रमुख हैं। उनका कहना है कि राजस्थानी में 'रसिक' का अर्थ 'कथाकाव्य' होता है। यही शब्द क्रमशः 'रासउ' और 'रासो' का हो गया है। रासो सम्भवतः ऐसे काव्य के लिये प्रचलित शब्द विशेष था जिसमें वीर रस को विशेष महत्व दिया गया हो। ब्रजभाषा में रासो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शब्द झगड़े के लिये प्रयुक्त होता है—तात्पर्य यह है कि युद्ध का वर्णन करने वाले ग्रंथ 'रासो' रहे गये।

चन्द्रवली पांडेय 'रासो' की उत्पत्ति शुद्ध संस्कृत शब्द 'रासक' से मानते हैं। 'रासक' उपरूपक का एक भेद होता है। उनका कहना है कि 'पृथ्वीराज रासो' का आरम्भ नट-नटो की भांति कवि चन्द्र और उनकी पत्नी को लेकर हुआ है और आगे भी यह रूपक बना रहा। अतः सिद्ध होता है कि वस्तुतः रासो की रचना प्रदर्शन की दृष्टि से हुई थी और पृथ्वीराज की कीर्ति का कीर्तन ही इस प्रकार किया जाता है। डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी इसकी उत्पत्ति 'रासक' से मानी है। इस मत में पर्याप्त बल दिखाई देता है किन्तु इसको स्वीकार करते समय हमारे सम्मुख एक कठिनाई आती है। सभी रासो ग्रंथों में 'रासक' के गुण उपलब्ध नहीं होते हैं।

'काशी नागरी प्रचारिणी' सभा से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' के सम्पादकों ने 'रासो' की व्युत्पत्ति संस्कृत शब्द 'रास' से मानी है। 'राम' शब्द संस्कृत में शब्द-ध्वनि, क्रीड़ा, शृंखला-विलास, गर्जन-नृत्य एवं कोलाहल आदि अर्थों में प्रयुक्त होता है। डा० दशरथ ओझा ने इस मत का समर्थन बहुत ही तर्कपूर्ण शैली पर किया है। उनका कथन है कि "रासो मूलतः गानयुक्त नृत्य विशेष से क्रमशः विकसित होते-होते उपरूपक और फिर उपरूपक से वीर रस के पद्यात्मक प्रबन्धों में परिणत हो गया। उक्त गानयुक्त नृत्य-विशेष से तात्पर्य 'रास' से है। रास व्रज प्रांत का महत्वपूर्ण अभिनय है। उत्तर भारत में सर्वत्र रास-लीला का प्रचलन मिलता है। गीत-नृत्य के साथ रास रचाने का उल्लेख हमारे ग्रन्थ श्रीमद् भागवत में भी मिलता है। कृष्ण और राधा की रास-लीला हमारे लिये अपरिचित नहीं है। अतः रास 'शब्द' से रासो का विकास हुआ होगा।"

एक विद्वान ने 'रासो' शब्द की व्युत्पत्ति 'रस' धातु से मानी है और उपर्युक्त मत—('रास' से रासो) का पिष्टपेषण किया है। इस प्रकार रास ने गेय रूपक के तत्व प्राप्त किए और फिर उसमें जब चरित्र का समावेश हुआ तब वह प्रबन्ध के रूप में विकसित हुआ। यही चरित्र-प्रधान रास गेय रूपक के तत्वों से युक्त होकर अपने कथानक को केवल काव्यमय प्रबन्ध के रूप में लेकर विकसित हुआ और 'रासो' कहलाया।

महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री तथा श्री विन्ध्येश्वरी प्रसाद पाठक 'रासा' की उत्पत्ति 'राजपूत' शब्द से सम्बद्ध करते हैं। कतिपय विद्वान रासो की उत्पत्ति 'रभस' शब्द से मानते हैं, किन्तु इसके लिये वे कोई नियम या आधार प्रस्तुत नहीं करते हैं। हां एक बात अवश्य है कि 'रभस' और 'रासो' दोनों शब्दों द्वारा व्यक्त प्रधान भावना एक ही है। रासो की प्रधान भावना उत्साह है और 'रभस' भी उसी का द्योतक है।

कुछ विद्वान रासो शब्द के मूल में 'रासऊ' शब्द को मानते हैं। उनकी मान्यता का आधार 'संदेश रासक' की यह पंक्ति है :

कह बहुरु विवि वदउ रासउ भासियह।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इसमें प्रयुक्त शब्द 'रासउ' उनके विचार से 'रासक' और 'रासो' के बीच की कड़ी प्रतीत होती है। इस प्रकार इनके मतानुसार रासक से रासउ बना और रासउ से रासो बन गया। इसी प्रकार विद्वानों में रासो के समानार्थक अन्य शब्दों—रासु, राइसो, रायसा, राजसूय से भी 'रासो' शब्द की व्युत्पत्ति पर विचार किया है।

निष्कर्ष—'रासो शब्द की व्युत्पत्ति पर विचार करते समय विद्वानों ने रासो के समानर्थी प्राय: समस्त शब्दों पर विचार किया है। इतना ही नहीं, प्राय: प्रत्येक शब्द को किसी न किसी रूप में उसकी उत्पत्ति का हेतु भी बताया गया है। इन शब्दों में मुख्य हैं—रहस्य, रास, रसायण, राजसूय तथा रासक। हमारे विचार से इस शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में ये समस्त धारणाएं एवं कल्पनाएं भ्रामक हैं। इन विभिन्न मतों से एक सामान्य ध्वनि निकलती है कि 'रासो' शब्द किसी एक ऐसी घटना के लिये प्रयुक्त होता चला आया है जो ऐतिहासिक महत्व रखती हो और ओज एवं शौर्य से ओत-प्रोत हो। इससे भी अधिक यह आवश्यक है कि उसमें युद्ध-वर्णन द्वारा वीरत्व-प्रदर्शन की भावना प्रमुख हो।

**प्रश्न ३—'रासो' काव्य-परम्परा पर प्रकाश डालिये और उसमें पृथ्वीराज रासो का महत्व एवं स्थान निश्चित कीजिए।**

उत्तर—रासो की परम्परा—चंदवरदायी हिन्दी के आदि कवि हैं और उनके द्वारा प्रणीत 'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है। 'पृथ्वीराज रासो' वस्तुत: रासो काव्यों की एक निश्चित परम्परा का विकास है रासो-काव्य की परम्परा अपभ्रंश से आरम्भ हुई। इसके पूर्व प्राकृत एवं संस्कृत में यह परम्परा नही मिलती है। अपभ्रंश से यह परम्परा पहले गुजराती में आई और फिर राजस्थानी एवं हिन्दी में प्रचलित हुई। इस प्रकार हिन्दी को रासो काव्य-परम्परा गुजराती से प्राप्त हुई। यह परम्परा आधुनिक काल के आरम्भ तक दिखाई देती है।

**रासो परम्परा के काव्य-ग्रन्थ**

रासो-काव्य दो प्रकार की भाषाओं में लिखे गये हैं—डिंगल और पिंगल (राजस्थानी एवं ब्रजभाषा अथवा प्राचीन ब्रजभाषा)। इन ग्रन्थों में चरित्र की प्रधानता है और ऐतिहासिकता का निर्वाह बहुत कम पाया जाता है। डिंगल और पिंगल का साहित्य अलग-अलग समृद्ध होता रहा है। इनके आकार-प्रकार, विषय-वस्तु एवं वर्णन-शैली भिन्न है।

**डिंगल के रासो-ग्रंथ**

डिंगल में लिखे गये 'रासो' ग्रन्थों की एक लम्बी परम्परा मिलती है। अध्ययन की सुविधा के विचार से हम रचना-कालानुसार इनको निम्नलिखित तीन भागों में विभक्त करते हैं :

**(क) आदिकाल में रचित रासो काव्य-ग्रन्थ**

विक्रम की ११ वीं शताब्दी से लेकर १३ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक लिखे जाने वाले ग्रन्थों में तीन ग्रन्थ महत्वपूर्ण हैं—(१) संदेश रासक (२) मंजुरास तथा (३) भरतेश्वर बाहुली रास। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



संदेश रासक—इस ग्रन्थ की रचना मुल्तान के मुस्लिम कवि अब्दुल रहमान ने की। राहुल सांकृत्यायन ने इसका रचना-काल विक्रम को ११ वीं शताब्दी माना है और मुनि जिनविजय के अनुसार इसका रचना-काल वि० की १२ वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध अथवा १३ वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध है। इसमें एक प्रोषितपतिका नायिका (विरहणी) के विरह का बहुत ही मार्मिक वर्णन है। इसका ऋतु-वर्णन बहुत ही प्रभावशाली है।

मंजुरास—इस ग्रन्थ में मालवा के राजा मंजु और कर्नाटक के राजा तैलप की बहिन मृणालवती की प्रेम कहानी का वर्णन है। डा० विपिन विहारी त्रिवेदी ने अपने ग्रन्थ 'रेवातट' में इसका उल्लेख किया है और 'मंजुरास' को संदेश रासक से भी पूर्व की रचना बताया है। इसके कुछ छंद हेमचन्द्र कृत 'सिद्ध हेमचन्द्र शब्दानुशासनम्' तथा मेरुतुंग कृत 'प्रबन्ध चिन्तामणि' में मिलते हैं।

भरतेश्वर बाहुबली रास—इसका रचना-काल संवत् १२४२ माना जाता है इसके रचयिता का नाम शालिभद्र सूरि है। इस ग्रन्थ में ऋषभदेव के दो पुत्र भरतेश्वर और बाहुबली के युद्ध का वर्णन है।

कहते हैं कि शालिभद्र सूरि ने एक अन्य ग्रन्थ 'बुद्धिरास' की भी रचना की थी। जो भी हो 'भरतेश्वर बाहुबली रास' ही प्रसिद्ध रचना है।

यहां यह बता देना आवश्यक है कि 'संदेश रासक' रासो-परम्परा में प्रथम प्रामाणित रचना मानी जाती है।

इसी कालावधि में एक अन्य ग्रंथ 'उपदेश रसायन रास' भी मिलता है, जिसके रचयिता जिनदत्तसूरि हैं। यह ग्रन्थ नीति-काव्य-शैली में लिखा गया है और इसमें जैन-धर्म-सम्बन्धी सामग्री का बाहुल्य है। यद्यपि इसके नाम में 'रास' शब्द आता है, तथपि इसको रासो-परम्परा में नहीं गिना जा सकता है, क्योंकि यह वीर-काव्य परम्परा की कोटि में नहीं आता है। इस कालावधि में अन्य रासो काव्य-ग्रन्थ में लिखे गये, जिनमें उल्लेखनीय हैं : (१) कवि आसु कृत 'जीवदयारस' तथा चन्दनबाल रास (२) कवि वेल्हण कृत 'गयसुकुमाल रास' तथा (३) जीवधर कृत 'मुक्तावलि रास'।

(ख) पूर्व मध्यकाल (१२ वीं से १५ वीं शताब्दी) में रचित रासो ग्रन्थ

१२ वीं शताब्दी से लेकर १५ वीं शताब्दी तक की कालावधि में रासो काव्य का पर्याप्त विकास हुआ और अनेक रासो ग्रन्थों की रचना हुई। इस युग में निर्मित ग्रन्थों में निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं :

१. वीसलदेव रासो
२. जम्बूस्वामी रास
३. रेवन्तगिरि रास
४. कच्छनि रास
५. गौतम रास
६. दशार्णभद्र रास

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



७, वस्तुपाल-तेजपाल रास

८. श्रेणिक रास

९. पेथड़ रास

१०. समरसिंह रास

११. सप्तक्षेत्रि रास

१२. चन्दन बाप रास

उपर्युक्त ग्रन्थों में गीत नृत्य-परम्परा का विकास दिखाई देता है। इनमें सर्वाधिक प्रसिद्ध प्राप्त ग्रन्थ 'वीसलदेव रासो' है।

बीसलदेव रासो—यह 'रासो' परम्परा का एक बहुत ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसके रचयिता का नाम नरपति नाल्ह है। यह १०० पृष्ठों का ग्रन्थ है। यह नृत्य-गीत परम्परा का ग्रन्थ है इसका रचना काल ११ वीं शताब्दी माना जाता है। आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल के मतानुसार वीर गीत रूप में यह सर्वाधिक प्राचीन ग्रन्थ है।

इस ग्रन्थ में कवि ने प्रेम और विरह के मनोरम वर्णन लिखे हैं। इसमें राजमती के विरह का बड़ा ही मार्मिक और अनुभूतिपूर्ण वर्णन हुआ है। इसमें एक ही छंद का प्रयोग हुआ है। इसमें वीर भावों का वर्णन बिल्कुल नहीं हुआ है। अतः इसको वीर-काव्य परम्परा का ग्रन्थ नहीं माना जाना चाहिये। इसको प्रेम-गीत-परम्परा का ग्रंथ मानना अधिक युक्तियुक्त होगा।

**(ग) उत्तर मध्यकाल (१७ वीं, १८ वीं तथा १९ वीं शताब्दी) के रासो-ग्रन्थ**

पं० मोतीलाल मेनारिया, पं० नरोत्तम स्वामी, डा० दशरथ शर्मा तथा श्री अगरचन्द नाहटा ने रासो ग्रन्थों की खोज में पर्याप्त श्रम किया है और परवर्ती काल में निर्मित कुछ रासो काव्य-ग्रंथों का पता लगाया है। यथा:

**(अ) १७ वीं शताब्दी के रासो ग्रंथ**

१. ऋषभदास द्वारा रचित—कुमारपाल रास

२. माधोदास द्वारा रचित—रामरासो

३. सुमतिहंस द्वारा रचित—विनोद रासो

**(ब) १८ वीं शताब्दी के रासो ग्रन्थ**

१. डूंगर सी द्वारा रचित छत्रसाल रासो

२, गिरधर चारण द्वारा रचित 'संगतसिंह रासो'

३. दलपति विजय द्वारा रचित 'खुम्माण रासो'।

इनमें 'खुम्मान रासो' सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें विविध छंदों में खुम्मानवंश का वर्णन किया गया है। इस ग्रन्थ के विषय में बहुत-सी बातें संदिग्ध हैं। इसके सम्बन्ध में आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



में लिखा है कि "यह नहीं कहा जा सकता कि इस समय जो खुमान रासो मिलता है, उसमें कितना अंश पुराना है। उसमें महाराज प्रतापसिंह तक का वर्णन मिलने से यह निश्चित रूप में कहा जा सकता है कि जिस रूप में यह ग्रन्थ अब मिलता है, वह उसे वि० स०-१७ वीं शताब्दी से प्राप्त हुआ होगा। यह नहीं कहा जा सकता कि दलपति विजय असली खुमान रासो का रचयिता था अथवा उसके परिशिष्ट का।"

(स) १६ वीं शताबदी के रासों ग्रन्थ

उन्नीसवीं शताब्दी में प्रायः रासो ग्रन्थों की परम्परा क्षीण हो जाती है। इस शताब्दी में लिखा हुआ केवल एक ही उल्लेखनीय रासो-ग्रन्थ मिलता है। वह है--श्रीपालरास।

विशेष—१७वीं शताब्दी से लेकर १६ वीं शताब्दी के बीच—इन तीन शताब्दियों के बीच हमें कुछ हास्य-मिश्रित रासो ग्रंथ भी मिलते हैं। इनमें चार ग्रन्थों के नाम उल्लेखनीय हैं:

१. मांकण रासो
२. ऊंदर रासो
३. खीचड़ रासो
४. गोधा रासो

इनमें 'मांकण रास' सर्वाधिक महत्वपूर्ण रासो है। इसके रचयिता का नाम कान्ह कीर्तिसुन्दर है। इसमें ३६ छन्द हैं। इसका रचना-काल संवत १७५७ माना जाता है। जैसा हम कह चुके हैं, इसमें विनोद की प्रधानता है।

पिंगल (राजस्थानी तथा ब्रजभाषा अथवा प्राचीन ब्रजभाषा के रासो ग्रन्थ

डिंगल के उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त कुछ रासो काव्य-ग्रंथों की रचना पिंगल में भी हुई। इनमें उल्लेखनीय ग्रन्थ निम्नलिखित हैं :

१. हम्मीर रासो—शार्ङ्गधर
२, परमाल रासो—रचयिता का नाम अज्ञात
३. विजयपाल रासो—नल्हसिंह भट्ट
४. करहिया को राइसो—गुलाब कवि
५. कायम रासो—जान कवि
६. रतन रासो—कुम्भकर्ण चारण
७. राणा रासो—सिंधायचदयाल दास
८. हम्मीर रासो—जोधराज
९. बुद्धि रासो—जल्ह कवि
१०. राउ जैतसी री रासो— रचयिता का नाम अज्ञात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इन रासो ग्रंथों में 'हम्मीर रासो' 'परमाल रासो' तथा 'विजयपाल रासो' को विशेष ख्याति प्राप्त है। इनमें भी सर्वाधिक प्रसिद्ध है 'विजयपाल रासो'। इसमें विजयपाल की दिग्विजय का वर्णन है । इसमें वीर रस की प्रधानता है और इसमें केवल ४२ छंद हैं।

रासो-काव्य-परम्परा में पृथ्वीराज रासो का स्थान

पृथ्वीराज रासो एक प्रसिद्ध एवं पुष्ट ग्रंथ है। इसके छोटे-बड़े अनेक संस्करण मिलते हैं। प्रस्तुत रूप में यह एक विशाल ग्रंथ है। यह विविध छन्दों से युक्त एक विशाल ग्रन्थ है। इसको हिन्दी के प्रथम महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है।

पृथ्वीराज रासो के पूर्ववर्ती रासो-काव्य-ग्रंथों में मंजुरास, 'संदेस रासक' 'भरतेश्वर बाहुबली रास तथा बीसलदेव रासो'. के नाम आते हैं। इसके परवर्ती रासो काव्य-ग्रन्थों में तीन प्रमुख हैं—'हम्मीर रासो' परमाल रासो तथा 'विजयपाल रासो'। आकार अथवा काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से पूर्ववर्ती अथवा परवर्ती कोई भी रासो काव्य-ग्रंथ 'पृथ्वीराज रासो' की समानता नहीं कर सकता है। यह एक विशाल काव्य-ग्रंथ है। यह एक महाकाव्य है और इसमें महाकाव्य के समस्त लक्षणों का निर्वाह पाया जाता है। अन्य कोई भी रासो-ग्रन्थ 'पृथ्वीराज रासो' का सम्मान प्राप्त नही कर सका है। यह वीरगाथाकाल के काव्य-ग्रंथों मे सर्वाधिक श्रेष्ठ ग्रंथ है। इसके महत्व के उदघाटन के लिये मिश्रबन्धु का यह कथन पर्याप्त है—"चन्दवरदाई की कविता से प्रकट होता है कि वह प्रौढ़ रचना है और छंद आदि की रीतियों पर उसमें ऐसा अनुगमन हुआ है कि जान पड़ता है यह महाशय दृढ़ रीतियों पर चलते थे और स्वयं इन्हीं ने हिन्दी काव्य-रचना की नींव डाली।"

इस विशाल काव्य-ग्रंथ में वर्णन-विस्तार, छन्दों की विविधता, प्रबन्ध-सौष्ठव, कलात्मकता, वाग्वैदग्ध, आदि सभी कुछ उपलब्ध है। कथा-विस्तार, वस्तु-विन्यास, वर्णन-कौशल आदि प्रत्येक दृष्टि से 'पृथ्वीराज रासो' रासो काव्य-परम्परा का सर्व-श्रेष्ठ ग्रंथ है। हिन्दी का प्रथम महाकाव्य होने के कारण इसका गौरव और भी अधिक हो जाता है।

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# ऐतिहासिकता

प्रश्न ४—'पृथ्वीराज रासो' के कथानक की ऐतिहासिकता पर विचार कीजिए

अथवा

प्रश्न ५--'पृथ्वीराज रासो' में ऐतिहासिक घटनाओं एवं कल्पना प्रसूत तथ्यों का इतना अधिक मिश्रण है कि इसको ऐतिहासिक रचना नहीं कहा जा सकता है।"—इस कथन की समीक्षा कीजिए।

अथवा

प्रश्न ६—"पृथ्वीराज रासो के अनेक उल्लेख कल्पना प्रसूत हैं।" —इस कथन की सार्थकता पर विचार कीजिए।

उत्तर—'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है। यह एक ढाई हजार पृष्ठों का विशाल ग्रन्थ है। इसमें इतिहास प्रसिद्ध हिन्दू-सम्राट दिल्ली नरेश पृथ्वीराज चौहान के जीवन का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। इसमें उनके युद्ध-कौशल, आखेट-वर्णन, विवाह वर्णन आदि के अतिरिक्त गजनी के शहाबुद्दीन गोरी के साथ होने वाले युद्धों का वर्णन बड़े ही विस्तार के साथ किया गया है।

यह एक काव्य ग्रन्थ है। अतः तथ्यों के साथ इसमें कल्पना का संयोग होना स्वाभाविक है। यह एक प्राचीन, लगभग ८०० वर्ष पुराना ग्रन्थ है। अतः इसमें प्रक्षिप्त अंशों का जुड़ जाना तो स्वभाविक है। अतः यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इसके कथानक में वर्णित विषयवस्तु में कितना अंश ऐतिहासिक है और कितना अंश कल्पना प्रसूत है।

यह देखने के लिए इसमें इतिहास एवं कल्पना का संयोग किस प्रकार हुआ है, हमें इसमें आने वाले व्यक्तियों के नाम तथा इसमें वर्णित घटनाओं पर गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिए। इसके लिए हम निम्नलिखित वृत्तों पर विचार करते हैं—

(१) पृथ्वीराज का वृत्त
(२) शहाबुद्दीन गोरी का वृत्त,
(३) जयचन्द का वृत्त
(४) कयमास का वृत्त
(५) गोविन्दराज का वृत्त
(६) डाहल के कर्ण का प्रसंग
(७) भीम-चालुक्य का प्रसंग
(८) सलष और जैत पमार का प्रसंग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(६) पृथ्वीराज और जयचन्द के पक्षों के योद्धाओं के नाम।

अब हम उपर्युक्त वत्तों को एक-एक करके लेते हैं।

**पृथ्वीराज का वृत्त**

'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार—पृथ्वीराज का शैशव अजमेर में व्यतीत हुआ था। उसके पिता का नाम सोमेश्वर था। वह बहिला वन का निवासी था। उसने शहाबुद्दीन गोरी और बलख के शासक को परास्त किया।

इनमें बहिला-वन वाली बात के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता है। पृथ्वीराज द्वारा बलख के शासक के परास्त होने वाली बात इतिहास-पुष्ट नहीं है। शेष बातें इतिहास-सम्मत हैं।

'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार पृथ्वीराज ने मध्यरा को विजय किया, मंडोवर को नष्ट किया, मरुदन्ड के राजा को दण्ड दिला, रणथंभोर को आग की लपटों में भस्म किया, कालिंजर को जल में डुबो दिया। इन घटनाओं की इतिहास द्वारा पुष्टि कठिन है, परन्तु इतना अवश्य है कि पृथ्वीराज जैसे पराक्रमी एवं वीर राजा के लिए इस प्रकार के कार्य करना असम्भव नहीं है। यह भी हो सकता है कि काव्य के सौष्ठव में वृद्धि करने लिए ग्रन्थकार ने उसके जीवन की घटनाओं को एक विशेष प्रकार से सूचीबद्ध कर दिया हो।

रासो के अनुसार पृथ्वीराज ने कालिंजर के चन्देल शासक परमर्दि पर विजय प्राप्त की थी। उनकी इस विजय-गाथा की पुष्टि मदनपुर के शिलालेख (सं० १२३९) से हो जाती है—उसमें इसका स्पष्ट उल्लेख है।

सारांश यह है कि पृथ्वीराज का वृत्त अधिकांशत: इतिहास-सम्मत है।

**शहाबुद्दीन गोरी का वृत्त**

'पृथ्वीराज रासो' में पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन गोरी के युद्धों का जो वर्णन है, वह इतिहास पुष्ट है।

'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन गोरी के मध्य युद्ध कम से कम सात बार हुआ। एक स्थान पर गोरी कहता है—

"जिह हउं गहि छंडियउ वार सत हउं अप्पउ कर।"

इस कथन के अर्थ दो प्रकार से किए जा सकते हैं। यथा—

(१) जिसने मुझे सात बार पकड़ा और छोड़ा और जिसे मैंने कर अर्पित किया।

(२) जिसने मुझे पकड़ कर छोड़ा और जिसे मैंने सात बार कर अर्पित किया।

अर्थ किसी भी प्रकार किया जाए, प्रत्येक स्थिति में कथन की मूल भावना वही बनी रहती है। गोरी और पृथ्वीराज के मध्य सात बार युद्ध हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



'रासो में इन दोनों के मध्य होने वाले युद्धों के स्थानों के नाम 'सरवर' और 'विश्वासर' दिए गए हैं ।

मुसलमान इतिहासकारों के अनुसार पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन गोरी के बीच केवल दो ही युद्ध हुए थे। प्रथम युद्ध में गोरी पराजित हुआ था और द्वितीय युद्ध में पृथ्वीराज पराजित हुआ और मारा गया। इतिहासकारों ने एक ही युद्धस्थान का नाम लिया है। वह है तवरहिन्द या सरहिंद ।

उल्लेखनीय बात यह है कि रासो में भी केवल दो ही युद्धों का वर्णन मिलता है—सरवर (सरहिंद) का युद्ध तथा अन्तिम युद्ध। अतः स्पष्ट है कि पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन गोरी के बीच केवल दो ही युद्ध हुए थे। युद्धस्थल सरवर (सरहिंद) ही रहा होगा। शेष युद्ध काल्पनिक है।

पृथ्वीराज के अनुसार अन्तिम युद्ध में पृथ्वीराज पराजित हुए। शहाबुद्दीन उनको वन्दी बना कर गजनी ले गया। वहां उसने पृथ्वीराज की आंखें निकलवा लीं और उसे कैद में डाल दिया। कुछ समय बाद चन्दबरदाई गजनी पहुंचे। उसने अपने वाक्-चातुर्य द्वारा सुलतान गोरी को पृथ्वीराज के शब्द-भेदी वाण के चमत्कार को देखने के लिए राजी कर लिया। शाह के मुख से फरमान निकलते ही पृथ्वीराज ने वाण छोड़ा और वाण ने उसका वध कर दिया। तदन्तर पृथ्वीराज और चन्द परस्पर एक दूसरे के कटार मार कर मृत्यु को प्राप्त हुए।

इतिहासकारों ने पृथ्वीराज की मृत्यु का वर्णन अन्य ही प्रकार से किया है। इनके अनुसार उनके मध्य दो युद्ध हुए—सन् ११९१ में तथा सन् ११९२ में। प्रथम में शहाबुद्दीन गोरी पराजित हुआ। द्वितीय में पृथ्वीराज पराजित हुए और मारे गये।

मुसलमान इतिहासकारों में हसन निजामी का नाम बड़े ही आदर के साथ लिया जाता है। उनके अनुसार पृथ्वीराज अजमेर के शासक थे। दिल्ली के शासक का नाम गोविंदराव या खाँडेराव था, जो पृथ्वीराज की ओर से दोनों युद्धों में शहाबुद्दीन गोरी के विरुद्ध लड़ा था। हसन निजामी के अनुसार गोरी ने दूसरे युद्ध के पूर्व दूत द्वारा पृथ्वीराज के पास यह प्रस्ताव भेजा था कि वह इस्लाम धर्म को स्वीकार कर ले। पृथ्वीराज ने यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। इसी के परिणामस्वरूप शहाबुद्दीन ने पृथ्वीराज पर आक्रमण कर दिया। पृथ्वीराज की पराजय हुई और वह युद्ध स्थल से भाग खड़ा हुआ। वह सरस्वती नदी के तट पर पकड़ा गया और मार डाला गया।

इस प्रकार चित्ररेखा के प्रेमी पठान सरदार को पृथ्वीराज द्वारा शरण देने की बात काल्पनिक ठहरती है। यह भी बात गलत ठहरती है कि पृथ्वीराज, अजमेर व दिल्ली का संयुक्त शासक था। जब तक खोजों द्वारा इस तथ्य पर निर्णयात्मक प्रकाश न पड़ जाए, तब तक इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता है।

पृथ्वीराज की मृत्यु का विवरण हमें पक्षपातपूर्ण प्रतीत होता है। यह अस्वाभाविक है कि पृथ्वीराज जैसा वीर राजपूत-युद्ध के मैदान को छोड़कर भाग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



खड़ा हो। पृथ्वीराज की हीनता दिखाने के लिए ही मुसलमान इतिहासकारों ने यदि उसके द्वारा युद्ध-स्थल को छोड़कर भाग खड़े होने की कल्पना करली हो, तो यह असम्भव नहीं है। पृथ्वीराज को पकड़कर आंखें निकलवा लेना तथा उसको कारागार में डालकर अपमानित करना आदि ऐसी बातें हैं, जो मुसलमान आक्रमण-कारियों के चरित्र के अधिक अनुरूप हैं। पीठ दिखाने वाले शत्रु पर प्रहार न करने की मर्यादा का पालन करते हुए पृथ्वीराज ने यदि भागते हुए गोरी को प्राण दान दे दिया हो, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। शौर्य का यह दम्भपूर्ण प्रदर्शन अनेक हिन्दू राजाओं के पतन का कारण बना है। अतः गजनी में पृथ्वीराज द्वारा शब्द वेधी बाण का चमत्कार उसके बाण द्वारा गोरी की मृत्यु तथा पृथ्वीराज एवं चन्द की एक दूसरे के हाथों मृत्यु आदि घटनाएं विवादास्पद ही मानी जानी चाहिए।

जयचन्द का वृत्त

'रासो' में जयचन्द को विजयपाल का पुत्र कहा गया है। इतिहास में उसको विजयचन्द का पुत्र माना गया है। संवत् १२२४ के कसौली के दानपत्र से स्पष्ट है कि जयचन्द अपने पिता विजयचन्द के साथ दिग्विजय के लिए गया था। अतः स्पष्ट है कि 'रासो' में दिया गया जयचन्द के पिता का नाम प्रक्षिप्त है।

रासो में जयचन्द की अनेक विजयों का वर्णन है। उसने अनेक राजाओं को परास्त किया—यहां तक उसने खुरासान के अमीर और गजनी के शहानशाह के सेवक निसुरतखां को बन्दी बनाया तथा वह लंका जाकर विभीषण से भिड़ गया। अनेक राजाओं के ऊपर जयचन्द की विजय के सम्बन्ध में इतिहास मौन है। लंका में जा कर विभीषण से भिड़ जाने वाली बात तो शतप्रतिशत कवि-कल्पना है। इस प्रकार जयचन्द के प्रसंग में वर्णित अनेक नाम कवि-वर्णन प्रथा के अनुसार काल्पनिक ही प्रतीत होते हैं।

पृथ्वीराज रासो के अनुसार जयचन्द ने राजसूय यज्ञ किया और संयोगिता स्वयंवर उनके संघर्ष का कारण बना। जयचन्द और पृथ्वीराज का समकालीन होना इतिहास पुष्ट है, परन्तु जयचन्द के राजसूय यज्ञ पृथ्वीराज-संयोगिता विवाह तथा पृथ्वीराज जयचन्द संघर्ष के सम्बन्ध में इतिहास मौन है। इन घटनाओं को इतिहास विरुद्ध बताने वालों में महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचन्द ओझा प्रमुख हैं। इस सम्बन्ध में उनकी मान्यता के आधार तीन हैं—

(१) जयचंद के दान पत्र (२) संवत् १४६० में जयचंद सूरि द्वारा विर-चित 'हम्मीर महाकाव्य' तथा (२) इन्हीं सूरि प्रणीत 'रंभा मंजरी' नाटिका है। इनमें जयचंद के राजसूय यज्ञ का उल्लेख नहीं मिलता है।

इस सम्बन्ध में हमें यही कहना है कि उक्त दोनों ग्रन्थ इतिहास-ग्रन्थ न होकर काव्य ग्रन्थ ही हैं और फिर 'हम्मीर महाकाव्य' स्वयं इतिहास की कसौटी पर खरा नहीं उतरता है। अतः इन ग्रन्थों के आधार पर कोई निर्णय करना तर्क सम्मत नहीं कहा जायगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



एक विशेष बात है। 'हम्मीर महाकाव्य' में पृथ्वीराज और परमर्दि के युद्ध का भी उल्लेख नहीं हैं। यह युद्ध अपने युग की एक बहुत ही प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना थी। इसका उल्लेख वि० सं० १२३६ के मदनपुर के शिलालेख में मिलता है। इसी प्रकार 'रंभा मंजरी' नाटिका से जयचंद के पिता का नाम 'मल्लदेव' लिखा गया है। यह बात भी तथ्य के विरुद्ध है। अतः पुष्ट प्रमाणों के अभाव में जयचंद एवं पृथ्वीराज के वृत्त के विषय में निर्णयात्मक बात कहना कठिन ही है। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि डा० दशरथ शर्मा ने पृथ्वीराज और जयचंद की लड़की के विवाह को एक ऐतिहासिक घटना बतलाया है।

मीरजाफर की भांति जयचंद की भी गणना देश द्रोहियों की पंक्ति में की जाती है। अतः हमारे विचार से जयचंद एवं पृथ्वीराज के संघर्ष के प्रसंग को आसानी से इतिहास विरुद्ध नहीं कहा जा सकता।

कयमास का वृत्त

'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार कयमास पृथ्वीराज का प्रधान अमात्य था। वह पृथ्वीराज की एक करनाटी दासी पर अनुरक्त था। एक दिन पृथ्वीराज की अनुपस्थिति में कयमांस उस दासी के कक्ष में चला गया। पृथ्वीराज ने इस सूचना को पाकर दोनों का वध करा दिया। कयमास का उल्लेख अन्य दो ग्रन्थों 'पृथ्वीराज विजय' तथा पुरातन प्रबन्ध-संग्रह के पृथ्वीराज प्रबन्ध में मिलता है।

'पृथ्वीराज विजय' में मंत्री कदम्बास का उल्लेख है। कहा जाता है कि इसी के संरक्षण में पृथ्वीराज बालक से युवा हुआ था। इसके आगे का वर्णन अप्राप्त है क्योंकि 'पृथ्वीराज विजय' की खण्डित प्रति ही प्राप्त है।

'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में पृथ्वीराज के प्रधान अमात्य का नाम 'कयमास' ही है, परन्तु उसमें उसके वध का नहीं बल्कि निष्कासन का वर्णन है—और वह भी सर्वथा भिन्न कारण लेकर लिखा है कि वह शहाबुद्दीन गोरी से मिल गया और पृथ्वीराज की पराजय का कारण बना। सारांश यह है कि कयमास का पृथ्वीराज का अमात्य होना इतिहास सम्मत तथ्य है। पृथ्वीराज द्वारा उसके वध की घटना कवि कल्पना प्रसूत प्रतीत होती है।

गोविन्दराज का वृत्त

पृथ्वीराज रासो के अनुसार गोविन्दराज पृथ्वीराज के मुख्य सामन्तों में से एक था। वह पृथ्वीराज के जयचंद के यहाँ रासूय यज्ञ के अवसर पर गया था और वहीं युद्ध में मारा गया था। मिन हाजुस्सिराज की तिबकात ए नासिरी, के अनुसार गोविन्द-राय दिल्ली का था और वह शहाबुद्दीन पृथ्वीराज संघर्ष में मारा गया। सारांश यह है कि गोविन्दराज एक ऐतिहासिक व्यक्ति था और वह पृथ्वीराज का एक महत्व-पूर्ण सामंत था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**डाहल के कर्ण का वृत्त**

पृथ्वीराज रासो के अनुसार डाहल का शासक कर्ण जयचंद द्वारा दो बार बन्दी बनाया गया था—

"करण डाहल्ल दू बार बांध्यउ।"

यह वर्णन सर्वथा काल्पनिक प्रतीत होता है, क्योंकि कर्ण का समय संवत् १०८७-११२७ था और वह जयचंद का समकालीन नहीं ठहरता है, हो सकता है डाहल के कर्ण से रासोकार का आशय जयचंद के समकालीन कलचुरि शासक जय सिंह अथवा विजयसिंह से हो।

**भीम चालुक्य का वृत्त**

रासो में लिखा है कि पृथ्वीराज ने युद्ध करके भीम चालुक्य की शक्ति को नष्ट किया। कयमास भीम को बन्दी बनाने लगा। पृथ्वीराज ने भीम से जालौर की रक्षा की थी।

भीम और पृथ्वीराज की समकालीनता इतिहास-पुष्ट है। जालौर के पीछे दोनों का युद्ध एक ऐतिहासिक घटना है। अतः भीम चालुक्य का वृत्त सर्वथा इतिहास-सम्मत है।

**सलष और जैत पंवार का प्रसंग**

पृथ्वीराज रासो के अनुसार सलष आबू का राजा था। इसका पुत्र जैत पमार था जो पिता की मृत्यु के बाद आबू नरेश बना। सलष जयचन्द पृथ्वीराज युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से लड़ा और मारा गया। जैत पृथ्वीराज-शहाबुद्दीन युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से लड़ता हुआ मारा गया।

**सामंत एवं योद्धाओं के नाम**

पृथ्वीराज रासो में पृथ्वीराज और जयचंद के पक्षों के अनेक योद्धाओं के नाम आए हैं। जैसे—कान्ह, नरसिंह, दाहिमा, चंद-पुण्डीर, जाल्ह, बलीराम यादव, लषन बघेल इत्यादि। शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज युद्ध के संदर्भ में शहाबुद्दीन के तीन योद्धाओं के नाम आए हैं—खुरासान खां, तातर खां तथा रुस्तमखां। इन नामों के विषय में कोई ऐतिहासिक साक्ष्य नहीं मिलता है। ये समस्त नाम कवि कल्पित ही लगते हैं।

**निष्कर्ष**—उपर्युक्त विवेचना द्वारा स्पष्ट है कि 'पृथ्वीराज रासो' के अनेक प्रसंग व्यक्ति एवं उसकी अनेक घटनाएँ कवि कल्पना प्रसूत हैं, परन्तु साथ ही उसके ऐतिहासिक तथ्यों की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती है। 'पृथ्वीराज रासो' इतिहास ग्रन्थ न होकर एक काव्य ग्रन्थ है। हम तो यही कहेंगे कि कवि चंद ने उपलब्ध ऐतिहासिक सामग्री के साथ कल्पना के संयोग द्वारा बड़े ही मनोहारी कथानक की सृष्टि की है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# रासो की प्रामाणिकता

प्रश्न ७—"रासो में कुछ भी ऐसा नहीं है जो उसे चन्द की रचना अथवा प्राचीन काल की रचना सिद्ध कर सके।" इस कथन पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

अथवा

प्रश्न—८ 'पृथ्वीराज रासो' की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में अब तक जो उपपत्ति हुई है उसकी मीमांसा करते हुए अपना मत प्रकट कीजिए।

अथवा

प्रश्न ९—'पृथ्वीराज रासो' की प्रामाणिकता पर अपने विचार प्रकट कीजिये।

उत्तर—'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी-साहित्य का प्रथम काव्य ग्रन्थ माना जाता है। इसके रचयिता पृथ्वीराज रासो के समकालीन कवि चन्दवरदाई थे। यह एक २५०० पृष्ठों का वृहत्काय ग्रन्थ है, जो ६९ सर्गों में विभक्त है इसमें कहीं-कहीं ऐसी बातों का वर्णन है जो इतिहास की दृष्टि से ठीक नहीं मालूम पड़ती। कई स्थलों पर इसकी भाषा में भी अन्तर दिखाई देता है। ऐसे स्थलों पर वह हिन्दी के प्राचीन रूप का परित्याग करती हुई दिखाई देती है।

इन कारणों वश विद्वान एवं आलोचक वृन्द उसकी प्रामाणिकता में संदेह करने लगे हैं। कुछ लोगों के मतानुसार उसकी रचना चन्द द्वारा १२ वीं शताब्दी में ही हुई थी। कुछ के मतानुसार उसमें अधिकांश भाग प्रक्षिप्त हैं, कुछ महानुभाव उसको १६ वीं शताब्दी की रचना मानते हैं—आदि। इस प्रकार पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता विद्वानों के लिए विवाद का विषय बन गई है।

इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता-अप्रामाणिकता सम्बन्धी विचारों को निम्नलिखित चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।

(क) कुछ विद्वान पृथ्वीराज रासो को सर्वथा प्रामाणिक ग्रन्थ मानते हैं। इनके मतानुसार चन्दवरदाई इस ग्रन्थ का रचयिता था, वह पृथ्वीराज चौहान का सखा, सामंत एवं समकालीन था तथा इसमें वर्णित प्रत्येक घटना सत्य है। इस वर्ग के उल्लेखनीय नाम हैं—कर्नल टाड, मिश्रबन्धु, डा० श्यामसुन्दरदास तथा पं० मोहन लाल विष्णुलाल पांडया।

(ख) कुछ लोग 'पृथ्वीराज रासो' को सर्वथा अप्रामाणिक ग्रन्थ मानते हैं। ये लोग न तो चन्दवरदाई को पृथ्वीराज के दरबार का कवि मानते हैं और न रासो को पृथ्वीराज के समय की रचना मानते हैं। इन लोगों का कहना है कि चन्द नाम का कोई कवि हुआ ही नहीं न उसने रासो की रचना ही की, रासो में आई हुई तिथियां गलत हैं क्योंकि इसमें वर्णित घटनाएं एवं तिथियां इतिहास-विरुद्ध ठहरती हैं। इस वर्ग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



के उल्लेखनीय नाम हैं—पं० रामचन्द्र शुक्ल गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, कविराज श्यामलदास, कविराज मुरारिदीन, डा० बूलर, मुंशी देवीप्रसाद तथा डा० रामकुमार वर्मा।

(ग) कुछ लोगों का कथन है कि चन्द नाम का कवि पृथ्वीराज के दरबार में था और उसने रासो की रचना भी की थी, किन्तु मूल रासो आज उपलब्ध नहीं है आज के रासों में प्रक्षिप्त अंश बहुत हैं। आज उसका परिवर्धित, परिवर्तित एवं विकृत रूप ही उपलब्ध है। प्रक्षिप्त अंशों के बाहुल्य के कारण इस वर्ग के विद्वान भी उसे प्रामाणिक ग्रन्थ नहीं मानते हैं। इनमें मुख्य हैं—डा० सुनीतिकुमार चटर्जी, अगरचन्द नाहटा, डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, डा० दशरथ शर्मा, मुनि जिन विजय तथा कविराज मोहनसिंह।

(घ) कुछ लोगों का कहना है कि चन्द नाम का व्यक्ति पृथ्वीराज का समकालीन अवश्य था किन्तु 'पृथ्वीराज रासो' उसी चंद नामक कवि की रचना नहीं है, क्योंकि प्रस्तुत रासों में अनेक भूलें इतनी भयंकर हैं कि उन्हें चन्द कृत मानना सर्वथा असम्भव है। चन्दवरदाई तो पृथ्वीराज के इतने अधिकनिकट था कि उसके द्वारा इस प्रकार भूलें हो जाना समझ में नहीं आता है। यह पक्ष जैन ग्रन्थ माला में प्राप्त पदों को उसकी फुटकल रचना मानता है। नरोत्तम स्वामी का यही मत है।

अब तक 'पृथ्वीराज रासो' की सात प्रतियाँ प्राप्त हो चुकी हैं। इनमें किसको प्रामाणिक माना जाय तथा किसको अप्रामाणिक माना जाए—यह निर्णय करना अत्यन्त दुस्तर कार्य है।

इसके अतिरिक्त 'पृथ्वीराज विजय' नामक एक अन्य खण्डित काव्य प्राप्त हुआ है। वह खण्डित प्रति ही वस्तुतः 'पृथ्वीराज रासो' को अप्रामाणिक बताने का प्रमुख प्रेरणा-स्रोत है क्योंकि इस प्रति के वर्णन इतिहास के साथ मेल खाते हैं।

रासो की अप्रामाणिकता की बात सबसे पहले कविराज श्यामलदास ने उठाई थी। इसके विरोध में विष्णुलाल पाण्डया सामने आए और उन्होंने रासो को सर्वथा प्रामाणिक बताने का प्रयत्न किया। आगे चलकर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने इसको एक जाली ग्रन्थ घोषित कर दिया। कुछ वर्ष पूर्व मुनि जिन विजय को 'पुरातन प्रबन्ध-संग्रह' नाम की एक पुस्तक मिली। उसके आधार पर मुनि जी ने अनुमान लगाया कि 'रासो' में प्रक्षिप्त अंश प्रर्याप्त हैं, परन्तु उसे सर्वथा जाली ग्रन्थ नहीं कहा जा सकता।

रासो के जो लघु संस्करण प्राप्त हुए, उनके आधार पर कुछ विद्वानों ने 'रासो' को प्रामाणिक ग्रन्थ सिद्ध करने का प्रयत्न किया। इनमें पं० मथुराप्रसाद दीक्षित और दशरथ शर्मा मुख्य हैं।

डा० रामकुमार वर्मा ने इस सम्बन्ध में उपलब्ध प्रायः समस्त विद्वानों के मतों की विश्लेषणात्मक समीक्षा करने के उपरांत यह निष्कर्ष निकाला है कि 'पृथ्वीराज रासो' एक अप्रामाणिक ग्रन्थ है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



"इस समय तक रासो को प्रामाणिक ग्रन्थ सिद्ध करने की सामग्री बहुत ही कम है। आज तक की सामग्री के सहारे रासो को प्रामाणिक ग्रन्थ कहना इतिहास और साहित्य के आदर्शों की उपेक्षा करना है।"

(पृ० सं० १०१ हिन्दी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, प्रथम संस्करण)

मुख्यतया दो वर्ग—रासो की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में विद्वानों के सामान्यतः दो वर्ग हैं—एक वर्ग उसको प्रामाणिक मानने के पक्ष में है और दूसरा वर्ग उसकी प्रामाणिकता में सन्देह करता है। प्रथम वर्ग के प्रमुख विद्वान हैं—डा० श्यामसुन्दरदास मिश्र, बन्धु तथा विष्णुलाल पाण्डया। द्वितीय वर्ग में प्रमुख हैं—श्यामलदीन, मुरारिदीन, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, पं० रामचन्द शुक्ल तथा डा० रामकुमार वर्मा।

रासो को अप्रामाणिक मानने के कारण—रासो को अप्रामाणिक मानने के तीन कारण हैं—घटना वैषम्य, काल वैषम्य तथा भाषा वैषम्य तथा इसमें वर्णित घटनाएँ इतिहास की कसौटी पर ठीक नहीं उतरती हैं तथा इसमें दी हुई तिथियाँ गणना करने पर अशुद्ध सिद्ध होती हैं। भाषा भी अव्यवस्थित सिद्ध होती है तथा उसमें अरबी शब्दों का बाहुल्य दिखाई देता है। रासो की उक्त विपन्नताओं के सम्बन्ध में विद्वानों ने बड़े ही सबल निष्कर्ष प्रस्तुत किए हैं।

"इसमें कपोल कल्पित और मनमानी कथाएँ इतनी अधिक हैं कि वे अविश्वासनीय हैं और उनका इतिहास से कोई सम्बन्ध नहीं है।"

(डा० रामकुमार वर्मा)

"भाषा की कसौटी पर यदि इस ग्रन्थ को कसते हैं तो और भी निराश होना पड़ता है क्योंकि वह बिल्कुल बेठिकाने है। उसमें व्याकरण आदि की कोई व्यवस्था नहीं है।"

[आचार्य रामचन्द्र शुक्ल]

"भाषा की दृष्टि से रासो के व्याकरण का ढांचा प्रधानतया १६वीं शताब्दी की ब्रज-भाषा है।······शब्दों के रूपों में 'अपभ्रंशाभास' अवश्य बहुत पाया जाता है। इसी कारण रासो की भाषा के सम्बन्ध में अनेक भ्रम फैल गये हैं। खड़ी बोली के रूप भी साधारणतया बहुत कम मिलते हैं। रासो के कुछ उदाहरण नीचे दे रहा हूँ जो यदि यह न बताया जाय की रासो के हैं तो उन्हें १६ वीं शताब्दी के किसी साधारण कवि का माना जा सकता है।"

[डा० धीरेन्द्र वर्मा]

घटना-वैषम्य – शिलालेख, ताम्रपत्र तथा 'पृथ्वीराज विजय' नामक ग्रन्थ के आधार पर इसमें इतिहास सम्बन्धी अनेक भ्रांतियां दिखाई देती हैं। आरम्भ में जब 'रॉयल एशियाटिक सोसाइटी बंगाल' द्वारा पृथ्वीराज रासो का प्रकाशन हो रहा था, उन्हीं दिनों डा० बूलर को काश्मीर में जयानक कवि विरचित 'पृथ्वीराज विजय' नामक ग्रन्थ की एक अधूरी प्रति मिली। उसका अध्ययन करने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि इस ग्रन्थ की घटनाएँ 'पृथ्वीराज रासो' की घटनाओं की अपेक्षा इतिहास की कसौटी पर अधिक खरी उतरती हैं। अतः उन्होंने रासो का प्रकाशन रुकवा दिया। इस उक्त घटना के साथ साहित्य-जगत में एक प्रकार की हलचल आरम्भ हो गई और रासो पर ऐतिहासिक दृष्टि से खोज आरम्भ हो गई। इससे पूर्व कर्नल टाड ने रासो को ऐतिहासिक दृष्टि से शुद्ध मानकर राजस्थान का इतिहास लिख डाला था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



रासो में दिये गये अधिकांश नाम और घटनाएं इतिहास-सम्मत प्रमाणित नहीं होतीं। रासो में परमार, चालुक्य और चौहान क्षत्रिय अग्निवंशी माने गये हैं परन्तु प्राचीन ग्रन्थों एवं शिलालेखों के आधार पर वे सूर्यवंशी प्रमाणित होते हैं। साथ ही चोहानों की वंशावली, पृथ्वीराज की माता का नाम, माता का वंश, पुत्र का नाम आदि भी ऐतिहासिक शिलालेखों एवं 'पृथ्वीराज विजय' से भिन्न और अशुद्ध हैं। इस सम्बन्ध में गौरीशंकर हीराचन्द ओझा का निम्नलिखित कथन दृष्टव्य है :

"विक्रमी संवत् १४६० में हम्मीर काव्य बना......। उसमें चौहानों का विस्तृत इतिहास है, परन्तु उसमें पृथ्वीराज रासो के मतानुसार चौहानों को अग्नि-वंशी नहीं लिखा और न उसकी वंशावली को आधार ही माना गया है।

मुंशी देवीप्रसाद के शब्दों में "पृथ्वीराज के उत्कर्ष के लिए रासोकार ने बहुत से राजाओं के कल्पित नाम दिये हैं।"

'पृथ्वीराज रासो' में पृथ्वीराज की माता कमला को दिल्ली-नरेश अनंगपाल की दुहिता बताया है, तथा शहाबुद्दीन द्वारा समरसिंह के वध और पृथ्वीराज द्वारा सोमेश्वर के वध की चर्चा की गयी है। परन्तु इतिहास की खोजों के अनुसार न तो पृथ्वीराज की माता का नाम कमला था और न अनंगपाल उस समय दिल्ली राजा ही था। पृथ्वीराज रासो में जयचन्द को अनगपाल का दौहित्र तथा राठौर वंशीय बताया गया है। ये दोनों बातें भी गलत हैं। शिला-लेखों में जयचन्द को सवंत् गहरवार क्षत्रिय बताया गया है इसी प्रकार रासों में वर्णित अन्य घटनाएं भी भ्रमपूर्ण हैं। पृथ्वीराज और जयचन्द की शत्रुता एवं संयोगिता-स्वयंवर की घटना भी ओझा जी कल्पित मानते हैं। पृथ्वीराज के उपरान्त समरसिंह १०८ वर्ष जीवित रहे थे। अत. मेवाड़- नरेश समरसिंह के साथ पृथ्वीराज की वहिन पृथा की बात भी गलत है। पृथ्वीराज द्वारा गुजरात के राजा भीम का बध होने वाली बात भी गलत है क्योंकि राजा भीम के एक दान पत्र द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि राजा भीम पृथ्वीराज की मृत्यु के उपरान्त ५० वर्ष तक जीवित रहा था। इसी प्रकार शहाबुद्दीन द्वारा समरसिंह का वध और पृथ्वीराज द्वारा सोमेश्वर का वध भी अनैतिहासिक है।

काल-वैषम्य—रासो में दी हुई प्राय: सभी तिथियां अशुद्ध हैं। कर्नल टाड ने गणना करके यह निष्कर्ष निकाला है कि रासो में दिये गये सम्वत् और ऐतिहासिक साधनों द्वारा प्राप्त सम्वत में १०० वर्ष का अन्तर है। रासो के अनुसार पृथ्वीराज के जन्म एवं निधन सम्वत् क्रमशः १११५ तथा ११५८ हैं, जबकि इतिहास के अनुसार ये क्रमशः संवत् १२१८ और १२५८ ठहरते हैं। रासो के अनुसार शहाबुद्दीन गोरी संवत ११३९ में पृथ्वीराज द्वारा मारा गया था परन्तु इतिहास के अनुसार संवत् १२६३ में गक्खरो द्वारा उसका वध किया गया था। इसी प्रकार उसकी अन्य अनेक तिथियाँ इतिहास की कसौटी पर अशुद्ध ठहरती हैं। जैसे—आबू पर भीम चालुक्य का आक्रमण, शहाबुद्दीन के साथ पुन्डीर का युद्ध आदि। इसके अतिरिक्त इसमें दी हुई घटनाओं—पृथ्वीराज का दिल्ली की गोद जाना, मेवाती-मुगल युद्ध, संयोगिता स्वयंवर आदि—का संवत १४६० के आस-पास रचित हम्मीर-काव्य में कहीं भी उल्लेख नहीं है। इन ऐतिहासिक भूलों के आधार पर यही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि चन्दवरदाई यदि पृथ्वीराज का समकालीन होता तो ये भूलें कदापि नहीं हो सकती थीं।

भाषा की कसौटी पर—घटना-वैषम्य और काल-वैषम्य के अतिरिक्त इसको अप्रामाणिक मानने वाले दो कारण भी उपस्थित करते हैं। प्रथम कारण रासो में अरबी-फारसी के बहुत से शब्दों का प्रयोग हुआ जो चन्द के समय में किसी प्रकार भी सम्भव नहीं है। अतः रासो पृथ्वीराज के समय की रचना न होकर सोलहवीं शताब्दी की रचना है। दूसरा कारण यह है कि इसमें अनुस्वारांत शब्दों की भरमार है। प्राकृत और अपभ्रंश के शब्दों की रूपावली का कोई विचार नहीं है और नये और पुराने ढंग की विभक्तियां बुरी तरह मिली हुई हैं।

निर्माण-काल—'पृथ्वीराज रासो' के निर्माण- काल के सम्बन्ध में गौरी शंकर हीराचन्द ओझा का मत है कि संवत् १४६९ रचित हम्मीर- काव्य में रासो का आधार ग्रहण नहीं किया गया। अतः रासो की रचना 'हम्मीर-काव्य' के बाद ही हुई होगी। मुगल-मेवाती युद्ध के वर्णन से भी वह १४५५ और १५८७ के बीच का ठहरता है। अतः रासो का निर्माण काल संवत् १६०० के आसपास ही है।

बाबू रामनारायण दूगण के पास जो रासो की प्रति है, उसके अनुसार चन्द के छन्द जगह-जगह बिखरे हुए थे और उनका संकलन महाराणा अमरसिंह ने कराया था। इस कथन की पुष्टि महाराणा रामसिंह द्वारा निर्मित नौ चौकी बांध के शिलालेख से होती है। इस शिलालेख का समय संवत् १७३ है।

पं० हरप्रसाद शास्त्री को रासो की एक प्रति चंद के वंशधर नानूराम के पास से प्राप्त हुई है। इसके अनुसार रचना-काल सं० १४५५ होना चाहिए।

मोतीलाल मेनारिया का मत है कि १८ वीं शताब्दी से पूर्व के किसी भाषा ग्रन्थ में 'रासो' का उल्लेख नहीं है। उसका उल्लेख राजसिंह की 'राज-प्रशस्ति' में मिलता है, जिसका लिखना संवत १७८८ में आरम्भ हुआ था। अतः रासो का निर्माण काल इसी के लगभग माना जाना चाहिए।

प्रामाणिकता के पक्ष में—रासो को प्रामाणिक मानने वालों में डा० श्याम-सुन्दरदास और डा० दशरथ शर्मा प्रमुख हैं। इन दोनों महानुभावों ने 'रासो' के ऊपर पर्याप्त परिश्रम किया है।

डा० श्यामसुन्दरदास का मत—आपने मुनि जिन विजय द्वारा प्राप्त चार रासो विषयक छन्दों को प्रामाणिक माना है। उनके विचार से ग्रन्थ में प्रक्षिप्त अंशों का होना, क्षेपकों का होना सर्वथा सम्भव है, परन्तु ग्रन्थ जाली नहीं है। रासो के विषय में उनका मत है कि "पृथ्वीराज रासो समस्त वीरगाथाकाल की सबसे अधिक महत्वपूर्ण रचना है। उस काल की जितनी स्पष्ट झलक इसमें पाई जाती हैं उतनी अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं।"

इतिहास सम्बन्धी भ्रान्तियों के बारे में उनके तर्क हैं कि :

(१) अन्य व्यक्तियों की भाँति चन्द ने भी अपने आश्रयदाता स्वामी के प्रताप का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(२) रासो के क्षेपक ही भ्रान्तियों के कारण हैं। ऐसा अन्य कई काव्यों में भी देखा जाता है।

(३) रासो की प्रामाणिकता के बारे में 'नागरी प्रचारिणी सभा' ने जो पट्टे और परवाने प्रकाशित किए थे, हम उनको झूठा नहीं मान सकते।

(४) रहा अरबी-फारसी के शब्दों का प्रश्न। उनके विचार में शहाबुद्दीन गोरी से लगभग पौने दो सौ वर्ष पहले महमूद गजनवी भारत में लूटमार करने आ चुका था। महमूद गजनवी से भी ३०० वर्ष पूर्व सिंध और मुलतान पर मुसलमान अधिकार कर चुके थे। पंजाब भी मुसलमानी-संस्कृति से प्रभावित था। "चन्द लाहौर का निवासी था अतः बाल्यकाल से ही अरबी-फारसी के शब्द उसके मस्तिष्क में प्रवेश करने लगे थे। इस कारण चन्द की भाषा में अरबी-फारसी के शब्दों का होना स्वाभाविक है।"

डा० दशरथ शर्मा का मत—आप इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि रासो का मूल रूप अल्पकाय था, अतः यह प्रामाणिक है। रासो को प्रामाणिक प्रमाणित करने के लिए उनके तर्क इस प्रकार हैं:

(१) मूल रासो न तो जाली ग्रन्थ है और न उसकी रचना संवत् १६०० के आस-पास हुई थी। इधर मिली हुई रासो की लघुतम प्रतियों के आधार पर घटना वैषम्य एवं भाषा सम्बन्धी शंका का समाधान हो जाता है। इन प्रतियों में इतिहास विषयक त्रुटिपूर्ण घटनाओं का कहीं भी उल्लेख नहीं है।

(२) राजपूत-कुलों के आबू के अग्निकुण्ड से उत्पत्ति का उल्लेख भी इस प्रति में नहीं है। उसमें केवल इतना लिखा है कि ब्रह्मा के यज्ञ से वीर चौहान मानिकराय उत्पन्न हुआ। सुजान चरित्र, हम्मीर-काव्य और पुष्कर तीर्थ में भी यह कथा इसी प्रकार है।

(३) ओझा जी के अनुसार रासो की अशुद्ध वंशावली का यह विस्तार बीकानेर की लघुतम प्रति में नहीं है। "पृथ्वीराज विजय' में और इस प्रति की वंशावली में कुछ ही नामों का अन्तर है।

(४) अनंगपाल और पृथ्वीराज के सम्बन्ध की अशुद्धि इस प्रति में भी है।

(५) संयोगिता-स्वयंवर का वर्णन सभी प्रतियों में विस्तारपूर्वक है। लघुतम प्रति में केवल इच्छिनी के विवाह का ही वर्णन है।

(६) पृथा का विवाह तथा शहाबुद्दीन-समरसिंह-युद्ध और भीम और सोमेश्वर तथा पृथ्वीराज और सोमेश्वर के युद्ध का इस प्रति में कहीं भी उल्लेख नहीं है। इसमें पृथ्वीराज और पद्मावती के विवाह की कथा भी नहीं है। लघुतम प्रति में कैमास-वध का वर्णन है। पृथ्वीराज विजय के अनुसार वह पृथ्वी का प्रधान मंत्री था।

अन्य मत—ऐतिहासिक भ्रान्तियों के सम्बन्ध में मिश्र-बन्धुओं का कहना है कि पृथ्वीराज रासो ऐतिहासिक ग्रन्थ न होकर काव्य-ग्रन्थ है। अतः कवि ने इस में अपनी कल्पना का भी पूर्ण समावेश किया है। चंद का उद्देश्य था, अपने आश्रय-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



दाता के शौर्य का वर्णन करना और उसके लिए उसने कल्पना का आधार लिया है। मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या इसकी तिथियों की प्रामाणिकता के विषय में कहते हैं कि राजा महानन्द के वंश के ९० वर्ष के शासनकाल को क्षत्रिय शासन-काल नहीं गिनते, अतः रासो में ९० वर्ष घटाकर ही संवत् लिखा गया है।

कुछ समर्थकों का यह भी कहना है कि यह बताना तो कठिन है कि रासो का मूल रूप कैसा था। परन्तु यह कहना सर्वथा असंगत है कि इसे चंद ने नहीं लिखा बल्कि किसी अन्य परवर्ती कवि ने लिखकर इसे चंद के नाम से प्रसिद्ध कर दिया। कारण स्पष्ट है। इतनी सुन्दर रचना को लिखकर कौन चाहेगा कि वह किसी अन्य व्यक्ति के नाम से प्रसिद्ध हो और यदि सच-मुच ऐसा ही हुआ है, तो इसका यह अर्थ है कि चंद बहुत ही प्रसिद्ध कवि था।

समीक्षा एवं निष्कर्ष—अब तक रासो के चार रूपान्तर प्राप्त हुए हैं। सर्वप्रथम मुनि जिन विजय ने इस बात पर जोर दिया कि रासो का मूल अलकाय अवश्य था और उसकी भाषा अपभ्रंश थी क्योंकि 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' में रासो के चार ऐसे छन्द मिलते हैं, जो रासो की लघुतम प्रतियों में भी हैं। जिस प्रति में से ये छन्द उद्धृत किये गये हैं, वह १५ वीं शताब्दी की है। भाषा में अरबी-फारसी के शब्दों तथा नवीन एवं प्राचीन की मिलावट के उत्तर में विद्वानों का कहना है कि चन्द लाहौर के निवासी थे। अतः उनकी भाषा में अरबी फारसी के शब्दों का होना सर्वथा तर्क संगत है। भाषा में कहीं प्रचीन भाषा और कहीं १६ वीं शताब्दी की भाषा होने का कारण यही है कि उसमें प्रक्षिप्त अंश काफी हैं।

रासो को प्रामाणिक मानने वाले विद्वान रासो में प्रक्षिप्त अंश का होना तो स्वीकार करते हैं, किन्तु उसे सर्वथा अप्रामाणिक अथवा जाली ग्रन्थ नहीं मानते हैं। अधिकाश विद्वान चन्द का होना तथा उसका पृथ्वीराज का समकालीन होना भी मानते हैं, किन्तु यह नहीं मानते कि उसी ने पृथ्वीराज रासो की रचना की थी। ओझा जी तो चन्द को पृथ्वीराज का समकालीन होना भी नहीं मानते। मिश्र-बन्धु और श्यामसुन्दरदास 'नागरी प्रचारिणी सभा' द्वारा प्रकाशित पट्टों और परवानों को प्रामाणिक मानते हैं, परन्तु ओझा जी इन्हें जाली बताते हैं। पांड्या जी अनन्द संवत् की कल्पना करते हुए कहते हैं कि रासो की घटनाओं में ९० वर्ष जोड़ देने से संवत् ठीक हो जाते हैं परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि ऐसा करने पर भी तिथियां इतिहास के साथ मेल नहीं खाती हैं। डा० श्यामसुन्दरदास का कहना है कि चन्द पृथ्वीराज का दरबारी कवि था। कालान्तर में रासो के वर्ण्य विषय एवं उसकी भाषा में परिवर्तन हो गया और उसमें प्रक्षिप्त अंश भी जुड़ गये। पहले आचार्य शुक्ल श्यामसुन्दरदास जी के उक्त मत से सहमत थे, परन्तु बाद में उन्होंने अपनी राय बदल दी। उन्होंने लिखा है कि इस सम्बन्ध में इसके अतिरिक्त और कुछ कहने को जगह नहीं कि यह ग्रन्थ पूरा जाली है। यह हो सकता है कि इसमें इधर-उधर चन्द के कुछ पद्य भी बिखरे हों, परन्तु उनका पता लगाना असम्भव है। यह यदि किसी समसामयिक कवि का रचा होता तो इसमें कुछ थोड़े अंश ही पीछे से मिले होते और कुछ घटनाएँ और कुछ संवत् तो ठीक होते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



डा० दशरथ शर्मा के तर्कों के उपरान्त भी ये दो बातें प्रमाणित नहीं हो सकीं। पृथ्वीराज का अनंगपाल तोमर का नाती होने का और इंच्छिनी के विवाह का कोई प्रमाण नहीं है। इसके अतिरिक्त संयोगिता स्वयंवर और चौहानों की उत्पत्ति भी संदेहास्पद है। इतनी खोजों और इतने विवाद के पश्चात् भी यह निश्चयंपूर्वक कहना कठिन है कि 'पृथ्वीराज रासो' एक प्रामाणिक ग्रन्थ है अथवा अप्रामाणिक रचना है। इस सम्बन्ध में डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह कथन बहुत ही महत्वपूर्ण है :

"इस निरर्थक मंथन से जो दुस्तर घन-राशि तैयार हुई है, उसे पार करके ग्रन्थ के साहित्यिक रस तक पहुँचना हिन्दी-साहित्य के विद्यार्थी के लिए असम्भव सा व्यापार हो गया है।"

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हमारे निष्कर्ष निम्नलिखित हैं :

(१) रासो की प्रामाणिकता के विरोध में इतने तर्क होते हुए भी हम समाज में प्रचलित इतनी महत्वपूर्ण बात को अस्वीकार नहीं करना चाहते हैं।

(२) चन्दवरदाई पृथ्वीराज का समकालीन और उसका दरबारी कवि था।

(३) चंद एक प्रसिद्ध कवि था और उसने पृथ्वीराज रासो का कुछ अंश अवश्य लिखा था।

(४) चन्द के पुत्र जल्हण ने रासो को पूरा किया था। बहुत सम्भव है कि जल्हण के बाद ही किसी अन्य कवि ने उसको पूरा किया हो।

(५) अपने आश्रयदाता के सम्मान की रक्षा के लिए ही सम्भवतः कतिपय घटनाओं में हेर-फेर कर दिया गया है।

(६) रासों में प्रक्षिप्त अंश अवश्य हैं।

(७) रासो की भाषा और उसके छन्द बाद में बहुत कुछ विकृत हुए हैं।

'पृथ्वीराज रासो' वस्तुतः एक बहुत ही महत्वपूर्ण काव्य-ग्रन्थ है। विद्वान् यद्यपि उसे प्रामाणिक सिद्ध करने में सफल नहीं हो पाये हैं, तथापि उसे एक जाली ग्रन्थ भी नहीं कहा जा सकता है। ऐसा कहना समाज और साहित्य दोनों के साथ अन्याय करना होगा। चन्द ने पृथ्वीराज के समय में ही 'रासो' के मूल रूप की थी। परन्तु बाद में प्रक्षिप्त अंश उसमें समाविष्ट होते गये।

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# ५

# महाकाव्यत्व

**प्रश्न १०—महाकाव्य के लक्षणों की कसौटी पर चन्दकृत 'पृथ्वीराज रासो' का मूल्यांकन कीजिए।**

**अथवा**

**प्रश्न ११—एक सफल महाकाव्य की दृष्टि से 'पृथ्वीराज रासो' की समीक्षा कीजिए।**

**अथवा**

**प्रश्न १२—"महाकाव्य के भारतीय लक्षण-ग्रन्थों के समस्त लक्षण 'पृथ्वीराज रासो' में पूर्ण रूप से मिलते हैं।"—इस कथन के आधार पर 'पृथ्वीराज रासो' के महाकाव्यत्व पर विचार कीजिए।**

**अथवा**

**प्रश्न १३—"पृथ्वीराज रासो' को महाकाव्य न कहकर एक विशालकाय और काव्य कहना ही संगत होगा।"—डा० श्यामसुन्दरदास के इस कथन की व्याख्या करते हुए 'पृथ्वीराज रासो' के महाकाव्यत्व पर विचार कीजिए।**

उत्तर—'पृथ्वीराज रासो' के महाकाव्यत्व के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद हैं :

'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी का प्राचीनतम एवं सर्वप्रथम विशाल ग्रन्थ है। प्रायः सभी विद्वान उसको महाकाव्य के रूप में स्वीकार करते रहे हैं। परन्तु कतिपय विद्वान ऐसे भी हैं; जो उसको एक विशाल एवं प्राचीन ग्रन्थ तो मानते हैं परन्तु महाकाव्य के रूप में उसको स्वीकार नहीं करते हैं।

**'पृथ्वीराज रासो' को महाकाव्य स्वीकार करने वाले विद्वानों के मत :**

पं० रामचन्द्र शुक्ल ने इसको 'हिन्दी का प्रथम महाकाव्य' माना है। बाबू गुलाबराय ने इसको स्वाभाविक विकासशील माहाकाव्य कहा है। पं० मोतीलाल मेनारिया ने इसको महाकाव्य की भव्यता और दृश्य-काव्य की सजीवता से युक्त माना है। प्रो० विपिनबिहारी ने कतिपय त्रुटियों का निर्देश करते हुए 'पृथ्वीराज रासो' को निर्विवाद रूप से महाकाव्य सिद्ध करने का पूरा प्रयत्न किया है। 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' द्वारा प्रकाशित 'रासो' के सम्पादकों ने 'साहित्यदर्पण' में निर्देशित लक्षणों के अनुसार इसे एक सफल महाकाव्य माना है।

**'रासो' के महाकाव्यत्व पर आपत्ति करने वाले विद्वानों का मत :**

'पृथ्वीराज रासो' को महाकाव्य न मानने वाले विद्वानों में डा० श्याम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सुन्दरदास और डा० उदयनारायण तिवारी प्रमुख हैं। इनके मत नीचे उद्धृत किये जाते हैं :

'रासो' के महाकाव्यत्व पर विचार करते हुए डा० श्यामसुन्दरदास ने लिखा है :

"वीरगाथा सम्बन्धी प्रबन्ध काव्यों में दूसरी प्रसिद्ध पुस्तक चन्दवरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो' है। इस विशाल ग्रन्थ को हम महाकाव्य की उस श्रेणी में नहीं गिन सकते, जिसमें यूनान के प्रसिद्ध महाकाव्य 'इलियड' आदि तथा भारतवर्ष के रामायण, महाभारत आदि की गणना होती है। यह सत्य है कि 'प्रथ्वीराज रासो, भी एक विशाल ग्रन्थ है और यह भी सत्य है कि महाकाव्य की भांति इसमें युद्ध की प्रधानता है। इतने ही साम्य के आधार पर उसको महाकाव्य कहलाने का गौरव प्राप्त नहीं हो सकता। महाकाव्य में जिस व्यापक तथा गम्भीर रीति से जातीय चित्तवृत्तियों को स्थायित्व मिलता है, उसका 'पृथ्वीराज रासो' में सर्वथा अभाव है। महाकाव्य में यद्यपि एक प्रधान युद्ध होता है, तथापि उसमें दो विभिन्न जातियों का सघर्ष दिखाया जाता है और उसका परिणाम भी व्यापक तथा विस्तृत होता है। 'पृथ्वीराज रासो' में न तो कोई प्रधान युद्ध है और न किसी महान परिणाम ही का उल्लेख है। सबसे प्रधान बात तो यह है कि 'पृथ्वीराज रासो' में घटनाएं एक दूसरे से असम्बद्ध हैं तथा कथानक भी शिथिल और अनियमित है। महाकाव्यों की भांति न तो घटनाओं का किसी एक आदर्श में संक्रमण होता है और न अनेक कथानकों की एकरूपता ही प्रतिष्ठित होती है। ऐसी अवस्था में 'पृथ्वीराज रासो' को महाकाव्य न कहकर विशालकाय वीर काव्य कहना ही संगत होगा।"

(हिन्दी-साहित्य)

महाकाव्य के लक्षणों की कसौटी पर पृथ्वीराज रासो' को कसते हुए डा० उदयनारायण तिवारी ने अपने ग्रन्थ 'वीर काव्य' में लिखा है :

"इसमें सन्देह नहीं कि कसौटी पर 'पृथ्वीराज रासो' को कसते हुए महाकाव्य कहना उपयुक्त होगा। यह ६९ समयों में विभक्त है। इसमें कवित, दूहा, तोमर, त्रोटक, गाहा, आर्या आदि छन्दों का प्रयोग किया गया है। इसके नायक पृथ्वीराज क्षत्रिय कुल-भूषण और वीर पुरुष हैं। अन्य वर्णन-विस्तार भी, जो महाकाव्य के लिए अनिवार्य है, पृथ्वीराज रासो' में मिल जाते हैं। किन्तु जहां तक महाकाव्य में जातीय चित्तवृति और कार्य कलाप की अभिव्यक्ति का प्रश्न है, रासो को विशाल वीर काव्य-ग्रन्थ कहना ही उचित है। स्थान स्थान पर इसके कथानक में शिथिलता है।"

उक्त दोनों विद्वानों की बात एक प्रकार से दो तरफा बात है। वे 'पृथ्वीराज रासो' को महाकाव्य मानते भी हैं और नहीं भी मानते हैं। डा० श्यामसुन्दरदास पाश्चात्य लक्षणों से अधिक प्रभावित मालूम पड़ते हैं, इसी कारण वह इसके महाकाव्य का अधिक बलपूर्वक विरोध करते हुए दिखाई देते हैं। वस्तुस्थिति यह है कि इसमें महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षणों का निर्वाह तो दिखाई पड़ता है, परन्तु व्यापक रीति से जातीय चित्रवृत्तियों की स्थायी छाया नहीं दिखाई पड़ती है। इन दोनों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विद्वानों के कथन का यही सारांश है । अपना मत निर्धारित करने के पहले हमको उन स्थितियों—परिस्थितियों पर विचार कर लेना चाहिए, जिनके अन्तर्गत कवि चन्द ने पृथ्वीराज रासो' जैसे ग्रन्थ की रचना की थी । हमको यह भी देखना है कि उन दिनों काव्य-परम्परा का कौन सा रूप प्रचलित था । उन दिनों संस्कृत एवं प्राकृत में महाकाव्यों की एक पुष्ट परम्परा चली आ रही थी । उन्हीं से प्रभावित होकर कवि चन्द ने हिन्दी में इस प्रथम महाकाव्य की रचना थी । इस ग्रन्थ में भारतीय साहित्य शास्त्र में निरूपित महाकाव्य के लक्षणों को देखना तो युक्तियुक्त प्रतीत होता है । परन्तु आज से लगभग ८०० वर्ष पूर्व निर्मित ग्रन्थ में पाश्चात्य साहित्य-शास्त्र में वर्णित लक्षणों को खोजना और उनके आधार ·ग्रन्थ का मूल्यांकन करना कहां तक तर्क सम्मत है ? उन दिनों देश में केन्द्रीयता का अभाव था । देश की शासन-व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो चुकी थी । व्यापक राष्ट्रीयता एवं जातीयता जैसी कोई वात शेष नहीं रह गई थी प्रादेशिकता अथवा स्थानीयता की भावनाएं बलवती हो रही थीं । ऐसी परिस्थितियों में व्यापक एवं स्थायी जातीय प्रवृत्तियों के निरूपण की बात करना वस्तु स्थिति की उपेक्षा करना ही कहा जायगा । कठोर सत्य तो यह है कि अजमेर-दिल्ली के राज्य की सीमाओं में ही चन्द की देश-भक्ति एवं राष्ट्रीयता आवद्ध होगी और पृथ्वीराज ही उसके लिए चक्रवर्ती सम्राट होगा । मूल्यांकन करेंगे, तो हमें निराश न होना पड़ेगा ।

### महाकाव्य के लक्षण

भारतीय लक्षण-ग्रन्थों में महाकाव्य के लक्षणों का निरूपण अत्यन्त विस्तार के साथ किया गया है । इन ग्रन्थों में आचार्य दण्डीकृत काव्यादर्श, आचार्य हेमचन्द कृत 'शब्दानुशासनम्' और आचार्य विश्वनाथ कृत 'साहित्य दर्पण' विशेष रूप से उल्लेखनीय है । विश्वनाथ कृत 'साहित्य दर्पण' इस परम्परा का अन्तिम एवं सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है । इसमें लक्षणों का निरूपण अत्यन्त व्यवस्थित ढंग से किया गया है । श्लोक संख्या ६१३ से श्लोक संख्या ६२२ तक दस श्लोकों से आचार्य विश्वनाथ ने महाकाव्य के लक्षण इस प्रकार से दिए हैं :

(१) महाकाव्य सर्गबद्ध होता है । इसका एक नायक होता है, जो देवता अथवा धीरोदात्त गुणों वाला, उच्च क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुआ हो ।

(२) महाकाव्य के नायक एक वंश में उत्पन्न उत्तम वंशीय अनेक राजा भी हो सकते हैं और उसमे शृंगार, वीर शान्त में से कोई एक रस अंगी होना आवश्यक है, अन्य रस अंग वन कर रह सकते हैं ।

(३) महाकाव्य में सभी नाटकीय संधियां आवश्यक हैं । उसका कथानक ऐतिहासिक या लोक-प्रसिद्ध सज्जनाश्रित होना चाहिए ।

(४) महाकाव्य में अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष में से कोई एक फल होना आवश्यक है और आरम्भ में मंगलाचरण अथवा आशीर्वाद, नमस्कार या वस्तु-निर्देश होती हैं ।

(५) महाकाव्य में कहीं खलों की निन्दा, कहीं सज्जनों का गुण-कीर्तन होता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(६) महाकाव्य में न बहुत बड़े और न छोटे आठ या अधिक सर्ग होने चाहिए। प्रत्येक सर्ग में एक छन्द हो। अन्त में छन्द भिन्न हो। किसी किसी सर्ग में अनेक छन्द भी हो सकते हैं।

(७-९) सर्ग के अन्त में भावी कथा की सूचना हो। सन्ध्या, सूर्य, चन्द्रमा, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, दिन, प्रभात, मध्याह्न, शिकार, पर्वत, ऋतु, वन, सागर, संभोग, वियोग, मुनि, स्वर्ग, नगर, यश, युद्ध, माया, विवाह, यन्त्र, मन्त्र और अभ्युदय आदि विविध प्रसंगों का यथोचित सांगोपांग वर्णन हो।

(१०) महाकाव्य का नामकरण कवि चरित्र, अथवा नायक के नाम पर होना चाहिए और सर्गों का नाम सर्ग में वर्णित कथा के आधार पर होना चाहिए।

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा बताये गये महाकाव्य के सामान्य लक्षण इस प्रकार हैं :

(१) महाकाव्य विशाल आकार का वर्णनात्मक काव्य होता है।
(२) महाकाव्य में जातीय भावों की प्रधानता होती है।
(३) महाकाव्य की विषय-वस्तु लोक विश्रुत या ऐतिहासिक होती है।
(४) महाकाव्य के पात्र शौर्य गुण प्रधान होते हैं। दैवी-पात्रों का भी कथानक में योग रहता है।

(५) महाकाव्य में नायक को केन्द्र बनाकर सभी कथावस्तु एक सूत्र में पिरोई जाती है।

(६) इसमें एक ही छन्द का प्रयोग होना चाहिए।

गम्भीरतापूर्वक विचार करने पर विदित होता है कि भारतीय एवं पाश्चात्य लक्षणों में कोई तात्विक अन्तर नहीं है। पाश्चात्य लक्षणों में 'जातीय भावों की प्रधानता' वाली विशेपता है। भारतीय लक्षणों के अनुसार धीरोदात्त नायक के गुणों में इस विशेपता का समाहार हो जाता है, क्योंकि धीरोदात्त नायक लोक का उद्धारक एवं दीन दुखियों का त्राता होता है। अतः स्पष्ट है कि भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों को मान्यताओं के अनुसार महाकाव्य के कतिपय लक्षण सुनिश्चित एवं सर्वमान्य हैं। वे निम्नलिखित प्रकार हैं उनके आधार पर हम 'पृथ्वीराज रासो' के महाकाव्य का मूल्यांकन करते हैं।

**'पृथ्वीराज रासो में महाकाव्य के भारतीय लक्षणों का निर्वाह :**

**१. महाकाव्य सर्गबद्ध होता है। इसमें कम से कम आठ सर्ग होते हैं। सर्ग न बहुत छोटे और न बहुत बड़े होते हैं :**

'पृथ्वीराज रासो' सर्गबद्ध एवं विशालकाय वीर-काव्य है। इसमें 'पृथ्वीराज चौहान' की कीर्ति गाथा ६९ समयों (सर्गों) में विभक्त है। सर्ग न बहुत बड़े और न बहुत छोटे हैं।

**२. महाकाव्य का कथानक ऐतिहासिक या लोक-प्रसिद्ध होना चाहिए।**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



'पृथ्वीराज रासो' में पृथ्वीराज चौहान की कीर्ति-गाथा है। पृथ्वीराज से सम्बन्धित कथाएँ लोक-विश्रुत और इतिहास प्रसिद्ध हैं। इस ग्रन्थ में वर्णित अन्य पात्र भी ऐतिहासिक हैं। जयचन्द, भीमराव चालुक्य, संयोगिता, कयमास शहाबुद्दीन गोरी आदि इतिहास-विश्रुत पात्र हैं। इसमें वर्णित अधिकांश घटनाएँ जन-मानस में व्याप्त हैं, वे लोक-श्रुतियों के रूप में पाई जाती हैं। इसमें पृथ्वीराज और गोरी के युद्ध का वर्णन है। वह भी इतिहास-प्रसिद्ध वृत है।

३. महाकाव्य के आरम्भ में मंगलाचरण, अथवा आशीर्वाद नमस्कार या वस्तु-निर्देश होता है :

'पृथ्वीराज रासो' का आरम्भ ऊँ (ओंकार, ब्रह्म) के स्तवन से होता है। इसके पश्चात् धर्म-स्तुति, कर्म-स्तुति तथा मुक्ति-स्तुति है। इसके पश्चात् कवि गुरु, सरवस्ती, विष्णु तथा शिव की स्तुति करता है।

"ऊँ आदि देव प्रनम्य नम्य गुरयं वानीयं वन्दे पयं।
सिष्टं धारन धारयं, वसुमती लच्छीस चर्नाश्रयम :
तं गुं तिष्टति ईस पुष्ट दहनं सुनीथ सिद्धिश्रयं।
थिर्चंजगम् जीव चंद नमयं सर्वेस वर्दामयं।"

विभिन्न स्तुतियों के पश्चात् रासोकार वस्तु-निर्देश पर आ जाता है :

दानव-कुल क्षत्रीय नाम ढूंढा रष्षस वर
तिहि सुजोति पृथिराज, सूर सामंत अस्तिभर।
जीह जोति कवि चन्द, रूप संजोगि भोगि भ्रम।
इक्क दीहि उपन्न, इक्क दीहै समाय क्रम।
जथ्थ कथ्थ कोई निर्भय,जोग· भोग राजन लहिय।
वज्रंग वाहुर अरि दल मलन, तासु कीत्त चन्दह कहिय।

४. महाकाव्य का नायक देवोपम व्यक्ति, अथवा उच्च कुल में उत्पन्न वीरोदात्त गुणों वाला व्यक्ति होता है :

'पृथ्वीराज रासो' में पृथ्वीराज चौहान के जीवन का सविस्तार वर्णन है। वही इसका नायक है। वह धीरोदात्त नायक के समस्त गुणों से युक्त है। वह उच्च चौहान कुलोद्भव क्षत्रिय राजकुमार है। वह शाकम्भरी नरेश सोमेश्वर का पुत्र है। वह यौवन और रूप से दीप्त है। वह त्यागी, कार्यकुशल, कुलीन, लक्ष्मीवान तेजस्वी, उत्साही, श्रद्धा का पात्र, सुशील, क्षमावान, गम्भीर, उच्छन्नगर्वी दृढ़व्रती आदि सभी कुछ है। 'पृथ्वीराज रासो' में उसके इन समस्त गुणों का विकास दिखाया गया है। 'पद्मावली समय' में 'पद्मावती' के सम्मुख सुक पृथ्वीराज के गुणों का जो वर्णन करता है, उसके द्वारा उसके धीरोदात्त नायक होने का स्पष्ट प्रमाण मिल जाता है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



संभरि नरेश चहुआन थांन ।
प्रथिराज तहाँ राजंत भांन ।
वैसंह वरीस सोडस नरिंद ।
आजानु बाहु भूअ लोक यंद ।
सँभरि नरेस सोमेस पूत ।
देवत्त रूप अवतार धूत ॥
सामंत सूर सब्बै अपार ।
भूजान भीम जिम सार भार ।
जिहि पकरि साह साहाब लीन ।
तिहु वेर करिय पानीप हीन ।
सिगिन सुसद्द गुनि चढि जंजीर ।
चुक्कई न सबद बेधंत तीर ।
वलि, वेन करन जिमि दान-भांन ।
सत सहस सील हरिचंद समान ।
साहस सुक्रंम बिक्रम जुवीर ।
दानव सुमत्त अवतार धीर ।
दस च्यार जानि सब कला भूप ।
कंद्रप्प जानि अवतार रूप ।

उक्त वर्णन में पृथ्वीराज चौहान के विभिन्न गुणों का निदर्शन है । इनके आधार पर यहां शास्त्रोक्त धीरोदात्त नायक का रूप साकार हो उठता है ।

५. महाकाव्य का नामकरण विषय-वस्तु कवि अथवा चरित्र नायक के नाम के आधार पर होना चाहिए :

'पृथ्वीराज रासो' का नामकरण उसके चरित्र नायक चौहान वंशीय पृथ्वीराज चौहान पर किया गया है । 'रासो' शब्द चरित्र का बोधक है । अतः ग्रन्थ का नामकरण सर्वथा उपयुक्त है ।

६. वर्ण कथा के आधार पर महाकाव्य के सर्गों का नामकरण किया जाना चाहिए :

सर्ग (समय) में वर्णित कथा के आधार पर ही चन्दवरदाई ने 'पृथ्वीराज रासो' के समयों का एवं प्रस्तावों का नामकरण किया है । उदाहरण के लिये अनंगपाल समय, रेवातट समय' पद्मावती समय, चित्ररेखा समय आदि 'समयों' को लिया-जा सकता हैं। कुछ सर्गों (समयों) के नाम 'प्रस्ताव' और 'कथा' (वर्ण्य-विषय) के आधार पर रखे गये हैं । यथा—'दिल्ली-दान प्रस्ताव' 'संयोगिता-नाम-प्रस्ताव' 'शुक-चरित्र-प्रस्ताव' और 'हुसेन-कथा', 'होली-कथा', 'तरुण-कथा' इत्यादि ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**७. महाकाव्य के सर्गों के अन्त में आगे की कथा की सूचना होनी चाहिए :**

सर्ग के अन्त में भावी कथा की सूचना देने से कथानक में पूर्वापर श्रृंखला बनी रहती है। 'पृथ्वीराज रासो' के अन्तर्गत इस नियम का पालन स्पष्टतः नहीं किया गया है परन्तु रासोकार के वर्णन की रोचकता के कारण कथानक बिखरा हुआ नहीं दिखाई देता है। सर्गान्त में चन्द इस प्रकार कथा को समेट लेते हैं कि विश्रृंखलित होने पर भी कथानक श्रृंखलाबद्ध होकर आगे की ओर बढ़ता हुआ दिखाई देता है और उपर्युक्त दोष सरलता के साथ दृष्टिगोचर नहीं हो पाता है।

**८. प्रत्येक सर्ग में एक ही छन्द हो। अन्त में छन्द भिन्न हो। किसी-किसी सर्ग में अनेक छन्द भी हो सकते हैं :**

'रासो' में इस नियम का पालन 'अपवाद' के निर्वाह द्वारा किया गया है, अर्थात् प्रत्येक सर्ग में अनेक छन्दों का प्रयोग किया गया है। कुछ आलोचक तो 'पृथ्वीराज रासो' को छन्दों का अजायबघर ही कह देते हैं। इसमें ७२ प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया गया है। परन्तु विशेषता यह है कि छन्दों का प्रयोग इतना स्वाभाविक है कि उनका आधिक्य पाठक को खटकता नहीं है तथा शीघ्रता से होने वाला छन्द-परिवर्तन कहीं भी अरुचिकर प्रतीत नहीं होता है। इस सम्बन्ध में डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन द्रष्टव्य है :

"रासो के छन्द जब बदलते हैं तो श्रोता के चित्त में प्रसंगानुकूल नवीन कम्पन उत्पन्न करते हैं।"

**९. महाकाव्य में श्रृंगार, वीर, शांत में से कोई एक रस अंगी होना आवश्यक है, अन्य रस अंग बनकर रह सकते हैं (श्रृंगार वीरशान्तानामे कोऽङ्गी रस इष्यते।)**

'पृथ्वीराज रासो' में नव-रस की योजना है। इस ग्रन्थ में भावपक्ष के अन्तर्गत नवरस-योजना का सुन्दर सामंजस्य स्थापित किया गया है :

उक्ति धर्म बिसालस्य, राजनीति नव रसं।
षट भाषा पुराणं च, कुरानं कथितं मया ॥

—आदि पर्व

रासो असंभ नव रस सरस, चन्द-छन्द किय अमिय सम।
श्रृंगार वीर करुना बिभछ, भय अद्भुत हंसत सम।

—बान-वेध प्रस्ताव

'पृथ्वीराज रासो' में आदि से अन्त तक युद्धों के वर्णन भरे पड़े हैं। यह काव्य निश्चित रूप से वीर-रस प्रधान है। अतः स्पष्ट है कि इसका अंगी रस 'वीर रस' है। वीर रस के अन्तर्गत 'श्रृंगार-रस' सहायक रहा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१०. महाकाव्य के कथानक में नाटक की सन्धियों की अन्विति आवश्यक मानी गई है :

'पृथ्वीराज रासो' में 'नाटकीय संधियों' का समावेश कुछ शिथिल है। परन्तु उनके निर्वाह की सर्वथा उपेक्षा नहीं की गई है। नाटक की संधियों का निर्वाह देखिए :

(१) मुख सन्धि—प्रथम 'समय' के अन्तर्गत पृथ्वीराज, पृथ्वीराज के सामंत, चन्दवरदाई तथा संयोगिता के जन्म का वर्णन है। यहां 'मुख सन्धि' है।

(२) प्रतिमुख सन्धि—समय संख्या चार, पांच और नो प्रतिमुख संधि के अन्तर्गत आते हैं। इनमें पृथ्वीराज चोहान के वंश-प्रसार का वर्णन है तथा कथानक के उद्देश्य की ओर संकेत है।

(३) गर्भ सन्धि—शहाबुद्दीन गोरी के साथ पृथ्वीराज चोहान के अनेक युद्धों में गर्भ सन्धि का निर्वाह माना जा सकता है।

(४) विमर्श सन्धि—'पृथ्वीराज' का पराजित होकर बन्दी होना विमर्श सन्धि के अन्तर्गत है।

(५) निर्वहण सन्धि—कथानक का अन्तिम भाग 'निर्वहण सन्धि' के अन्तर्गत है। इसमें शब्द-भेदी वाण से शहाबुद्दीन का वध, पृथ्वीराज और चंद दोनों का परस्पर कटार मार कर मरना निर्वहण संधि के विषय हैं।

इस प्रकार 'पृथ्वीराज रासो' के कथा-विधान में नाटक की पांचों सन्धियों का निर्वाह देखा जा सकता है।

११. महाकाव्य में अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष में से कोई एक फल होना आवश्यक है :

'पृथ्वीराज रासो' में मोक्ष को साध्य माना है। परन्तु रासोकार ने किसी भी पुरुषार्थ को धर्म, अर्थ, अथवा काम को हेय अथवा उपेक्षणीय नहीं बताया है:

पावहि सु अरथ अरु ध्रम्म काम।
निरमान मोष पावहि सुधाम॥

[छंद २२२, समय ६३]

१२. महाकाव्य में कहीं खलों की निन्दा और कहीं सज्जनों का गुण-कीर्तन दिखाई देता है :

'पृथ्वीराज रासो' में इस लक्षण का सम्यक निर्वाह मिलता है। 'पृथ्वीराज रासो' में खल-निन्दा और सज्जन स्तुति की परम्परा का निर्वाह स्पष्टतः दिखाई देता है। चन्द ने प्रथम 'समय' में खल और सज्जन दोनों का सत्कार पूर्ण स्मरण किया है:

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सरस काव्य रचना रचौं, खल जन सुनि न हसंत ।
जैसे सिंधुर देखि मग, स्वान स्वभाव भुसंत ।।
तो पनि निमत्त सुजन गुन, रचिये तन मन फल ।
जूका भय जिय जान कै, क्यों डारियै दुकूल ।।

[छन्द स० ५१, ५२]

१२. महाकाव्य में विविध वस्तुओं एवं घटनाओं के सांगोपांग वर्णन होते हैं। विश्वनाथ ने वर्ण्य-विषयों की बहुत ही व्यापक तालिका पूरे तीन श्लोकों में दी है। 'पृथ्वीराज रासो' में भिन्न-भिन्न वर्णनों का सांगोपांग चित्रण मिलता है। विश्वनाथ द्वारा परिगणित प्रायः सभी प्रकार के वर्णन पृथ्वीराज रासो में मिल जाते हैं। 'रासोकार' ने रूपक-योजना द्वारा सात हजार वर्णन प्रस्तुत किये हैं। वर्णनों में सर्वत्र विशालता एवं रोचकता है। इसमें संध्या सूर्य, चन्द्र, नगर, वन, उपवन, आखेट, दिन, प्रभात, पर्वत, सागर, युद्ध, विवाह, संयोग-वियोग आदि सभी प्रकार के वर्णन हैं।

'पृथ्वीराज रासो' में प्राप्त विवाह वर्णनों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है :

(क) स्वयं वस्तु-वर्णन के रूप में

तथा (ख) पात्रों द्वारा भाव-व्यंजना के रूप में।

जिन वर्णनों में चन्दवरदाई का चित्त विशेष रूप से रमा है, उनके नाम इस प्रकार हैं—युद्ध-वर्णन, व्यूह-वर्णन विवाह-वर्णन, पनघट वर्णन, षट्ऋतु-वर्णन, नख-शिख-वर्णन और शृंगार-वर्णन।

युद्ध-वर्णन तो आदि से अन्त तक भरे पड़े हैं। 'पृथ्वीराज रासो' का युद्ध वर्णन वस्तुतः अद्वितीय ही है। सेना की सज्जा अस्त्र-शस्त्र, तलवारों की चमक, वीरों का गर्जन, रेल पेल, व्यूह-रचना आदि का जितना कौशलपूर्ण वर्णन 'रासो' में पाया जाता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है।

इस प्रकार हम देखते हैं 'पृथ्वीराज रासो' में भारतीय आचार्यों द्वारा वर्णित महाकाव्य के समस्त लक्षणों का सफल निर्वाह दिखाई देता है। कथानक कुछ विशृंखलित होने के कारण प्रबन्ध-सौष्ठव कुछ शिथिल हो गया है।

महाकाव्य के पश्चात् लक्षणों की कसौटी पर 'पृथ्वीराज रासो'

'पृथ्वीराज रासो' में हमको महाकाव्य के पश्चात् विद्वानों द्वारा निरूपित लक्षणों का भी निर्वाह दिखाई देता है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सहस सत्त नष सिष सरस, सकल आदि मुनि दिष्य ।
घट बढ़ मत कोऊ पढ़ौ. मोहि दूषत वसिष्य ।

[समय १. छन्द ९०]

सहस सत्त रूपक सरस, गुन सुन्दर बहु वित्त ।
ले पुस्तक कवि चन्द को, दिय माता बहु रित्त ।

[समय ६७, छन्द ५०].

यह एक वृहदाकार वर्णनात्मक कथा काव्य है। कथा-विस्तार और विशालता की दृष्टि से यह एक विशाल चरित्र काव्य है। अन्तिम हिन्दू-सम्राट पृथ्वीराज चौहान के लोक-प्रिय, लोक-विश्रुत एवं इतिहास-सम्मत वृत्त को लेकर इसके कथानक की सृष्टि की गई है। इसके नायक में पृथ्वीराज अनेक युद्धों में भाग लेकर शौर्य एवं उत्साह का प्रदर्शन करता है। समस्त कथानक पृथ्वीराज के ही चारों ओर घूमता रहता है। सारी कथा और उसके अन्तर्गत समस्त घटनाएँ पृथ्वीराज को लेकर ही एक सूत्र में पिरोई गई हैं।

प्रबन्धात्मकता की दृष्टि से कथानक में कुछ शिथिलता अवश्य दिखाई देती है। हमारे विचार से इस दोष का कारण प्रक्षिप्त अंशों का समावेश है। इस दोष का निराकरण 'रासोकार' की वर्णन-शैली की रोचकताद्वारा हो जाता है। चन्द को मार्मिक स्थलों की पूरी पहचान है और उसने मार्मिक स्थलों का वर्णन पूरे मनोयोग के साथ किया है। ये वर्णन अत्यन्त अनुभूतिपूर्ण हैं और इस कारण कथा में बराबर रोचकता बनी रहती है।

पाश्चात्य लक्षणों की दृष्टि से डा० श्यामसुन्दरदास ने इसमें बहुत बड़ा अभाव माना है—'जातीय चित्तवृत्तियों के स्थायित्व का अभाव।' हमारे विचार से जातीय चित्तवृत्तियों के अभाव वाला दोष विशेष महत्वपूर्ण नहीं है। एक तो चन्द के समय में जातीयता की भावना वर्तमान जातीय भावना से सर्वथा भिन्न थी। राष्ट्रीयता का स्वरूप उन दिनों सर्वथा भिन्न था। राष्ट्रीयता की सीमाएँ अपेक्षाकृत संकुचित थीं। इस अर्थ में पृथ्वीराज ने जातीयता की रक्षा के लिए अन्तिम श्वास तक पूरी शक्ति के साथ संघर्ष किया। गोरी के आक्रमण की सूचना पाते ही पृथ्वीराज ने चन्द को कांगड़ा दुर्ग के हाहूली हम्मीर के पास भेजा था। इससे स्पष्ट है कि वह विदेशी आक्रमणकारियों के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा खड़ा करने के लिए प्रयत्नशील था।

दूसरे हम यदि व्यापक दृष्टिकोण से पृथ्वीराज के चरित्र को देखने का प्रयत्न करें तो हमें जातीयता के भावों का भी अभाव नहीं खटकेगा। पृथ्वीराज ने अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये जिन्दगी भर युद्ध किया और उसी हेतु अपने जीवन का उत्सर्ग किया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



निष्कर्ष—उपर्युक्त विवेचन का निष्कर्ष यही है कि 'पृथ्वीराज रासो'-में भारतीय काव्यशास्त्र तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र में निरूपित महाकाव्य के समस्त लक्षणों का निर्वाह मिलता है। मातृभूमि के सम्मान के लिए प्राणों का उत्सर्ग कर देना इस ग्रन्थ का अमर संदेश है। इसमें महाकाव्य के लक्षणों का वाह्य निर्वाह ही नहीं पाया जाता है, अपितु उनकी आत्मा के स्पन्दन का भी अनुभव होता है। इसमें महाकाव्य के समस्त लक्षण घटित होते हैं। अतः 'पृथ्वीराज रासो' को निस्संकोच एक सफल महाकाव्य कहा जाना चाहिये। वह हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है। इस दृष्टि से तो महाकाव्य के रूप में उसका महत्व कई गुना बढ़ जाता है।

---

## ६

# प्रबन्ध-सौष्ठव

प्रश्न १४—'पृथ्वीराज रासो' के प्रबन्ध-सौष्ठव पर प्रकाश डालिये।

अथवा

प्रश्न १५—कथा-प्रवाह और प्रबन्धात्मकता की कसौटी पर 'पृथ्वीराज रासो' का मूल्यांकन कीजिए।

अथवा

प्रश्न १६—'पृथ्वीराज रासो' में मूल कथा के साथ विभिन्न कथाओं के विकास में भी रासोकार की प्रबन्ध-कुशलता देखी जा सकती है। कथा-प्रवाह में रासोकार ने कथानक के अनुभूतिपूर्ण मार्मिक स्थलों को भी परखा है।" इस कथन को स्पष्ट करते हुए इस संदर्भ में अपना स्पष्ट मत व्यक्त कीजिए।

उत्तर—महाकाव्य में प्रबन्धात्मकता और कथा-प्रवाह का महत्व

आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल ने प्रबन्धकाव्य के लिए तीन बातें आवश्यक मानी हैं :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(१) सम्बन्ध निर्वाह
(२) कथा के गम्भीर और मार्मिक स्थलों की पहचान
तथा—(३) दृश्यों की स्थानगत विशेषता

अत: किसी प्रबन्ध-काव्य में प्रबन्ध-निर्वाह के लिए यह आवश्यक है कि उसमें वर्णित विभिन्न प्रसंग एवं घटनाएं परस्पर सम्बद्ध हों—वे विश्रृंखलित अथवा 'कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा' बनकर भानुमती के कुनबे जैसी न मालूम पड़ें। तात्पर्य यह है कि प्रबन्धात्मकता के लिये यह आवश्यक है कि कथानक में वर्णित घटनाओं का सुगुम्फन इस प्रकार किया जाए कि उनमें एकसूत्रता स्थापित हो जाये और वे पैबन्द न मालूम पड़ें। प्रत्येक घटना में पूर्वापर सम्बन्ध और तारतम्य बना रहे तथा कथानक की रोचकता कहीं भी मन्द न पड़ने पावे।

दूसरी बात है, कथानक में आने वाले गम्भीर और मार्मिक स्थलों की पहिचान। इसका तात्पर्य यह है कि प्रबन्ध के उपयुक्त वर्ण्य-स्थलों एवं प्रसंगों में कवि की भावुकता का परिचय मिलना चाहिए, अर्थात् जो प्रसंग रोचक एवं प्रभावशाली हों, उसमें ग्रन्थकार का चित्त रमे और वह उनके सजीव वर्णन प्रस्तुत करने में समर्थ हों।

तीसरी बात यह है कि दृश्यों की स्थानगत विशेषता, जिसका अर्थ यह है कि कवि को देश-काल का सम्यक् ज्ञान हो। कवि जिस स्थान का वर्णन करे, वह केवल वस्तु-परिगणन मात्र न होकर एक प्रकार से संश्लिष्ट-वर्णन अथवा आंखों देखा हाल हो।

पृथ्वीराज रासो के कथानक में सम्बन्ध-निर्वाह

'रासोकार' की दृष्टि मुख्यतया पृथ्वीराज के जीवन के अन्तिम भाग पर रही है। उसका उद्देश्य पृथ्वीराज के सम्पूर्ण जीवन की कथा कहना प्रतीत नहीं होता है। वह उसके जीवन के अन्तिम भाग को प्रकाशित करने के लिए प्रयत्नशील दिखाई देता है। चन्द ने पृथ्वीराज के जीवन का परिचय केवल एक छन्द में दे दिया है। इसमें केवल इतना संकेत मिलता है कि वह सोमेश्वर का पुत्र वहिलावन का निवासी था और उसका बाल्यकाल अजमेर में व्यतीत हुआ था। इसी प्रकार उसके जीवन की कई घटनाओं के संकेत भर दे दिए गए हैं। ये घटनाएं ऐसी थीं, जिनका विस्तारपूर्वक वर्णन किया जाना चाहिए था। ये घटनाएं हैं।

पृथ्वीराज द्वारा कालिंजर को जलमग्न करना, चन्देल शासक परमर्दि को पराजित करना, गुजरात के भीम चालुक्य. पर विजय-प्राप्ति, शहाबुद्दीन गोरी को कई बार पराजित करना। इस विवेचन से स्पष्ट है कि 'पृथ्वीराज रासो' में वर्णित अनेक घटनाएं अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखती हैं। उनमें पूर्वापर सम्बन्ध की स्थापना नहीं हो पाती। इस कारण कथानक में कई स्थलों पर शिथिलता आ जाती है। वर्णन की रोचकता ही पाठक को ग्रन्थ में आबद्ध रखती है और ऊबने नहीं देती है। यहां यह बात देना अनिवार्य प्रतीत होता है कि 'रासो' में वर्णित कथानक का एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विशिष्ट भाग पूर्णतः व्यवस्थित एवं शृंखलाबद्ध दिखाई देता है। अत : हम कह सकते हैं कि अपने मूल रूप में 'रासो' के कथानक में कथा-प्रवाह और प्रबन्धात्मकता है। उसमें अनेक प्रक्षिप्त अंशों और घटनाओं के समाविष्ट हो जाने के कारण शिथिलता स्वभावतः आ गई है ।

'पृथ्वीराज रासो' में मुख्य रूप से निम्नलिखित चार घटनाओं का ही वर्णन किया गया है :

(१) कयमास वध
(२) पृथ्वीराज--जयचन्द युद्ध
(३) शहाबुद्दीन--पृथ्वीराज युद्ध
तथा (४) शहाबुद्दीन और पृथ्वीराज के जीवन का अन्त

इनका विश्लेषण इस प्रकार है :

'जयचन्द का राजसूय तथा संयोगिता का प्रेमानुष्ठान' और 'पृथ्वीराज का कन्नौज गमन' इन दो समयों के बीच में 'कयमास-वध' का वर्णन किया गया है। प्रथम 'समय' में ग्रन्थकार संयोगिता के पृथ्वीराज के प्रति अनुराग एवं उसके प्रेमानुष्ठान से परिचित करा देता है। 'पृथ्वीराज का कन्नौज गमन' वाले समय में पृथ्वीराज संयोगिता को प्राप्त करने के लिए कन्नौज जाता है। 'कयमास-वध' इन दोनों समयों (प्रसंगों) के बीच में आता है। यह घटना यद्यपि प्रासंगिक है और मुख्य कथा के साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं है तथापि ग्रन्थकार इसे आधिकारिक कथा के साथ बड़े ही कौशल के साथ सम्बद्ध कर देता है। 'कयमास-वध' की सूचना पाकर उसकी पत्नी चन्द से पति के शव दिलाने की प्रार्थना करती है। पृथ्वीराज इस शर्त पर शव देने को तैयार होता है कि चन्द उसे छद्मवेश में कन्नौज ले जायेगा। इस प्रकार 'कयमास-वध' की घटना को ग्रन्थकार मुख्य कथा के साथ बड़े बलपूर्वक किन्तु कौशलपूर्ण ढंग से जोड़ देता है।

जयचन्द युद्ध के पश्चात् पृथ्वीराज संयोगिता के साथ केलि--विलास में राज-काज से उदासीन सा हो जाता है—वह वस्तुतः अपना कर्त्तव्य--पालन ही भुला बैठता है। उसकी मोह निद्रा तब भंग होती है जब मोहम्मद गोरी पूर्ण शक्ति के साथ उसके सिर पर चढ़ आता है और पृथ्वीराज की पराजय होती है। इस स्थल पर चन्दवरदाई का प्रबन्ध-कौशल देखते ही बनता है। जयचन्द पृथ्वीराज-युद्ध और शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज-युद्ध वस्तुतः दो स्वतन्त्र घटनाएँ हैं। परन्तु रासोकार इन्हें बड़ी ही चतुराई के साथ आपस में जोड़ देता है। कथानक के अंत में 'रासोकार', 'कयमास वध' तथा 'संयोगिता-केलि-विलास' के मध्य सामंजस्य प्रस्तुत करता है और ये घटनाएँ एक दूसरे के साथ सुसम्बद्ध प्रतीत होने लगती हैं। चन्दवरदाई पृथ्वीराज से कहता है कि जिस विलासिता के फँस जाने के कारण कयमास की दुर्गति हुई, उसी विलासिता के गर्त में तुम गिर पड़े। उसके अवश्यम्भावी परिणाम से तुम कैसे बच सकते हो। तुम्हारी गति कयमास की तरह होनी ही है। तुम यदि किसी प्रकार शत्रु के हाथों अपनी रक्षा कर सको, तो यही बहुत कुछ है। चन्दवरदाई का एक कथन ही सारी कथाओं को एक सूत्र में पिरो देता है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



प्रथविराज कमांन बाँन द्रिढ मुठ्ठि गहहि कर ।
जिन बिसमन्न मन करहि भुअपत्ति अधूतर ॥
जि कछु किअउ कयमास किअउ अप्पनउ सु पायउ ।
सोई संभरी नरेश तुहि ज अम्मरपुर आयउ ।
विधिना विधान मेटइ कवण दीन भान दिपाइयइ ।
सर एक फोरि संभरि धनी सत्तहि सबुद गमाइयइ ।

अन्तिम दोनों घटनाएँ—शहाबुद्दीन- पृथ्वीराज-युद्ध और शहाबुद्दीन एवं पृथ्वीराज का अन्त—एक दूसरे की अत्यन्त निकटवर्ती घटनाएँ हैं—वे एक-दूसरे के साथ पिरोई हुई हैं। अन्तिम घटना का वर्णन करके—यह दिखाकर कि पृथ्वीराज ने शब्द-भेदी वाण द्वारा गोरी का वध किया और पृथ्वीराज तथा चन्द ने परस्पर एक-दूसरे को मार डाला—ग्रन्थकार ने पृथ्वीराज के शौर्य एवं सम्मान की रक्षा बड़े ही चतुर ढंग से की है। कवि ने अपने नायक को पराजित छोड़कर कथानक को दुःखान्त नहीं होने दिया है। इस प्रकार अन्तिम समय में अपने शत्रु के प्राण लेकर और अपने कवि-सखा चन्द द्वारा अपने प्राण देकर पृथ्वीराज को मानो मन-मानी मुराद मिल जाती है और कथानक प्रसादान्त हो जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'रासोकार' ने अनेक ऐसी घटनाओं को भी एक-दूसरे के साथ जोड़ दिया है जिनमें ऊपर से देखने पर कोई सम्बन्ध नहीं दिखाई पड़ता है। 'रासो' रचयिता ने कथा को विभिन्न 'समयों' में इस प्रकार विभक्त किया है कि देखते ही बनता है। विभिन्न कथाओं के विकास में उसने जिस प्रबन्ध कौशल का परिचय दिया है, उसकी दाद देनी ही पड़ती है। पूरी कथा का एक सुनिश्चित दृढ़ आधार है और कोई भी घटना विषयान्तर उपस्थित नहीं कर पाती है—सबकी सब नायक की आधिकारिक कथा से सम्बद्ध दिखाई देती है।

### अनुभूतिपूर्ण मार्मिक स्थलों की पहिचान

'पृथ्वीराज रासो' के कथा-प्रवाह में रोचकता और मार्मिकता है। इसका मुख्य कारण यह है कि कवि में पूरी भावुकता है, वह मार्मिक स्थलों को पहिचानता भी है और उसमें मार्मिक प्रसंगों की उद्‌भावना करने की पूर्ण क्षमता भी है। हम ऊपर यह बता चुके हैं कि ग्रन्थकार ने पृथ्वीराज के अन्त को किस प्रकार गौरव-शाली एवं मार्मिक बना दिया है। उसकी इसी विशेषता के कारण अनेक असम्बद्ध प्रसंग भी एकसूत्रता में पिरोए हुए दिखाई देने लगते हैं तथा अनेक नीरस प्रसंग भी मार्मिक हो गये हैं।

रासोकार ने कथानक के बीच-बीच में अनेक मार्मिक प्रसंगों की उद्‌भावना की है और उनके अनुभूतिपूर्ण वर्णन लिखे हैं। पृथ्वीराज के विवाहों और राज-कुमारियों के अनुराग के वर्णन इसकी विशेषता के सुन्दर उदाहरण हैं। पृथ्वीराज की बाल-क्रीड़ा का यह चित्र कितना अनुभूतिपूर्ण है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



नय तलय दूझ थह बिन रहत,
हुलसि हुलसि उठि-उठि गिरत ।

इसको पढ़कर हमें सूर की बाल-लीला के विविध पदों एवं तुलसी के 'ठुमक चलत रामचंद बाजत पैजनियां' आदि पदों का स्मरण हो आता है । इच्छिनी की वय : सन्धि का यह स्निग्ध चित्र कवि की भावुकता का स्वयं प्रमाण है :

बाले तन्वयं मुग्ध मध्यह इमं स्वयनाभ वैसंवम ।
मुग्धे नध्यास्त्वयांम बांमति इमं मध्यान्ह छायापगं ।।
बालप्पन तन मध्य जीवन इमं सरसीअ अग्गी जलं ।
अंग महि सुनीर झलमल ससी सुम्भेसु सै सन्वयं ।।

इसी प्रकार 'पनघट' वर्णन की मार्मिक उद्भावना देखिए :

द्रिग चंचल चंचल तरुनि, चितवत चित्त हरिंत ।
कंचन कलस झकोरि कै, सुन्दरि नीर भरंति ।।

'पृथ्वीराज' के विपुल सुख से पूर्ण जीवन के पश्चात् उसके जीवन का दुःखात्मक पक्ष उपस्थित होता है । पृथ्वीराज ने अनेक युद्धों में विजय प्राप्त की, अनेक विवाह किए और मन भर कर सुखोपभोग किया । परन्तु अन्त समय में उसको गोरी के हाथों पराजय का मुख देखना पड़ा । शहाबुद्दीन गोरी उसको बन्दी बनाकर गजनी ले जाता है और उसकी आंखें फुड़वाकर उसको बन्दीग्रह में डाल देता है । इस अवसर पर रासोकार ने पृथ्वीराज के मन में उत्पन्न होने वाले भावों का जो विश्लेषण किया है, वह उसकी गहरी भावुकता का परिचायक है । पृथ्वीराज के हृदय-पटल पर अतीत की घटनाएँ एक एक करके आती हैं और वह अपने पतन के कारणों का विश्लेषण करता है । अतीत के सुख, वैभव और विलास के चित्र मूर्तमंत हो उठते हैं, तथा उसकी वर्तमान दयनीय स्थिति को हृदय करुणा-पूरित बना देती है । पृथ्वीराज का यह मानसिक द्वन्द्व बड़ा ही मार्मिक है ।

यथा;

सहो फूल की फूलनी माहि नाथं ।
तुरन्त तरामी जु मालीन हाथं ।
नहीं सूर सामंत परिवार उसं ।
नहीं गज्ज बाजं भंडार दिवसं ।
नहीं अंगना प्रान ते अत्ति प्यारी ।
नहीं गोष महिला इतं चित्रसारी ।
नहीं मृगनयनी बरन्नं वलासै ।
नहीं कूह केका सबद्दं उल्लासै ।
नहीं पातुरं चातुरं नृत्यकारी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



नहीं ताल संगीत आलपकारी ।
नहीं चोय मीन करु लष दानं ।
नहीं भट्ट चन्द बिरदं बषानं ।

ग्रन्थ की समाप्ति के समय कवि की मौलिक उद्‌भावना चरम उत्कर्ष को प्राप्त होती है । अन्त दुःखान्त है, परन्तु संदेश सुखकारी है । पृथ्वीराज की पराजय भी हुई और उसका प्राणान्त भी हुआ—परन्तु म्लेच्छ से धरणी का उद्धार हो गया। यह क्या कम सुख-सन्तोष की बात है ? कथा का यह अन्त बड़ा ही मार्मिक और अनुभूतिपूर्ण है :

मरन चंद वरदाइ, राज पुनि, सुनिग साहि हनि ।
पुपंजलि आसमान, सीस छोड़ी, सु देवतनि ॥
मेघ अवद्दित घरीन, सव तीय सोह लिग ।
बिनहि बिनहि संजोति, जोति जोतिह संपत्तिग ॥
रासो अलभ नव रस सरस, चंद छंद किय अमिय सम ।
शृंगार वीर करना बिभछ भय अद्‌भुत हसंत सम ॥

**दृश्यों की स्थानगत विशेषता—**

'पृथ्वीराज रासो' में अनेक स्थानों एवं दृश्यों के सांगोपांग वर्णन मिलते हैं । कवि ने स्वयं लिखा है कि उसने रूपक-योजना के द्वारा सात हजार वर्णन प्रस्तुत किए हैं—

सहस सत्त नष सिष सरस, सकल आदि मुनि दिष्य ।
घट बढ़ मत कोऊ पढ़ौ, मोहि दूसन न वसिष्य ॥

[समय १, छंद ८०]

तथा—

सहस सत्त रूपक सरस, गुन सुन्दर बहु वित्त ।
लै पुस्तक कवि चंद को, दिय माता बहु रित्त ॥

[समय ६७, छंद ५०]

ये वर्णन दो रूपों में मिलते हैं ।

(क) स्वयं वस्तु-वर्णन के रूप में ।
(ख) पात्रों द्वारा भाव-व्यंजना के रूप में ।

इनमें अधिकांश वर्णन बड़े ही मार्मिक एवं प्रभावशाली हैं । इनके युद्ध-वर्णन तो प्रायः अद्वितीय ही हैं । 'पृथ्वीराज रासो' जैसे युद्ध-वर्णन अन्यत्र दुर्लभ हैं। कारण स्पष्ट है । चंदबरदाई अपने स्वामी पृथ्वीराज के साथ स्वयं भी युद्ध-स्थल में जाते थे । इन्होंने युद्ध के 'आँखों देखे' वर्णन लिखे हैं । 'व्यूह' वर्णन देखिए :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



छन्न पुंडीक सुअप्पि जैत दोनों सिर छन्नं ।
चन्द्र-व्यूह अंकुरिय, राज दुअ इहां इकन्नं ॥
एक अग्ग हुसेन, बीय अग्रह पुंडीरं ।
मद्धि भग रघुवंश, राम उभौ वर वीरं ॥
सांवलौ सूर सारंग दे, उरसि पान गोरीय मुप ।
हथ नारि गोरि जंबूर घन, दुहूँ बांह उमैति रूप ॥

[समय २७, छंद ७१]

प्रकृति का निम्नलिखित वर्णन आलम्बन विभाग के अन्तर्गत आता है। इसको देख कर स्पष्ट हो जाता है कि चन्दवरदाई राज-दरबार में रहते हुए भी अपने चारों ओर की प्रकृति से परिचित थे

गज्जरन दरिय गम्भीर सद्द ।
निझ्झरत झरय नद रोर नद्द ॥
निझ्झरहि झरिय झरहर करूर ।
उम्भरहि सलित सलिता सपूर ॥

निष्कर्ष—उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि इस विशालकाय ग्रन्थ के कथानक को मुख्यतः दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—(१) मुख्य कथा तथा (२) प्रासंगिक कथाएं एवं घटनाएं—जो अनेक हैं।

समस्त घटनाएं एवं कथाएं विभिन्न समयों (सर्गों) में विभक्त हैं। ऊपर से देखने पर अनेक घटनाएं एवं प्रसंग स्वतन्त्र एवं परस्पर असम्बद्ध दिखाई पड़ते हैं। परन्तु वे सब की सब नायक के व्यक्तित्व के साथ इस प्रकार गूंथ दी गई हैं कि प्रत्येक घटना कथानक के विकास में सहायता करती हुई दिखाई देती है। इस प्रकार कथानक में एकसूत्रता आ जाने से सम्बन्ध निर्वाह वाले तत्व की योजना अपने आप हो गई है।

रासोकार को मार्मिक स्थलों की भरपूर पहचान है। उसने मार्मिक स्थलों को पहचाना है और उनमें भावुकतापूर्ण वर्णन किये हैं। परिणामतः कथानक बहुत ही रोचक एवं प्रवाहपूर्ण बन गया है।

दृश्यों की स्थानगत विशेषता के कारण पाठक आद्योपांत रस-मग्न बना रहता है। अस्वाभाविकता के अवसर बहुत कम आते हैं। वस्तुस्थिति यह है कि 'रासो' के कथानक में अनेक प्रक्षिप्त अंश एवं घटनाओं का समावेश हो गया है। इसी कारण कथानक कहीं-कहीं नीरस एवं शिथिल प्रतीत होने लगता है। मूल ग्रन्थ का कथानक पूर्णतः सुसंगित सुव्यवस्थित होगा, इसमें सन्देह नहीं है। वर्तमान रूप में भी 'रासो' का कथानक रोचक एवं प्रवाहपूर्ण है। इससे चन्दवरदाई की प्रबन्ध-पटुता का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७

# वस्तु-वर्णन और भाव-व्यंजना

प्रश्न १७—वस्तु वर्णन और भाव-व्यंजना की दृष्टि से पृथ्वीराज रासो की समीक्षा कीजिए।

अथवा

प्रश्न १८—"पृथ्वीराज रासो एक वस्तु वर्णन प्रधान ग्रन्थ है। उसमें भाव-व्यंजना की अपेक्षा वस्तु-वर्णन के ऊपर कवि की दृष्टि अधिक रही है।"—इस कथन की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—विभिन्न वर्णनों का सांगोपांग चित्रण

पृथ्वीराज रासो एक महाकाव्य है। काव्य-शास्त्र के पंडितों के अनुसार महाकाव्य में संध्या, सूर्य, चन्द्रमा, रात्रि प्रदोष, अन्धकार, दिन, रात, मध्याह्न, शिकार, पर्वत, ऋतु, वन, सागर, संभोग-वियोग, स्वर्ग, नगर, पशु, युद्ध, यात्रा, विवाह, यन्त्र-मन्त्र, अभ्युदय आदि विविध प्रसंगों का यथावत् सांगोपांग वर्णन होना चाहिए। रासोकार ने इन समस्त वस्तुओं एवं प्रसंगों के वर्णन द्वारा महाकाव्य के इस लक्षण का भली प्रकार निर्वाह किया है। उसने स्वयं लिखा है कि पृथ्वीराज रासो में रूपक-योजना द्वारा सात हजार वर्णन प्रस्तुत किये गये हैं :

सहस सत्त नष सिप सरस, सकल आदि भुवि दिष्य।
घट बढ़ मन कोऊ पढ़ो, मोहि दूषनन न बसिष्य॥

(समय १, छन्द ८०)

तथा— महस सत्त रूपक सरस, गुन सुन्दर बहु वित्त।
ले पुस्तक कवि चन्द को, दिये माता बहु रित्त।

(समय, ६७, छन्द ५०)

'पृथ्वीराज रासो' में वस्तु-वर्णन दो रूपों में पाया जाता है—

(क) स्वयं वस्तु-वर्णन के रूप में

(ख) पात्रों द्वारा भाव-व्यंजना के रूप में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



'पृथ्वीराज रासो' में यद्यपि उपर्युक्त सभी प्रकार के वर्णन पाये जाते हैं तथापि कवि चन्द की वृत्ति युद्ध-वर्णन तथा सौन्दर्य वर्णन में विशेष रूप से रमी है। इनके अतिरिक्त 'रासोकार' ने प्रकृति के भी सुन्दर वर्णन लिखे हैं।

युद्ध-वर्णन

'रासोकार' ने युद्ध-वर्णन विशेष मनोयोग के साथ किया है। उसके अन्तर्गत उसने युद्ध के गत्यात्मक एवं स्थिर दोनों श्रेणियों के अनेकानेक चित्र प्रस्तुत किये हैं। युद्ध एवं युद्धस्थल सम्बन्धी शायद ही कोई बात ऐसी हो जो इनकी नजर से बच सकी हो, तथा जिस पर इन्होंने कलम न चलाई हो।

गत्यात्मक युद्ध-वर्णन के अन्तर्गत हमें सैन्य, सैन्य-सज्जा, सैन्य-वैभव, राजसी ठाट-बाट, रण के लिए प्रयाण, व्यूह, दिग्गजों की चिंघाड़, घोड़ों की हिनहिनाहट, शस्त्रों की खनखनाहट, तलवारों की चमक, शस्त्रों की झंकार, युद्ध की विभीषिका आदि के संश्लिष्ट चित्र देखने को मिलते हैं। युद्ध के स्थिर चित्रण के अन्तर्गत हमको वीरों के वीरत्व पूर्ण, कर्तव्य-पालन, प्रचण्ड-पराक्रम, दर्प एवं गर्व पूर्ण उक्तियों आदि के जीते-जागते चित्र दिखायी देते हैं। इन चित्रों में 'वीर रस' की सवयव निष्पत्ति हुई है। दोनों प्रकार के चित्रणों के अन्तर्गत वीर रस की योजना करने में रासोकार को महान सफलता प्राप्त हुई है।

उदाहरणार्थ यवन-सेना का निम्नलिखित संश्लिष्ट वर्णन देखिए। वर्णन सर्वथा सजीव और चित्रोपम है :

पुरासान सुलतांन पंधार मीरं।
बलख स्यों बलं तेग अच्चूक तीरं।
रुहंगी फिरंगी हलंबी समानी।
ठटी ठट्ठ बल्लोच ढालं निसानी।
मंजारी चषी मुष्प जंबूक लारी।
हजारी हजारी हुकें जोध भारी।
तिनं पष्षरं पीठ हय जीन सालं।
फिरंगी-कती पास सुकलात लालं।
तहां बाघ बाधं मरुरी रिछौरी।
धनं सार सम्मूह अरु चौर झौरी।
एराकी अरबी पटी तेज ताजी।
तुरक्की महाबांन कम्मान बाजी॥

युद्ध के स्थिर चित्र का भी एक उदाहरण देख लीजिए। वीरोचित कथन किस सफलता के साथ 'उत्साह' को पुष्ट करते हैं :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



हाहुलिराव समीर कहि, सुनि पङ्गसी वत्त ।
एक भिरै असि लष्ष सौं' सो भर किमि भजंत्त ।
× × ×
चवै चंद पुण्डीर इम, कहू बल कथ्थहु वत्त ।
पंग-पंग पग नरिंद को, जग्य विध्वंस्यो सत्र ।

**नख-शिख-वर्णन**

'पृथ्वीराज रासो' में वस्तु-वर्णन के अन्तर्गत नख-शिख-वर्णन का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह कई अवसरों पर किया गया है। यथा :

(१) इंछिनी का नख-शिख
(२) पृथा का नख-शिख
(३) संयोगिता का नख-शिख

संयोगिता का नख-शिख-वर्णन चार स्थलों पर किया गया है। यथा :

(१) विवाह के पूर्व वयः सन्धि वर्णन
(२) विवाह के अवसर पर शृंगार वर्णन
(३) विवाह के पश्चात् इंछिनी का शुक द्वारा वर्णन
(४) स्वयं कवि चन्द द्वारा—गुरु राम की जिज्ञासा पर वर्णन

नख-शिख के अतिरिक्त 'रासो' में रूप-वर्णन एवं श्रृङ्गार-वर्णन के अनेक सुन्दर चित्र मिलते हैं। यथा :

(१) इंछिनी का शृङ्गार
(२) पूंडीरी दाहिमी का रूप
(३) पृथा का शृङ्गार
(४) इन्द्रावती का रूप
(५) हंसावती का सौन्दर्य एवं शृङ्गार
(६) अप्सराओं का सौन्दर्य
(७) चित्ररेखा का सौन्दर्य
(८) संयोगिता के अंगों का सौन्दर्य

इन वर्णनों में नारी का सौन्दर्य मूर्तिमान हो उठता है। पनघट पर पानी भरती हुई जयचन्द की दासियों का नख-शिख सौन्दर्य-वर्णन देखिए :

द्रिग चंचल चंचल तरुनि, चितवत चित्त हरेंति ।
कंचन कलस झकोर कै, सुन्दरि नीर भरेंति ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



× × ×

दिष्ष त्रियन दिल्ली नृपति, सोव्रन घट पर हथ्थ।
वर घूँघट छुटि पहुगी, सरपट परि मनमथ्थ ॥
सरपट परि मनमथ्थ भेद बच कुचतर स्वेदं ।
उट्ठ कंप जल दृगन जारी जंभायह भेदं ॥
सिथिल सुगति लजि भगति गलति पुंडरिई तन सरसी ।
निकट निजल घट तजैं मुहर मुहरं पत्ति दरसी ॥

उक्त वर्णन के अन्तर्गत कायिक चेष्टाओं, हावों तथा मानसिक अनुभावों का मनोहारी वर्णन हुआ है। वस्तु-वर्णन के साथ भाव-व्यंजना के इस सामंजस्य ने वर्णन को रस-सिक्त कर दिया है। जल भरती हुई दासियों को सामने ही सौन्दर्य के अवतार पृथ्वीराज दिखाई पड जाते हैं। सोने का घड़ा हाथ का हाथ में रह जाता है और घूंघट खुला का खुला रह जाता है। वक्षस्थल पर स्वेद सात्विक प्रकट होता है और ओंठों में कम्प सात्विक अनुभव होता है। पृथ्वीराज की ओर देखती हुई सुन्दरी भाग जाती है। खाली घड़ा जहां का तहां पड़ा रह जाता है।

इसी प्रकार हंसावती के शृङ्गार-वर्णन में उसके अंग-प्रत्यंगों की शोभा का कौशलपूर्ण वर्णन देखिए। एक साथ कई उपमानों का प्रयोग करके कवि चन्द ने नख-शिख का अत्यन्त कलात्मक रूप प्रदर्शित किया है।

किय सुरंग मज्जनं, नराच छन्द रंजनं ।
सुगंध कंस पायसो, बिहथ्थ हथ्थ भासयौ ॥

× × ×

उपम्म नैन ऐन सी, मनों कि मीन मैन सी।
कवी निसंक जानयौ, उपम्म चित्त भानयौ ॥

× × ×

रतन्न बिंब जानयं, सु चन्द बी अमानयं ।
त्रिवल्लि, ग्रीव सोभई, जु योति पुंज लोभई ।

× × ×

कही अलप्पता ग्रहीं, मनो कि रिद्धि रंकई।
कि सोभ द्वै नयं रही, तुला दण्डिका कहीं।

× × ×

कि काम रथ्थ चक्रए, चलन्त एडि वक्र ए।
उलट्टि रंभ जंघनं, करी सु नाम पिंडनं ।

उक्त वर्णन में कवि ने हंसावती के नेत्र, अधर, त्रिवली, ग्रीवा, कुच, नितंब, जंघा आदि अंगों का वर्णन कई-कई उपमानों के साथ किया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सुन्दरियों के कटाक्षों का एक संश्लिष्ट चित्र देकर इस प्रसंग को समाप्त करते हैं :

दुराय कोय लोचने ।
प्रतष्प [illegible]म मोचने ।
अवद्धि ओट भौंहये ।
चलंति सोह सौंहये ।

प्रकृति-वर्णन

'पृथ्वीराज रासो' में कई स्थलों पर प्रकृति के वर्णन उपलब्ध होते हैं। परिमाण के विचार से यद्यपि ये वर्णन अधिक नहीं हैं, तथापि जो वर्णन उपलब्ध हैं, उनमें प्रकृति-वर्णन की विविध विधाओं के दर्शन हो जाते हैं। ये वर्णन प्रायः सजीव एवं स्वाभाविक हैं। प्रातःकाल का यह व्यंजनात्मक वर्णन देखिए इसमें प्रातःकाल की तुलना राजमद से की गई है—

कोती भार [illegible] गजं [illegible] न गंडस्थलं ।
उच्छं तुच्छ [illegible] कमनं कटिकुभं निद्रादलं ।
मधुरे [illegible] मुलं गुंजार गुंजानहा ।
तरुणे [illegible] लटा पटा पग पगं जयराज संप्रापता ।

वस्तु-वर्णन के रूप में हमको षट्ऋतु-वर्णन के दर्शन होते हैं। ये वर्णन भी काफी रोचक एवं रमणीय हैं। पावस का यह वर्णन देखिए—

घन गरजैं घरहरैं पलक, निस रैंन निघट्टैं ।
सजल सरोवर पिप्पि दियो तलछन घन फट्टैं ।
जल बद्दल वरषंत, पेम पल्लहो निरन्तर ।
कोकिल सुर उच्चरैं, अंग पहरंत पंचसर ।
दादुरह मोर दामिनी दंसय, अरि चवथ्थ चातक रटय ।
पावस प्रवेस बालम न चलि, विरह अगिनि तन तप घटय ।

यहाँ वस्तु-वर्णन में भावानुभूति छलक रही है।

अन्य-वर्णन

वस्तु-वर्णन के अन्तर्गत नगर-वर्णन, नृत्य-गीत-समारोह-वर्णन आदि के सुन्दर वर्णन मिलते हैं। पृथ्वीराज के नगर की शोभा का वर्णन देखिए :

धुरि धुम्मिय ब्रंध निसान धुर ।
पुर है प्रथिराज कि इन्द्रपुरम् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



प्रथम दिखिय किल्लियं कहनं।
अह पौरि प्रसाद बना सतनं।

गंगा का निम्नलिखित वर्णन देखिए ।

उभय कनक सिभं भ्रिगं कंठीव लीला।
पुनरपि पुहप पूजा वदति रत्ति विघराज।
उरसि मुक्त हारे मध्यि घंटीव ... ।
मुगति सुकल वल्ली वंग रंग त्रिबल्ली।

इसमें गंगा का वर्णन एक कामिनी के रूप में किया गया है। चाहें तो हम इसे प्रकृति का मानवीकरण कह सकते हैं। स्पष्ट है कि 'पृथ्वीराज रासो' में आद्यान्त रोचक वस्तु-वर्णन भरे पड़े हैं :

**वस्तु-वर्णन के साथ मार्मिक भाव-व्यंजना**

'पृथ्वीराज रासो' चन्दवरदाई ने भावपक्ष के अन्तर्गत नवरसों का सुन्दर वर्णन किया है :

उक्ति धर्मं विशालस्य राजनीति, नव रसं
षट भाषा पुरानं च, कुरानं कथितं मया।

तथा

रासो असंभ नवरस सरस, चन्द-छन्द किय अमिय सम।
शृङ्गार वीर करुना विभछ, भय, अद्‌भुत हंसत सम।

परन्तु यह स्पष्ट है कि 'पृथ्वीराज रासो' में वीर-रस का स्वर सबसे ऊँचा है। वीररस के सजीव वर्णनों से 'पृथ्वीराज रासो' आद्योपान्त भरा पड़ा है। कवि की वृत्ति सर्वाधिक वीर-रस वर्णन में ही रमी है। वीर रस के पश्चात् शृङ्गार-वर्णन अथवा शृंगार रस का स्थान है। अन्य रासों का निरूपण अत्यन्त विरल है और उनका उपयोग उसी सीमा तक किया गया है, जहाँ तक वे 'वीर-रस' की सावयव अभिव्यक्ति में सहायक होते हैं।

रासो में वीर रस के अनेक ऐसे वर्णन मिलते हैं जो आलम्बन, उद्दीपन, अनुभावों तथा व्यभिचारी भावों की सहायक योजना द्वारा वीर रस की निष्पत्ति करते हुए पाठक को रस-मग्न कर देते हैं। निम्नलिखित उदाहरण में पृथ्वीराज की सेना एवं उसके प्रयाण का संश्लिष्ट वर्णन किया गया है—

हयग्गयं सजे भरं, निसांन बज्जि दुभरं।
नफेरि बीर बज्जई, मृदग झल्लरी गई।
सुनंत ईस रज्जई, तनीस राग सज्जई।
सुभेरि मुंकयं घनं, श्रवन्न फुट्टि झंझनं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



व्यूह-वर्णन का यह सजीव चित्र देखिए :

छत्र सुजीक सुअप्पि, जैत दीनौं सिर छत्तं ।
चन्द्र व्यूह अंकुरिय, राज दुअ इहाँ इक्कत्त ।
× × ×
साँवलो सूर सारंग दे, उररि पान गोरीय मुष ।
हथ नारि गोरि जंबूर धनु, दुहुं बांह उभैति रुष ।

(समय २७, छन्द ७१)

'पृथ्वीराज रासो' में वीर-रस के समानान्तर ही 'शृंगार रस' की धारा प्रवाहित होती है। शृंगार-रस के दोनों पक्षों—सम्भोग और विप्रलम्भ के वर्णन रासो में मिलते हैं परन्तु सम्भोग शृंगार के वर्णन अपेक्षाकृत अधिक हैं। हम नख-शिख-वर्णन के अन्तर्गत सम्भोग शृंगार सम्बन्धी उद्धरण प्रस्तुत कर चुके हैं। फिर भी स्नान करती हुई इंछिनी का यह मार्मिक शब्द-चित्र पाठकों के अवलोकनार्थ प्रस्तुत है—

बिन वस्त्रप रगं सुरंग रसी,
गृहले जनु साप मदन्न कसी ।
नव लोनइ लोइ उबट्टन कीं,
कि वस्यौ मनु काम सुपट्टन कौं ।
× × ×
बिन कंचुकि अंग सुरंग भरी,
तुकली जनु चंपक हेम वरी ।
× × ×
सुभरी लट चंचल नीर भरी,
तिनकी उपमा कवि दिव्य धरी ।
× ÷ ×
अति चंचल ह्वै बिथुरे मुष तै ।
मनौ राह ससी सिसुता बपते ।
× × ×
करि मंजन अंगोछि तन, धूप वासि बहु अंग ।
मनो देह जनु नेह धुलि, हेम भोज जनु गंग ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचना के फलस्वरूप हमारे सम्मुख अग्रलिखित निष्कर्ष आते हैं—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(१) 'पृथ्वीराज रासो' का वस्तु-वर्णन बहुत ही विशाल, व्यापक, एवं गरिमामय है।

(२) गतिमय एवं स्थिर दोनों ही प्रकार के वस्तु वर्णन में रासोकार को आशातीत सफलता प्राप्त हुई है—

(३) 'पृथ्वीराज रासो' का वस्तु-वर्णन इतिवृत्तात्मक एवं नीरस न होकर संश्लिष्ट एवं सरस है।

(४) 'पृथ्वीराज रासो' के वस्तु-वर्णन में भाव-व्यंजना का सुन्दर पुट है। इस प्रकार हमको उसमें वस्तु-वर्णन और भाव-व्यंजना का सुखद समन्वय दिखायी देता है।

(५) 'पृथ्वीराज रासो' में नवरसों की योजना की गयी है। वीर रस और शृङ्गार रस के चित्र विशेष रूप से मार्मिक हैं।

(६) वस्तु-वर्णन की भावात्मक पृष्ठभूमि में भावानुभूति एवं अनुभूतिपूर्ण चित्र प्रस्तुत करने में रासोकार को विशेष सफलता प्राप्त हुई है।

अतः स्पष्ट है कि वस्तु-वर्णन और भाव-व्यंजना के समन्वय की दृष्टि से 'रासो' अनूठा महाकाव्य है। महाकाव्य के अनुकूल विस्तृत वस्तु-वर्णन मिलता है। युद्ध-वर्णन, शृङ्गार-वर्णन एवं नख-शिख वर्णन की रसमयता ने इतिवृत्तात्मक वर्णनों को भी रसमय बना दिया है। वस्तु-वर्णन के अन्तर्गत मार्मिक अनुभूतिपूर्ण प्रसगों का सरस वर्णन हुआ है।

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

८

# काव्य-सौष्ठव

प्रश्न १९—भाव पक्ष और कलापक्ष की दृष्टि से 'पृथ्वीराज रासो' की सम्यक् समीक्षा कीजिए।

अथवा

प्रश्न २०—रासो की साहित्यिक विशेषताओं का मूल्यांकन कीजिए।

अथवा

प्रश्न २१—रस-परिपाक, वृत्त-वर्णन तथा कलात्मक-सौन्दर्य की कसौटी पर पृथ्वीराज रासो का सम्यक् मूल्यांकन कीजिए।

अथवा

प्रश्न २२—'पृथ्वीराज रासो' में भावपक्ष एवं कलापक्ष के समन्वय पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

अथवा

प्रश्न २३—'पृथ्वीराज रासो' के काव्य-सौष्ठव पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—पृथ्वीराज रासो ढाई हजार पृष्ठों का एक बहुत बड़ा ग्रन्थ है। इसमें ६९ समय (सर्ग या अध्याय) हैं। प्राचीन समय में प्रचलित प्रायः सभी छन्दों का इसमें व्यवहार हुआ है। मुख्य छन्द हैं, कवित्त, (छप्पय) दूहा, तोमर, त्रोटक, गाहा और आर्या। यह हिन्दी-साहित्य का प्रथम महाकाव्य है। यह हिन्दी के कवि चन्दबरदाई द्वारा विरचित ग्रन्थ है। चन्द दिल्ली के अन्तिम सम्राट महाराज पृथ्वीराज के सामन्त और राज कवि थे।

पृथ्वीराज रासो में आबू के यज्ञकुण्ड के चार क्षत्रिय कुलों की उत्पत्ति तथा चौहानों के अजमेर में राज्य स्थापन से लेकर पृथ्वीराज के पकड़े जाने तक का सविस्तार वर्णन है।

पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में काफी मतभेद है। इसमें घटनाक्रम कुछ इस प्रकार है तथा भाषा का स्वरूप कुछ ऐसा अव्यवस्थित एवं अनिश्चित है कि विद्वानों को इस बात में सन्देह होने लगा है कि यह एक प्रामाणिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



ग्रन्थ है। विद्वानों की राय में यह १६ वीं शताब्दी में लिखा गया ग्रन्थ है, तथा इसके अनेक अंश प्रक्षिप्त हैं।

पं० रामचन्द्र शुक्ल के निम्नलिखित कथन द्वारा पृथ्वीराज रासो की भाषा का स्वरूप सर्वथा स्पष्ट हो जाता है :

" भाषा की कसौटी पर यदि ग्रन्थ को कसते हैं तो और भी निराश होना पड़ता है क्योंकि वह बिल्कुल बे ठिकाने है। उसमें व्याकरण आदि की कोई व्यवस्था नहीं, है। दोहों की ओर कुछ कवित्तों (छप्पयों) की भाषा तो ठिकाने की है, पर त्रोटक आदि छोटे छन्दों में तो कहीं-कहीं अनुस्वारांत शब्दों की ऐसी मनमानी भरमार है जैसे किसी ने संस्कृत-प्राकृत की नकल की हो। कहीं-कहीं तो भाषा आधुनिक सांचे में ढली-सी दिखाई पड़ती है; क्रियाएं नये रूपों में मिलती हैं। पर साथ ही कहीं-कहीं भाषा अपने असली प्राचीन साहित्यिक रूप में भी पायी जाती है, जिसमें प्राकृत और अपभ्रंशी शब्दों के साथ-साथ शब्दों के रूप और विभक्तियों के चिन्ह पुराने ढंग के हैं। इस दशा में भाटों के वाग्जाल के बीच कहां और किसके अंश असली हैं, इसका निर्णय असम्भव होने के कारण यह ग्रन्थ न तो इस के इतिहास के और न साहित्य के इतिहास के जिज्ञासुओं के काम का है।

'पृथ्वीराज रासो' में प्रधान रूप से वीर रस तथा गौण रूप में शृंगार रस का निरूपण हुआ है। दोनों का आश्रय पृथ्वीराज चौहान का जीवन-चरित्र है। युद्धों के वर्णन विशेष रूप से बहुत ही सजीव है :

बज्जिय घोर निसांन रान चौहान चिहौ दिस।
सकल सूर सामन्त समरि बल जन्त्र मंत्र तिस।
उट्ठि राज प्रथिराज बाग मनो लग्ग वीर नट।
कढ़त तेग मन बेग लगत मनों बीजु झट्ट घट।

थकि रहे सूर कौतिक गिगन, रगन मगन भइ श्रोन घर।
हर हरषि वीर जग्गे हुलसि हुरेउ रंग नवरत्त वर।

(पद्मावती समय ६०)

तथा हुरेव रंग नव रत्त बर, भयेउ युद्ध अति चित्त।
निस बासर समुझि न परत, न को हार नह जित्त।

(पद्मावती समय, ६१)

'पद्मावती' के रूप-वर्णन के प्रसंग में शृंगार-रस का समावेश हुआ है। यद्यपि 'रति' भाव परिपक्वावस्था तक नहीं पहुंच सका है तथापि शृंगार रस मूर्तिवंत हो गया है। देखिए पद्मावती का नख-शिख-वर्णन का एक अंश :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



छप्पति गयंद हरि हंस गीत, बिह बनाय संचै सचिय।
पदमिनिय रूप पदमावतिय मनहुँ काम-कामिनि रचिय।
× × ×
मनहुँ काम-कामिनि रचिय रचिय रूप की रास।
पसु पंछी सब मोहिनी, सुर नर मुनियर पास।

(पद्मावती समय, ५, १)

कहते हैं कि चन्द वरदाई को जालंधारी देवी का इष्ट था। जो भी हो, पृथ्वीराज रासो में उनके रचना-कौशल, उनकी अद्भुत कल्पना-शक्ति और प्रतिभा का सुन्दर समन्वय है। रचना को देखकर यह स्पष्टतया विदित हो जाता है कि चन्द व्याकरण, छन्द अलंकार आदि के पूरे ज्ञाता थे तथा अपने समय में प्रचलित भाषाओं पर उनका पूरा-पूरा अधिकार था। उपर्युक्त छन्द में ही उत्प्रेक्षा तथा प्रतीत अलंकारों का स्फुटन सर्वथा स्वाभाविक है।

रासो की भाषा में तीन स्तर या अवस्थाएँ स्पष्ट परिलक्षित होती हैं—(१) भाषा का प्राचीन रूप, जिसमें प्राकृत एवं अपभ्रंश की छाप है तथा संस्कृत के शब्दों का प्रयोग है। (२) मध्यकालीन विशेषतायुक्त भाषा, जिसमें शब्द-योजना ललित और मधुर है तथा संस्कृत के तत्सम रूपों का प्रयोग है और (३) आधुनिक प्रयोगों से युक्त भाषा।

**महाकाव्यत्व**

"शास्त्रीय लक्षणों के अनुसार पृथ्वीराज रासो आंशिक रूप से ही महाकाव्य है। उसका नायक उच्च वंशीय क्षत्रीय राजा है। उसमें ६९ सर्ग हैं, उसमें अनेक छन्दों का प्रयोग है, उसमें नगर, प्रकृति आदि के वर्णन भी हैं; परन्तु महाकाव्य की दृष्टि से उसमें सबसे बड़ा दोष यह है कि उसमें जीवन के विविध क्षेत्रों पर कवि की व्यापक दृष्टि नहीं जा सकी है। कवि की दृष्टि अपने आश्रयदाता के प्रताप और शौर्य-वीर्य में ही बद्ध होकर रह गई। महाकाव्य में जिस व्यापक और गम्भीर दृष्टि से जनसाधारण की सार्वभौम और सार्वकालिक चित्त वृत्तियों का जो चिर-नूतन वर्णन रहता है उसका रासो में अभाव है। रासो में वर्णित घटनाओं की प्रबन्ध शृंखला भी सुनियोजित नहीं है तथा कथानक भी अनियमित एवं शिथिल है।"

युद्ध के वर्णनों एवं उनकी व्यापकता को देखकर यह तो स्वीकार करना ही पड़ता है कि रासो में महाकाव्य की अन्तरात्मा झांकती हुई दिखाई देती है। इन वर्णनों में कवि की सूक्ष्म-पर्यवेक्षण की शक्ति निहित है। ये वर्णन अत्यन्त सजीव एवं चित्रोपम हैं। वीर रस युद्ध, शस्त्रास्त्र, सेना आदि का वर्णन प्रत्यक्ष अनुभव प्रसूत होने के कारण अत्यन्त रमणीय है। इनमें प्रयुक्त उक्तियां बहुत ही स्फूर्तिदायिनी हैं। युद्ध वर्णन के अन्तर्गत रणक्षेत्र के सांगोपांग दृश्य—वीरों का उत्साह, सैन्य-सज्जा, घायलों का चीत्कार, कायरों की घबराहट, हाथी-घोड़ा का भयंकर कर्ण-भेदी कोला-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



हल, रक्त की नदी बहना, वीरों के कटे हुए अंगों का इधर-उधर लुढ़कना आदि के निरूपण द्वारा चन्द ने युद्ध की तस्वीर सी खींच दी है। युद्ध के लिए तलवार निकालते हुए घोड़ों पर सवार पृथ्वीराज की शोभा का वर्णन हम अभी कर ही चुके हैं। रणभूमि की यह अपूर्ण झाँकी देख लीजिए—

> धर उप्पर भर परत करत अति युद्ध महा भर ।
> कहुँ कमंध, अस गृद्ध, कहुँ करि चरन अन्तसरि ।
> कहीं दन्त मंत है षुट षुपरि कुम्भ भ्रसुण्ड्डहि रुंड सब ।
> हिन्दुवांन रान भय भांन मुष गहीं तेग चहुँवांन जब ।

देखिए नीचे की पंक्तियों में कैसा घमासान युद्ध हो रहा है—

> तुम लेहु लेहु मुष जंपि जोध, हन्नाह सूर सब पहिरि क्रोध ।
> पहुँचे सु जाय तत्ते तुरंग, भ्रुअ भिरन भूप जुटि जोध अंग ।
> कम्मान वाँन छुटहिं अपार, लागत लोह इमि सारभार ।
> घमसान घरन सब वीर खेत, घन स्रोत बहत अस रकत रेत ।

सेना और योद्धाओं के निम्नलिखित वर्णन में चन्द की बहुज्ञता का परिचय प्राप्त होता है—

> पुरासान सुलतान षंधार मीरं । बलख स्यो बलं तेग अच्चूक तीरं।
> मजारी चषी, मुष्ष जंबुक्क लारी । हजारी हजारी हुंकें जोध भारी ।
> निनं पष्परं पीठ हय जीन सालं । फिरंगी कती पास सुकलात नालं ।।
> एराकी अरव्वी पटी तेज ताजी । तुरक्की महावांन कम्मांन बाजी ।।

रासों के शृंगार-वर्णन के अन्तर्गत हमको संभोग तथा विप्रलम्भ-शृंगार सम्बन्धी सुन्दर वर्णन मिलते हैं। इन वर्णनों में हमको मनोविज्ञान का परिचय मिलता है। निराशा और दुःखी पद्मावती, पृथ्वीराज का आगमन सुनकर प्रसन्न हो जाती है। देखिए वह किस प्रकार अपनी शृंगार-सज्जा में लग जाती है।

> दिष्षत पंथ दिल्ली दिसांन, सुष भयो सुक मिल्यो आंन ।
> सदेश सुनत आनन्द नैन, उमगिय बाल मनमथ्थ सैन ।

> तब चिक्कट चीर डार्यो उतारि, मज्जन मयंक नव सत सिंगार ।
> भूषन मँगाय नष सिष अनूप, सजि सेन मनों मनमथ्थ भूप ।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि इन वर्णनों की भाषा सर्वथा प्रसंगानुकूल है। वीर-रस वर्णन की भाषा जहाँ कठोर वर्ण-प्रधान उद्धत, एवं ओजस्विनी है, वहाँ शृंगार-रस निरूपक पदावली सर्वथा कोमल एवं श्रुतिमधुर है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



रासो में अलंकारों का प्रयोग सर्वथा स्वाभाविक रूप में ही हुआ है। चन्दवरदाई ने रासो में अनुप्रास, यमक, उपमा' रूपक, उत्प्रेक्षा, सन्देह तथा अतिशयोक्ति अलंकार का बहुत ही कौशल के साथ प्रयोग किया है। ये अलंकार अपने बहुत ही स्वाभाविक रूप में आये हैं और प्रवन्ध सूत्र में कोई किसी प्रकार की बाधा नहीं पहुँचाते हैं।

एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। यद्यपि उपमान प्राय: परम्परायुक्त ही हैं, तथापि कवि ने उनके प्रयोग में अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। 'मनहुँ कला ससिभान' वाला छन्द हमारे कथन की पुष्टि करने के लिए पर्याप्त है। अपनी स्वाभाविकता के द्वारा अलंकारों में रासो को विशेष रमणीयता प्रदान की है। रासो में अनेक छन्दों का प्रयोग हुआ है—गाथा, दूहा, त्रोटक, तोमर, कवित्त, पद्धरी, भुजंग प्रयात, नाराच, साटक, अरिल्ल, कुण्डलियां आदि। पर सबसे अधिक प्रयुक्त छन्द हैं दूहा और कवित्त। दूहों में ही भाषा का सर्वाधिक व्यवस्थित रूप दिखाई देता है। कवित्तों में प्राचीन हिन्दी के चिन्ह अधिक मिलते हैं। रासो में दहे (कालान्तर में विकसित होकर दोहा कहे जाने वाला छन्द) का प्रयोग तो अत्यन्त साधारण रीति से हुआ है परन्तु त्रोटक, , तोमर, पद्धरी, भुजंगी,कवित्त इन छन्दों का प्रयोग केवल वीर रसपूर्ण स्थानों पर ही हुआ है। छप्पय छन्द को ही रासो में कवित्त कहा गया है। चन्द कवित्तों का राजा है। रासो जैसे भावपूर्ण एवं ओजपूर्ण छप्पय (कवित्त) कम ही मिलेंगे।

सारांश यह है कि पृथ्वीराज रासो हमारे हृदय प्रसार का एक स्मारक स्तम्भ है। उसके द्वारा हमारे हिन्दी- साहित्य का आदिकाल शोभायमान है और उसी के साथ हिन्दी काव्य की सुनिश्चित एवं गौरवपूर्ण परम्परा आरम्भ होती है। उसकी प्रामाणिकता भले ही संदिग्ध हो परन्तु वह है एक श्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य।

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

९

# भाषा में अनेकरूपता

प्रश्न २४—'पृथ्वीराज रासो' की भाषा में पाई जाने वाली अनेकरूपता के कारणों की छान-बीन कीजिए।

उत्तर—शब्द-भण्डार की दृष्टि से रासो की भाषा में अनेकरूपता दिखाई देती है। स्वयं रासोकार ने अपनी भाषा के सम्बन्ध में कहा है—

उक्ति धर्मं विशालस्य राजनीति वंन रसं।
षट् भाषा पुरानं च कुरानं कथित मया।

इस षट्भाषा 'कुरान और पुरान' से संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, देशज भाषा (शोरसेनी, मागधी आदि) तथा अरबी-फारसी का आशय है। षट्भाषा का अर्थ इस प्रकार किया जा सकता है—

संस्कृत प्राकृतं चैव, अपभ्रंश पिशाचिका।
मागधी सूरसेनी च, षट भाषाश्चैव जायते॥

रासो के अभी तक कितने ही संस्करण प्राप्त हो चुके हैं किन्तु प्रामाणिक संस्करण का अभी तक उद्धार नहीं हो पाया है। उनमें वर्णित घटनाओं की विविधता एवं उनके विभिन्न क्रम देखकर विद्वानों को रासो की प्रामाणिकता में सन्देह होने लगा है। अधिकांश विद्वानों के मतानुसार रासो प्राचीन रचना न होकर अर्वाचीन, लगभग १६वीं शताब्दी में रची हुई काव्य-रचना है।

रासो की प्रामाणिकता की भांति रासो की भाषा भी संदिग्ध है। इसकी भाषा के सम्बन्ध में भी विद्वानों में काफी मतभेद है। उसकी भाषा की अनेकरूपता के कारण ऐसा होना स्वाभाविक ही है।

**भाषा-विज्ञान की दृष्टि से पृथ्वीराज रासो की भाषा का विवेचन और महत्व**

भाषा-विज्ञान की दृष्टि से 'पृथ्वीराज रासो' की भाषा का बहुत महत्व है। इसमें हिन्दी का प्राचीनतम रूप सुरक्षित है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पाश्चात्य विद्वान एम० एस० ग्राउज ने सर्वप्रथम भाषा-विज्ञान की दृष्टि से इस ग्रन्थ की भाषा का अध्ययन किया था। इसके बाद अन्य विद्वानों ने भी इस दिशा में प्रयत्न किया है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से अभी तक इसकी भाषा का अध्ययन किसी भी दिशा में पूर्ण नहीं कहा जा सकता है परन्तु फिर भी इस सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के मत हमारा ज्ञान-वर्द्धन करते ही हैं।

**डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी का मत**

"भाषा-शास्त्री को यदि भारत की गौड़ीय भाषाओं की अभिसंधि देखनी है तो रासो से अधिक चमत्कृत करने वाला दूसरा कोई ग्रन्थ उसे न मिलेगा। विभिन्न भारतीय भाषाओं की संख्या में उसे अनोखे और क्रान्तिकारी सिद्धान्तों के नियमन का अवसर-स्थल-स्थल पर आएगा। इसकी भाषा की परीक्षा करने पर कठिन समस्याओं का समाधान करना पड़ेगा। इसमें वैदिक, संस्कृत, पालि, पैशाची, मागधी, अर्ध मागधी, शौरसेनी, महाराष्ट्री, अपभ्रंश, प्राचीन, राजस्थानी, प्राचीन गुजराती तथा पंजाबी, ब्रज आदि भारतीय आर्य भाषाओं के शब्दों के अतिरिक्त अरबी, फारसी और तुर्की के शब्दों की अनोखी खिचड़ी तैयार मिलती है तथा देशज शब्दों की एक बड़ी संख्या है।"

**रासो की भाषा के सम्बन्ध में मत**

रासो में विविध भाषाओं के शब्द मिलते हैं। उसकी भाषा के सम्बन्ध में निम्नलिखित मत उल्लेखनीय हैं :

**(१) पृथ्वीराज रासो की भाषा अपभ्रंश है**

विद्वानों का एक वर्ग 'पृथ्वीराज रासो' की भाषा को अपभ्रंश मानता है। इस वर्ग के विद्वानों में मुख्य हैं—मुनि जिनविजय, प० मथुरा प्रसाद दीक्षित, मुनि क्रान्ति सागर, डा० सुनीतकुमार चटर्जी, डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा डा० दशरथ शर्मा।

**(२) पृथ्वीराज रासो की भाषा डिंगल अर्थात् पुरानी राजस्थानी है**

विद्वानों का एक वर्ग इस ग्रन्थ की भाषा को डिंगल—पुरानी राजस्थानी मानता है। इस वर्ग के विद्वानों में मुख्य हैं—डा० मोतीलाल मेनारिया और डा० रामकुमार वर्मा। परन्तु नरोत्तम स्वामी ने इस मत का प्रबल खण्डन किया है :

**(३) पृथ्वीराज रासो की भाषा पिंगल या ब्रजभाषा है**

सर्वश्री एफ० एस० ग्राउज, जॉन बीम्स, डॉ० ग्रियर्सन, टैसीटरी आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ० श्यामसुन्दर दास, मिश्रबन्धु, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, नरोत्तम स्वामी, डॉ० उदय नारायण तिवारी प्रभृति अनेक विद्वान रासो की भाषा को पिंगल या प्राचीन भाषा मानते हैं। डॉ० नरोत्तम स्वामी ने भी इसी मत का समर्थन किया है—"जनश्रुति रासो को राजस्थानी-डिंगल की रचना नहीं मानती। राजस्थान की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



परम्परागत जनश्रुति तो रासो को पिंगल (ब्रजभाषा) की ही रचना मानती आई है। केवल पिंगल से सर्वथा अनभिज्ञ कतिपय आधुनिक कालीन विद्वानों ने कुछ समय से यह भ्रांत धारणा अवश्य फैला रखी है और उनके कुछ अनुयायी भी उत्पन्न हो गये हैं।"

(४) पृथ्वीराज रासो की भाषा मिश्रित है

"रासो की भाषा न मूलतः अपभ्रंश है व मूलतः राजस्थानी ही। वह १६वीं शताब्दी की ब्रजभाषा का एक अत्यन्त विकृत रूप है।"—डा० रामरतन भटनागर

"रासो के व्याकरण के नियम हिन्दी के ही हैं और प्रधानता पिंगल की है, डिंगल की नहीं।"
—डा० नामवर सिंह

"रासो के वृहद्-संस्करण की भाषा का जहाँ तक सम्बन्ध है उसका ढांचा निश्चय रूप में ब्रज का है।"
— डा० उदयनारायण तिवारी

डा० विपिन विहारी त्रिवेदी के मतानुसार, "पृथ्वीराज रासो की भाषा में वैदिक, संस्कृत, पालि, पैशाची, मागधी, अर्ध-मागधी, शौरसेनी, पजाबी, ब्रज आदि भारतीय भाषाओं के शब्दों के अतिरिक्त तुर्की, फारसी और अरबी के शब्दों की भी अनोखी खिचड़ी मिलती है।"

रासो के आद्यान्त अध्ययन के फलस्वरूप विदित होता है कि रासो की भाषा एक खिड़की भाषा है—वह न तो पूर्ण डिंगल ही है और न पूर्णतया पिंगल ही उसमें डिंगल पिंगल आधुनिक भाषा के रूप मिलते हैं। भाषा के इन आधुनिक प्रयोगों को देखकर यह शंका होना स्वाभाविक है कि रासो अर्वाचीन रचना है। भाषा की इस अनेकरूपता को देखकर आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि, "भाषा की कसौटी पर यदि ग्रन्थ को कसते हैं, तो और भी निराश होना पड़ता है क्योंकि वह बिलकुल बे-ठिकाने की है। उसमें व्याकरण आदि की कोई व्यवस्था नहीं है। दोहों और कुछ-कुछ कवित्तों (छप्पयों) की भाषा तो ठिकाने की है; पर त्रोटक आदि छोटे-छोटे छन्दों में तो कहीं-कहीं अनुस्वारांत शब्दों की ऐसी मनमानी भरमार है जैसे किसी ने संस्कृत-प्राकृत की नकल की हो। कहीं-कहीं तो भाषा आधुनिक सांचे में ढली हुई भी दिखायी पड़ती है, क्रियाएँ नये रूपों में मिलती हैं। पर साथ ही कहीं-कहीं भाषा अपने असली प्राचीन साहित्यिक रूपों में पाई जाती है, जिसमें प्राकृत और अपभ्रंश शब्दों के साथ-साथ शब्दों के रूप और विभक्तियों के चिन्ह पुराने ढंग के हैं। इस दशा में भाटों के इस वाग्जाल के बीच कहाँ पर कितना अंश असली है, इसका निर्णय असम्भव होने के कारण यह ग्रन्थ न तो भाषा के इतिहास के और न साहित्य के इतिहास के जिज्ञासुओं के काम का है।"

पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता को संदिग्ध वताने वाले कारणों में उसकी भाषा की अनेकरूपता एक बड़ा हेतु है। डॉ० रामकुमार वर्मा ने लिखा है कि—"उसमें अरबी-फारसी के शब्द वहुत से हैं, जो चन्द के समय किसी प्रकार भी व्यवहार में नहीं लाये जा सकते थे। ऐसे शब्द प्रायः दस प्रतिशत हैं।"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



"भाषा अनुस्वारान्त शब्दों से भरी हुई है और उसमें कोई स्थिरता नहीं है। प्राकृत और अपभ्रंश की शब्द-रूपावली का कोई विचार ही नहीं है। शब्दों की रूपावली और नये और पुराने ढंग की विभक्तियां बुरी तरह से मिली हुई हैं।" आचार्य शुक्ल और डॉ० वर्मा दोनों विद्वानों के मत प्रायः समान ही हैं। दोनों की राय का यह निष्कर्ष है कि "रासो में प्राचीन और अर्वाचीन दोनों ही प्रकार की भाषा के उदाहरण मिलते हैं अतः कह नहीं सकते कि कितना अंश प्राचीन एवं प्रामाणिक है और उसका कितना अंश अर्वाचीन अथवा प्रक्षिप्त है।"

डॉ० श्यामसुन्दरदास ने भाषा सम्बन्धी अनेकरूपता का स्पष्टीकरण करते हुए प्रायः इसी मत का समर्थन किया है। उन्होंने बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि मुसलमानों के आगमन के पश्चात् रासो में अनेक अंश पीछे से जोड़े गये होंगे और इन स्थलों की भाषा का स्वरूप अर्वाचीन होगा, अरबी-फारसी एवं ब्रजभाषा के शब्दों से युक्त होना स्वाभाविक ही है।

शहाबुद्दीन गोरी से लगभग पौने-दो सौ वर्ष पहले महमूद गजनवी भारत में लूटमार करने आ चुका था। गजनवी से तीन सौ वर्ष पहले भी सिंध और मुल्तान पर मुसलमानों का अधिकार हो चुका था और वे भारत में अपना व्यापार करने लगे थे। पंजाब भी मुसलमानी संस्कृति से प्रभावित हो चुका था। चन्द लाहोर का निवासी था। अतः बाल्यावस्था से ही ये अरबी-फारसी के शब्द उसके मस्तिष्क में प्रवेश करने लगे थे। इस कारण चन्द की भाषा में मुसलमानी शब्दों का होना स्वाभाविक है।

"रासो का बहुत-सा भाग प्रक्षिप्त है, अतः परिवर्ती काल में मुसलमानी आतंक के साथ-साथ भाषा पर अरबी, फारसी का आतंक होना स्वाभाविक था। इसीलिए प्रक्षिप्त अंशों में और भी मुसलमानी शब्दों के आ जाने से रासो में दस प्रतिशत शब्द अरबी-फारसी के आ गये हैं।"

मिश्रबन्धु का भी प्रायः यही मत है। यथा :

"भाषा के नवीन रूप जहां रासो की अर्वाचीनता को सिद्ध करते हैं वहां प्राचीन रूप रासो की प्राचीनता को भी प्रमाणित करते हैं। प्रक्षिप्त अंशों के कारण ही भाषा, शब्द-रूपावली अर्वाचीन हो गयी है; नहीं तो रासो का वास्तविक रूप प्राचीनता ही लिए हुए है।"

उपर्युक्त मतों के आधार पर सरलतापूर्वक यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भाषा की अनेकरूपता का कारण है रासो के अनेक अंशों का प्रक्षिप्त होना। परन्तु प्रक्षिप्तता कितने अंशों में है—यह मालूम करना ही तो असली समस्या है। इस सम्बन्ध में डॉ० रामकुमार वर्मा का कथन बहुत ही महत्वपूर्ण है। हम उसको ज्यों का त्यों उद्धृत करते हैं :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



"अरबी, फारसी के शब्दों का प्रयोग रासो के सभी समयों में समान रूप से है। किसी समय के कितने अंश को प्राचीन और प्रामाणिक माना जावे और कितने को प्रक्षिप्त, यह निर्णय करना बहुत कठिन है। यदि इन फारसी और अरबी शब्दों को निकालकर रासो का संस्करण किया जाय तो कथा का रूप ही विकृत हो जायगा। किस शब्द को निकाला जाय और किसे न निकाला जाय, यह भी निश्चित करना बहुत कठिन है। । फिर हमें रासो में कुछ ऐसे फारसी के शब्द मिलते हैं जो बिलकुल अर्वाचीन अर्थ में प्रयुक्त हैं। जैसे :

वंचि कागद चहुँआंन ने फिर नै चन्द सर थान।

यहां कागज वांचना पत्र पढ़ने के अर्थ में है, जिसका प्रयोग अर्वाचीन है।

एक ही छन्द में छन्दों की विविध रूपावली के दर्शन होते हैं। क्या एक ही छन्द में समय का इतना अधिक अन्तर हो जाता है कि जिससे शब्द का रूप ही बदल जावे ? शब्दों और विभक्तियों की भिन्न रूपावली छन्दों में गुथी पड़ी है। यह किस प्रकार अलग की जा सकती है ? उसी (रेवातट) समय में 'कागद' का 'कागज' रूप मिलता है।

× × ×

फिर जहां वर्गकृत छन्द है, वहां भी शब्द-रूपों में भिन्नता है। भाषा की प्रथम परिस्थिति में यह भिन्नता हो सकती है, परन्तु शब्दों के एक साथ इतने विकृत रूप नहीं हो सकते।

एक ही छन्द में विविध रूपों की चर्चा करते हुए डॉ० वर्मा ने अन्य अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। यथा :

निम्नलिखित कुछ शब्दों के कितने अधिक रूप मिलते हैं :

(१) बात—बात, वत्त, बत्त, वत।
(२) सैल—सल, सयल, सइल, सेलह।
(३) मनुष्य—मनुष्य, मनुप, मानुष्य, मानष, मनष।

व्यंजन भी कहीं संयुक्त रूप से सरल और सरल से संयुक्त हो गये हैं :

(१) पहुकर, पोक्खर।
(२) कम्मं, कम, क्रम्म, काम।
(३) कारज, काज, कज्ज।
(४) अस्नान, सनान, न्हान।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शब्दों के इन विभिन्न रूपों को जहाँ हम शब्दों की अनेकरूपता कहते हैं वहाँ हम यह भी कह सकते हैं कि 'निरंकुशः कवयः' की उक्ति के अनुसार, यह भी सम्भव है कि स्वयं ग्रन्थकार ने ही चन्द के अन्तर्गत मात्रा की पूर्ति के लिए ही शब्दों को तोड़-मरोड़ कर रखा हो। इन शब्दों के अनेक रूपों में कोई भी रूप ऐसा नहीं है जो पहिचाना न जा सकता हो, अथवा मूल शब्द से भिन्न प्रतीत होता हो।

रासो की सभी प्राप्त प्रतियों में ये दोष हैं। अतः शब्दों की इस विभिन्नता को लिपिकारों के मत्थे मढ़ना किसी दशा में ठीक नहीं है।

"रासो की भाषा के सम्बन्ध में एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। उसमें जहां वीर रस का ओजपूर्ण वर्णन है, वहां की भाषा तो शुद्ध डिंगल है। इस भाषा में द्वित्व-बहुला प्रवृत्ति, प्राकृतभास और अपभ्रंशाभास के टवर्ग की प्रचुरता आदि डिंगल की समस्त विशेषताएं प्राप्त होती हैं। ये सब गुण वीर रस के सर्वथा अनुकूल हैं। रासो में जहाँ शृंगार रस-वर्णन सम्बन्धी कोमल स्थान हैं, वहाँ की भाषा व्रजभाषा के बहुत निकट है। वहां पर कोमल एवं सरस शब्दों के प्रयोग की ओर विशेष ध्यान रखा गया है। ऐसे स्थलों की भाषा निर्विवाद रूप से पिंगल है।"

पहले प्रकार की भाषा अधिकांश छप्पयों में पायी जाती हैं, तथा दूसरे प्रकार की प्रायः दोहों में (दूहों में) पायी जाती है।

उक्त विवेचन से क्या यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि रासो में वीर-रस के वर्णन स्थलों पर वीर-गाथा काल की भाषा का प्रयोग किया गया है जो डिंगल के अधिक निकट है तथा शृंगार-रस के वर्णनों में परिवर्तीकाल में प्रयुक्त कोमल पदावली युक्त व्रजभाषा का प्रयोग किया गया है, जो व्रजभाषा के काफी निकट पहुँच जाती है।

रासो की भाषा में प्रस्तुतः भाषा के तीन स्पष्ट स्तर अथवा तीन अवस्थाएं परिलक्षित होती हैं। यथा :

(१) भाषा का प्राचीन रूप—इसमें प्राकृत और अपभ्रंश की छाया है। इस भाषा में संस्कृत शब्दों के प्राकृत एवं अपभ्रंश रूप पाये जाते हैं। जैसे द्रुग, अभग्ग, मज्जाद, वन्निय, मुनियर, परवेस, वेघन्त आदि।

प्राचीन भाषा का रूप यह है :

"नमः सम्भवायं सरब्बाव बायं नमो रुद्दपायं वरद्दाय सायं।

× × ×

नमो व्यघ्र विघ्नायने सिद्ध जीवै।"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(२) ललित एवं मधुर शब्द-योजना पूर्ण रूप—इसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों तथा अपभ्रंश शब्दों के विकसित रूपों के प्रयोग मिलते हैं। यथा :

मनहुँ कला ससिभान कला सोलह सो बन्निय।
बाल वैस ससि ता समीप अमृत रस पिन्निय॥
बिगस कमल स्रिग भ्रमर बेनु षंजन मृग लुट्टिय।
हरि कीर, अरु बिम्ब मोति नष सिष अहि घुट्टिय।

इस उदाहरण में कमल, मृग, कीर आदि शब्द तत्सम रूप में ही प्रयुक्त हुए हैं।

(३) आधुनिक काल में मिलता हुआ रूप—इसमें भाषा का रूप अत्यन्त अर्वाचीन है। अनेक क्रियापद बिल्कुल आधुनिक लगते हैं—व्रजभाषा में उनका चलन मिलता है। नीचे उदाहरण में मोटे टाइप के शब्द इसी प्रकार की भाषा के द्योतक हैं—

एक पहुर सांवत प्यारे। लोक हजार पांच तहं मारे।

× × ×

मारे लोक हजार अठारा।

× × ×

सषियन संग खेलत फिरत महलनि बाग निवास।

× × ×

सुक देखत मन में हंसे कियो चलन को साज।

भाषा विज्ञान की दृष्टि से भी भाषा में प्रयुक्त कारकों की संयोगात्मक और वियोगात्मक दोनों अवस्थाएं मिलती हैं, जिसके कारण यह सन्देह उत्पन्न होना स्वाभाविक है कि रासो की रचना विभिन्न कालों में विभिन्न व्यक्तियों द्वारा की गयी है।

रासो की भाषा के विविध रूपों की समीक्षा डॉ० उदयनारायण तिवारी ने बहुत ही विस्तार के साथ की है, परन्तु वे भी किसी सुनिश्चित निर्णय पर नहीं पहुँच पाये हैं।

उक्त विवेचन के आधार पर हमारे सम्मुख निम्नलिखित निष्कर्ष आते हैं—

(१) रासो की भाषा सामान्यतः डिंगल है, जिसमें पिंगल (व्रज भाषा) संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, अरबी तथा फारसी के शब्दों का सम्मिश्रण है।

(२) वीर-रस के स्थलों की भाषा डिंगल (राजस्थानी) के अधिक निकट है तथा शृंगार रस के वर्णनों में प्रयुक्त भाषा पिंगल (व्रजभाषा) के अधिक निकट है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



बहुत सम्भव है कि कवि ने विषय-भेद के अनुसार उक्त भाषा-भेद का ध्यान रखा हो।

(३) भाषा की अनेकरूपता के मूल में एक कारण यह भी हो सकता है कि स्वयं चंद ने ग्रन्थ को लिपिवद्ध न किया हो, उसके मुख से सुनने वाले किन्हीं महानुभाव ने उसकी प्रतिलिपि तैयार की हो और फिर बाद में, परवर्ती लिपिकारों ने आवश्यकतानुसार भाषा में हेर-फेर कर दिया हो। मूल प्रति सम्भवतः अभी तक प्रकाश में ही न आई हो।

अभी तो रासो का प्रामाणिक संस्करण ही प्रस्तुत नहीं किया जा सका है। प्रामाणिक संस्करण उपलब्ध होने के पश्चात ही भाषा की अनेकरूपता सम्बन्धी समस्या का कोई निश्चयात्मक हल प्रस्तुत किया जा सकेगा।

---

## १०

# चन्द की बहुज्ञता

**प्रश्न २५—पृथ्वीराज रासो को दृष्टि में रखते हुए चन्दवरदाई की बहुज्ञता पर प्रकाश डालिए।**

**उत्तर—पृथ्वीराज रासो अपने समय का विश्व-इतिहास**

चन्दवरदाई हिन्दी-साहित्य के प्रथम महाकवि हैं। उनके साहित्य का निर्माण-काल हिन्दी-साहित्य के संघर्षमय अभ्युदय काल में हुआ था। राजनीतिक दृष्टि से सम्पूर्ण उत्तरी भारत युद्धों का मैदान बना हुआ था। सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक आदर्शों में भी भारी उथल-पुथल हो रही थी। पृथ्वीराज रासो के अन्तर्गत कवि चन्द ने अपनी परिस्थितियों के प्रति जागरूकता का बहुत ही भली प्रकार परिचय दिया है। वह हमारे सामने एक स्वतन्त्र चेता, युग कवि के रूप में आते हैं। उन्होंने कितना व्यापक ज्ञान और अनुभूति एवं बहिरंग-अन्तरंग प्रकृति-पर्यवेक्षण किया, यह इनके पृथ्वीराज रासो द्वारा सहज ही बोधगम्य हो जाता है। एक विद्वान के शब्दों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



में "पृथ्वीराज रासो चन्दवरदाई के व्यापक और विशाल ज्ञान एवं बुद्धि-कौशल का साक्षी है। उनका काव्य श्रेयमय प्रेम की प्रेरणामय धारा प्रवाहित करता है।" चन्दवरदाई के बहुविधि ज्ञान से कर्नल टाड तो इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने उसे युगीन विश्व-इतिहास ही कह दिया था।

## चन्द चौदह भाषाओं का ज्ञाता और त्रैलोक की घटनाओं का जानन हार

काव्य-शास्त्र के प्रायः सभी विद्वानों ने कवि की बहु-विषयज्ञता पर बल दिया है। काव्य-प्रकाशकार आचार्य मम्मट ने तो स्पष्ट लिखा है कि लोक और शास्त्र का ज्ञाता होना कवि के लिए परम आवश्यक है।

पृथ्वीराज रासो के अध्ययन द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि चन्द का शास्त्र-ज्ञान विशाल था, उसका लोक-व्यवहार-ज्ञान व्यापक था तथा उसको विविध विषयों की अच्छी जानकारी थी। रासो में चन्द ने विषय-वस्तु, भाव और कला के विविध प्रयोग कर अपनी बहुज्ञता का परिचय दिया है। रस, अलंकार, व्याकरण, छन्द-शास्त्र, काव्य-शास्त्र, साहित्य दर्शन, तन्त्र-मन्त्र, इतिहास, पुराण, षट् भाषा सिद्धियों आदि के क्षेत्र में चन्द का ज्ञान बहुत ही व्यापक एवं उच्च कोटि का था। चन्द ने पृथ्वीराज रासो के अन्तर्गत अपने आपको चौदह भाषाओं का ज्ञाता और त्रैलोक में घटने वाली घटनाओं का ज्ञाता घोषित किया है:

"विद्याह चतुरदस चित्त मोहि, बूझै तु कहौ त्रिभुवन होहि।"

निम्नलिखित पंक्तियों में हम चन्दवरदाई के बहुविषयक ज्ञान पर प्रकाश डालते हैं—

## (क) चन्दवरदाई का भाषा-ज्ञान

चन्दवरदाई अनेक भाषाओं का ज्ञाता था। 'पृथ्वीराज रासो' के ६१वें समय में उल्लेख आता है कि वह छः भाषाओं का पंडित था। पंग दरबार का दसौंधी महाराज जयचन्द को, द्वार पर उपस्थित चन्द का परिचय इस प्रकार देता है—

भाषा षट नव रस पढ़त, वर पुच्छै कविराज।
संप्रति पंग नरिंद कै, बर दरबार बिराज॥
भाषा परिछा भाष छह, दस रस दुम्भर भाग।
बित्त कबित्त जु छन्द सौं षग सम पिंगल नाग॥

गजनी-नरेश शाह शहाबुद्दीन को स्वयं कवि चन्द अपने षट्-भाषा-ज्ञान का परिचय देते हुए कहते हैं कि:

षट् भाषा रस्स नव नट्ट नाद।
जानो विवेक विच्चार बाद॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



कवि चन्द ने पृथ्वीराज को भी छः भाषाओं का ज्ञाता कहा है और ऐसा क्यों न हो? चन्द पृथ्वीराज चौहान का अन्तरंग सखा और कवि था। उसके इस कथन के द्वारा यह भी स्पष्ट हो जाता है कि वे छः भाषाएँ कौन सी थीं—

संस्कृत प्राकृत चैव, अपभ्रंश पिशाचिका।
मागधी सूरसेनी च, षट् भाषाश्चैव जायते।

डॉ० विपिन बिहारी त्रिवेदी ने चन्दवरदाई के भाषा-ज्ञान के बारे में ठीक ही लिखा है कि "हम देखते हैं कि संस्कृत, प्राकृत, महाराष्ट्री, अपभ्रंश, पैशाची, मागधी और शौरसेनी, इन भाषाओं का इस समय साहित्य तथा बोलचाल में काफी प्रचार था और बहुत सम्भव है कि 'पृथ्वीराज - रासो' में वर्णित कवि चन्द की षट्-भाषा की जानकारी से इन्हीं भाषाओं की ओर संकेत हो।"

(ख) पिंगल-शास्त्र का ज्ञान

कवि चन्दवरदाई ने रासो में ७२ प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है। इनमें छन्दों की प्राय: समस्त कोटियां आ जाती हैं। वर्ण-गणना-प्रधान, मात्रा-गणना-प्रधान, संयुक्त गणना-प्रधान तथा अनेक अन्य छन्दों का प्रयोग हमें रासो में दिखाई देता है। इनमें कुछ ऐसे भी छन्द हैं जिनका निर्माण स्वयं रासोकार चन्द ने किया है—इनका प्रयोग न तो किन्हीं पूर्ववर्ती कवि ने किया है और न इनका उल्लेख किसी छन्द-शास्त्र में ही मिलता है। डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने चन्द को छप्पयों का राजा कहा है। डॉ० नामवर सिंह के शब्दों में "वस्तुत: हिन्दी में चन्द को राजा कहा जा सकता है। रासो एक साथ ही संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश की छन्द परम्परा के पुनरुज्जीवन तथा हिन्दी के नूतन छन्द संगीत के सूत्रपात की संधि बेला है।" डॉ० विपिन बिहारी त्रिवेदी ने तो इनके छन्द शास्त्र ज्ञान की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है "चन्द ने अपने छन्दों का चुनाव बड़ी दूरदर्शिता से किया है। कथा के मोड़ों को भली प्रकार पहचान कर वर्णन और मात्रा की अद्भुत योजना करने वाला रासो का रचयिता वास्तव में छन्दों का सम्राट है।" छन्दों की भांति अलंकारों का भी चन्द को विस्तृत ज्ञान था।

(ग) साहित्य एवं काव्य-शास्त्र का ज्ञान

पृथ्वीराज रासो आदि से अन्त तक चन्द के साहित्य एवं काव्य-शास्त्र ज्ञान का अनुशीलन है।

चन्द मानव हृदय के सच्चे पारखी थे। 'पृथ्वीराज रासो' में विविध भावों (रति, हास, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा शोक, आश्चर्य, निर्वेद) की व्यंजना उनके रस-विषयक ज्ञान का परिचायक है।

चन्द ने अपने इस महाकाव्य में शब्दालंकारों, अर्थालंकारों और उभयालंकारों का प्रचुर प्रयोग किया है। इतना ही नहीं इस क्षेत्र में उन्होंने नए-नए प्रयोग भी किए हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



छन्द-शास्त्र का ज्ञान उन्हें खूब था ही। प्रायः सभी आलोचकों ने उनको छन्दों का राजा स्वीकार किया है। पृथ्वीराज रासो में उपलब्ध भव्य वस्तु-वर्णन चन्द के लौकिक ज्ञान के अतिरिक्त साहित्य-शास्त्र की व्यापक जानकारी का भी परिचय देता है। नखशिख-वर्णन, षट्ऋतु-वर्णन, वयःसंधि-वर्णन, रूप-वर्णन, स्त्री-भेद वर्णन उनके शास्त्रीय ज्ञान के परिचायक हैं। व्यूह-वर्णन, पनघट वर्णन, युद्ध वर्णन आदि उनके लौकिक ज्ञान का परिचय देते हैं। इसमें कवि की लौकिक सूक्ष्म निरीक्षक प्रतिभा का परिचय मिलता है।

(घ) धर्म, राजनीति, इतिहास, नवरस, व्याकरण आदि विविध विषयों का ज्ञान

चन्द का सामान्य ज्ञान बहुत बढ़ा-चढ़ा हुआ था। वह अनेक विषयों के ज्ञाता थे। उन्होंने अपने इस व्यापक ज्ञान का रासो में उल्लेख किया है। वह पुराण और कुरान के भी ज्ञाता थे :

उक्ति धर्म विशालस्य, राजनीति नवं रसं।
षट भाषा पुरानं च, कुरानं कथितं मया ॥

तथा

रासो बर बुद्धि सिद्धि, सुद्ध सो सव्व प्रमानिय।
राजमीति पाइयै ज्ञान पाइयै सु जानिय ॥
उकति जुगति पाइयै, अरथ घटि बढ़ि उनमानिय।
या समान गुन, आप, देव नर नाग वखानिय ॥

इस कथन को चन्द की गर्वोक्ति न समझें। 'पृथ्वीराज रासो' में चन्द के उक्त विषयक ज्ञान के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। यह ग्रन्थ यथार्थतः साहित्यिक और लौकिक ज्ञान का भण्डार है।

(ङ) शास्त्रार्थ का ज्ञान।

चन्द को विविध विषयों का ज्ञान तो था ही—वह शास्त्रार्थ में भी पारंगत थे। एक बार शहाबुद्दीन गोरी के हिन्दू कवि भट्ट दुर्गा केदार के साथ चन्द का शास्त्रार्थ हुआ। दोनों ही अपने हुनर के अधिकारी विद्वान थे। दोनों ही ने साहित्यिक दांव पेचों और तन्त्र-मन्त्रों का प्रदर्शन किया। इस शास्त्रार्थ में चन्द विजयी हुए। दुर्गा केदार ने चन्द की प्रशंसा की और उनको पुरस्कार देकर विदा किया।

(च) सिद्धियां, तन्त्र-मन्त्र और ज्योतिष का ज्ञान

चन्दवरदाई सिद्ध पुरुष कहे जाते हैं। उनको देवी के दर्शन हुए थे और देवी ने उनको वरदान दिया था; जिसके फलस्वरूप उनको देवी की सिद्धि प्राप्त हुई थी, और वह सिद्धियों तथा तन्त्र-मन्त्र में पूर्णतः निष्णात हो गए थे। डा० हर-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



प्रसाद शास्त्री नें लिखा है कि "चन्द की वरदायी उपाधि का अर्थ है कि उसने एक एक देवी से कवि होने का वरदान प्राप्त किया। ये ज्वाला देवी थी और ज्वाला नामक स्थान में प्रतिष्ठित थीं।"

चन्दवरदाई को देवी की सिद्धि थी, इसका उल्लेख रासो में कई स्थानों पर हुआ है। पृथ्वीराज रासो में कुछ ऐसे भी स्थल आये हैं, जिनमें देवी ने चन्द की सहायता की है। इसके उदाहरण 'कनक कथा-समय' 'दुर्गा भट्ट-केदार समय,' एवं 'कनवज्ज समय' में मिलते हैं। देवी के वाक्य देखिए :

तिनै है मतिराज उकति जौं बहु धरयो।
मोहि चन्द वरदाय, सु अन्तर मति करयो।

चन्द का तन्त्र-मन्त्र का ज्ञान बहुत बढ़ा चढ़ा हुआ था। 'आपेटक वीर वरदान' समय ६ में इस बात का उल्लेख है कि उसने बावन वीरों को वश में करने की दीक्षा एक यती से प्राप्त की थीं।

प्रसन्न चन्द सम जतिय, दिन्न एक मन्त्र इष्ट जिय।
रह अरावत भट्ट प्रगट पंचास वीर जय।
करि साधन लहि साध व्याधि भासत फल धारिय।
गुरु उपदेसह पाइ, सकल आधीन अकारिय।।
धरि कान मन्त्र लीनो कविय, दरसि पाइ अग्गे चलिय।
करवे सु परिष्षा मन्त्र की, रुचि आसन अग्गे बलिय।।

चन्दवरदाई को सर्प बाँधने, दानव एवं दैत्यों का वध करने, भविष्य-वाणी करने, स्वप्न फल बताने, अदृश्य-वर्णन करने, गणों को अधीन करने आदि की सिद्धि प्राप्त थी। भैरों देवी को वशीकरण करने का मन्त्र भी चन्द को इष्ट था और गाडुरी मन्त्र का ज्ञान तथा उसकी सिद्धि उनको प्राप्त थी।

### (छ) युद्ध-कोशल का ज्ञान

'पृथ्वीराज रासो' वीरता प्रधान महाकाव्य है। इसमें आद्यांत युद्ध-वर्णन भरे पड़े हैं। युद्धों का ऐसा व्यापक एवं सजीव वर्णन अन्यत्र दुर्लभ है। इसमें युद्ध-कोशल सम्बन्धी चन्द का ज्ञान देखते ही बनता है। इसका एक विशेष कारण है। चन्द लेखनी के अतिरिक्त तलवार का भी धनी था। वह कविता ही नहीं करता था बल्कि एक वीर योद्धा की भाँति हाथ में तलवार लेकर युद्ध-स्थल में जाकर युद्ध भी करता था। चन्द के युद्ध वर्णन कल्पना की करामात नहीं है—वे आँखों देखे सच्चे वर्णन हैं।

पृथ्वीराज रासो में हमको सैन्य-सज्जा, सेना का प्रयाण, व्यूह—रचना, युद्ध में प्रयुक्त होने वाले अस्त्र—शस्त्र आदि के बड़े ही सजीव वर्णन मिलते हैं। युद्धोत्साह एवं युद्ध—कोशल का एक उदाहरण देखिए :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



कृपान हथ्थ चन्दयं, सुरागदेव बद्दयं
झरंत मीर अग्गयं, किकट्ट तट्ट गंगयं ॥
घटं सुघाव गुम्मयं, परेयु मीर झुम्मयं
लगे तुरंग अग्गयं संपूर लोह जंगयं ॥
फिरयो सुचन्द तव्वायं करन्न राज कव्वयं।
लगे न घाव गातयं, सहाय द्रुग्ग मातयं।
कुंजर पंजर छिद्र करि, फिर वरदायी चन्द ॥
तिन अन्दर जिद्धति भ्रमत, ज्यों कन्दरा मुनिदं।

निष्कर्ष—उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि चन्दवरदाई को काव्य-शास्त्र के व्यापक एवं गम्भीर ज्ञान के अतिरिक्त अन्य अनेक शास्त्रीय एवं लौकिक विषयों का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त था। उनकी काव्य-साधना और असि-साधना साथ-साथ चलती थी। उनको मन्त्र-तन्त्र जनित अनेक सिद्धियां भी प्राप्त थीं।

---

१

# शशिवृत्ता विवाह-खण्ड

## कथावस्तु का विश्लेषण

**प्रश्न १—'शशिवृता विवाह खण्ड' की कथावस्तु संक्षेप में लिखकर कथा-प्रवाह और वस्तुसंविधान की दृष्टि से सम्यक् समीक्षा कीजिए।**

उत्तर—'पृथ्वीराज रासो' रासक शैली में लिखा हुआ एक चरित्र-काव्य है, जिसका चरित्र-नायक पृथ्वीराज चौहान है। पृथ्वीराज चौहान के युद्ध-शौर्य के वृत्तों एवं विवाहों तथा अनेक आनुषांगिक कथा-प्रसंगों से कथानक का गठन हुआ है। 'शशिवृता विवाह-खण्ड' में देवगिरि की राजकुमारी शशिवृता और पृथ्वीराज चौहान के विवाह का वृत्त है। इंछिनी का विवाह-कार्य सम्पन्न होने के पश्चात् शशिवृता-विवाह की घटना घटित होती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पृथ्वीराज एक नट तथा हंस से शशिवृता का गुण-श्रवण कर उस पर अनुरक्त हो जाता है। उधर शशिवृता की शादी पृथ्वीराज के प्रतिद्वन्द्वी कान्य-कुब्जेश्वर जयचंद गाहड़वाल के भतीजे से होनी वाली थी। परन्तु उसके अल्पायु की भविष्य-वाणी सुनकर शशिवृता का मन उधर से उचट गया। इसी समय हंस-दूत ने आकर शशिवृता से पृथ्वीराज का बखान किया। इधर भी अनुराग अंकुरित हुआ। फलतः पृथ्वीराज दल-बल-सहित चढ़ आता है और शिव-पूजन हेतु हरसिद्धि में आई शशिवृता का अपहरण करता है। वीरचन्द की सेना उसे चुनौती देती है। वह उसे हराता हुआ अपने राज्य में लौट आता है।

'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की कथा 'पृथ्वीराज रासो' की एक अवान्तर घटना होने के साथ-साथ प्रवन्ध-संगठन और कथा-विकास की दृष्टि से स्वयं में पूर्ण इस रूप है। में इसे स्वतन्त्र खण्ड-काव्य माना जा सकता है। शुक-शुकी के संवाद से कथा के प्रारम्भ का आयोजन प्रबन्ध-काव्य की दृष्टि से सफल है। हंस-दूत शशिवृत्ता के पास आकर पृथ्वीराज के शौर्य एवं यश का वर्णन करता है। शशिवृता के हृदय में पृथ्वीराज के प्रति अनुराग उत्पन्न हो जाता है। यहीं पर कवि संघर्ष की स्थिति उपस्थित कर देता है। कमधज वीरचन्द से शशिवृत्ता का विवाह निश्चित हो चुका है। वह सेना-सहित शशिवृता को व्याने के लिए प्रस्थान: कर चुका है। हंस-दूत पृथ्वीराज के पास आकर शशिवृता के रूप-लावण्य और उसके प्रति शशिवृता के प्रेम-व्रत का वर्णन करता है। पृथ्वीराज के हृदय में भी शशिवृता के प्रति असीम अनुराग उत्पन्न हो जाता है। प्रेम की इस तुल्यानुराग अवस्था में हंस-दूत वीरचन्द से शशिवृत्ता के विवाह की बात कहता है। हंस-दूत के द्वारा हरसिद्धि में शिव-मन्दिर में संकेत-स्थल निश्चित हो जाता है। पृथ्वीराज सेना-सहित देवगिरि को प्रस्थान कर देता है। कवि यहीं पर वीरचन्द के सेना सहित प्रयाण का उल्लेख कर संघर्ष की स्थिति सामने ला देता है। यहीं कथानक का प्रारम्भिक भाग समाप्त होता है।

मध्य भाग में कथानक का विस्तार है। शशिवृता शिव-पूजन के लिए तैयारी करती है। यहाँ कवि बड़े विस्तार से शशिवृता के शृंगार और नख-शिख-सौन्दर्य का वर्णन करता है। पृथ्वीराज स्वयं तथा अपने सैनिकों-सहित मन्दिर में प्रवेश कर जाता है। वीरचन्द की सेना ने चारों ओर से घेरा डाल रखा है। पृथ्वीराज शशिवृत्ता का अपहरण करता है। पृथ्वीराज और वीरचन्द की सेना में भीषण युद्ध होता है। युद्ध के विस्तार में ही कथानक का मध्य भाग समाप्त होता है। युद्ध-वर्णन में वीर रस की सफल निष्पत्ति हो जाती है। कथानक का अन्तिम भाग नाटकीय और संक्षिप्त है। वीरचन्द पृथ्वीराज को पुनः घेरता है। पृथ्वीराज उसे पराजित कर दिल्ली पहुँच जाता है।

कथानक की समाप्ति पृथ्वीराज के शौर्य-वर्णन और चरित्र प्रकाशन में होती है। छन्द संख्या १६८ में कवि स्पष्ट करता है कि जब-जब राजा पृथ्वीराज तथा सुल्तान गोरी में युद्ध हुआ, तब-तब पृथ्वीराज ने विजय प्राप्त की। इसी प्रकार बलशाली कन्नौजेश्वर जयचन्द से जब-जब पृथ्वीराज का युद्ध हुआ, उनको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विजय श्री प्राप्त हुई। पृथ्वीराज ने 'शशिवृता-विवाह खण्ड' में विपक्षी राजाओं को ध्वस्त कर दिया, देवताओं ने सुन्दर पुष्प-वृष्टि की। पृथ्वीराज शशिवृता को लेकर दिल्ली पहुँच गये। कवि चन्द कहते हैं कि पृथ्वीराज के भयंकर युद्ध को देखकर शत्रु काँप जाते थे। शत्रुओं को अपने वश में करके वे किसी को अदण्डित और किसी को दण्डित छोड़ देते थे—

जै जै जस लद्धौ सुवर। वैर नृपति सुरतान ॥
सुवर वैरवर वड्ढयौ। सुवर जित्त चहुआंन ॥१८८॥
भई जोति चहुआंन। अरिय भंजे अभंग भर ॥
जै जै सूर वषान। देव नंषैं सुमन्न वर ॥
लै शशिवृत्ता राज। अप्प दिल्ली संपत्तो ॥
अरि अवनि कोन मंडै मनहु। पग्ग दाग अरि षंडइय ॥
कवि चंद-दंद दारुन कथहि। इक अडंड कारि डंडइय ॥१८९॥

इस प्रकार कथा-प्रवाह और प्रबन्ध-निर्वाह की दृष्टि से शशिवृता-विवाह-खण्ड एक स्वतन्त्र और सफल खण्ड काव्य है। कथा वस्तु के विश्लेषण निम्न प्रकार हैं:

शुक-शुकी के संवाद से कथानक का प्रारम्भ—'शशिवृता-विवाह-खण्ड' के कथानक का प्रारम्भ शुक-शुकी के संवाद से होता है। देवगिरि की राजकुमारी शशिवृत्ता का सौन्दर्य एक नट द्वारा सुनकर पृथ्वीराज उस पर आसक्त हो, उसकी प्राप्ति की चेष्टा करते हैं और कामातुर हो, उसके विरह में लीन मृगयारत हो जाते हैं, जहाँ वन में एक वाराह का पता बताने वाले वधिक के साथ अपने अनुगामियों सहित नृपकुमारी राजा के वर्णन के बीच में अनायास शुक-शुकी से कह बैठती है कि दिल्लीश्वर के गन्धर्व-विवाह की कहानी सुनाओ। शुकी-शुक से यह जानना चाहती है कि शशिवृता पूर्व जन्म में कौन थी, तथा इस जन्म में पृथ्वीराज से उसका विवाह किस प्रकार हुआ। शुक इस प्रसंग को विस्तार से सुनाता है:

"पुच्छ कथा सुक कहौ। समह ग्रन्धवी सप्रेमहि ॥
स्रवन मंमि संजोगि। राज सम धरी मुनेपहि ॥
इम-चित्तिय मन मझ्झि। (चित्त सख पन्धव ईसह) ॥
(कै) करो पति जुगानि ईस। ईस पुज्जै मु जग्गीसह ॥

शुक-शुकी के पूछने पर कहता है कि देवगिरि (देवास) का नट दिल्ली दरबार में आता है और पृथ्वीराज द्वारा पूछने पर कि वहाँ की कुमारी शशिवृता का विवाह किसके साथ निश्चित हुआ है, बताता है कि उज्जैन के कमधज राजा के यहाँ सगाई ठहरी है। परन्तु राजकुमारी को उक्त वर पसन्द नहीं है। फिर उससे शशिवृता का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



मेनका सदृश रूप सुनकर पृथ्वीराज उस पर अनुरक्त हो गये और नट से उसकी प्राप्ति का उपाय पूछने लगे। नट ने यह कहकर कि हे राजेन्द्र ! मैं कुछ उठा न रखूंगा, उनसे विदा ली। राजा ने शिव से अपना मनोरथ सिद्ध होने का वरदान पाया, तथा वर्षा और शरद् ऋतुएं शशिवृता के विरह की काम-पीड़ा-में बिताईं और देवगिरि जाने का निश्चय किया।

उधर जयचन्द के भ्रातृज वीरचन्द के साथ शशिवृता की सगाई का समाचार पाकर एक गन्धर्व देवगिरि गया और वन में जहाँ शशिवृता अपनी समवयस्काओं के साथ क्रीड़ा कर रही थी, वह हेम-हंस के रूप में एक स्थान पर विश्राम लेने लगा। राजकुमारी बड़े आश्चर्य से उस स्वर्ण-हंस को देखती है और उसे पकड़ लेती है। वह उससे पूछती है कि तुम कौन हो, तुम्हारा स्थान कहाँ है और इस रूप में किस माया से आये हो। गन्धर्व उत्तर देता है कि मैं 'मति प्रधान' नामक गन्धर्व हूं। तुम्हारे हित के लिये ही देवराज इन्द्र ने मुझे यहां भेजा है और हे बाले ! मुझमें तीनों लोकों में जा सकने की शक्ति है—

"हेम हंस तन धरिय। बिपन मध्ये विश्राम लिय ॥
दिष्य तास शशिव्रत। अतिहि अचरिज्ज मानि जिय ॥
बल कर गहिय सु तत्थ। हत्थ लै करि तेहि पुच्छिय ॥
कवन देव तुम थान। कवन माया तन अच्छिय ॥
उच्चरयौ हंस ससिवृत्त सम। मति प्रधान गन्धर्व हम ॥
सुरराज आज आये करन। तीन लोक हम बाल गन ॥"

हंस का परिचय पाकर शशिवृता उससे अपने पूर्व जन्म के विषय में पूछती है। साथ ही यह भी पूछती है कि उसे कौन बर मिलेगा। हंस उसे उत्तर देता हुआ कहता है कि पूर्व जन्म में वह चित्ररेखा नाम की सुन्दरी अप्सरा थी। अपने सौन्दर्याभिमान में उसने इन्द्र से कलह करली, इससे इन्द्र ने उसे मृत्यु-लोक में पुञ्ज के घर जन्म लेने का शाप दिया।

गन्धर्व शशिवृता से यह भी कहता है कि उसके पिता ने उसका विवाह कमधज वीरचन्द्र के साथ निश्चित कर दिया है। परन्तु उसकी आयु एक वर्ष ही शेष है। इन्द्र के द्वारा करुणा करके इसीलिए मुझे भेजा गया है और मैं तुम्हें सचेत करने के लिए ही आया हूं :

"तेम रहै बुर बरष इक्क महि। हय गय अनन्त झुज्झिहै समतहि ॥
तिहि बार करि तुमहि आयौ। करि करुना यह इन्द्र पठायौ ॥"

स्वर्ण-हंस के इस कथन को सुनकर स्वाभाविक ही था कि शशिवृता का हृदय वीरचन्द की ओर से विमुख हो जाता है। वह उससे अपने अनुकूल वर पूछती है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



"तब उच्चरिय बाल सम तेहं । तुम माता सत पिता सनेहं ॥
मुझ्झ सहाय अत्र रि को करिहौ । पानिग्रहन तुम चित अनुहरिहौ ॥"

हंस-दूत तो इस अवसर की प्रतीक्षा में ही था। वह वीरों के अधिपति दिल्लीपति पृथ्वीराज का गुणगान करता है। शशिवृता पृथ्वीराज की प्रशस्ति सुनकर हंस से कहती है कि वह उनको बुला लाये। वह उनकी छः मास तक प्रतीक्षा करेगी और इस अवधि तक उनके न आने पर प्राण त्याग देगी—

"वहाँ तुम पिता कृपा करि जाउ। दिल्लीवै अनुराग उराउ ॥
मांस पटह हौं वृत्तह मंडौं। तथ्थुना आवै तौ तन छंडौं ॥"

इस प्रकार शशिवृता को पृथ्वीराज के अनुराग में पागकर, हंस उसके पास अपनी मुन्दरी को छोड़कर उत्तर दिशा की ओर उड़ चला और योगिनीपुर (दिल्ली) जा पहुँचा। उसके सुवर्णात्मक शरीर पर अनेक नगों की शोभा हो रही थी :

"तब उड़ि चल्यौ देह दिसि उत्तरि। ढिग ससिव्रत रष्षि निज मुन्दरि ॥
जुग्गिनिपुर आयौ दुजराजं । सोव्रन देह नगं नग साजं ॥"

इस समय पृथ्वीराज वन में मृगा में लीन थे। वे उस हंस को आश्चर्य से देखकर पकड़ लेते हैं। हंस उनसे सारी कथा कहता हुआ शशिवृता के सौन्दर्य का वर्णन करता है। उसका शरीर सुमेरु पर्वत के समान सुन्दर है। शैशवावस्था उससे विदा हो रही है और किशोरावस्था उसके शरीर में प्रवेश कर रही है। सूर्य तथा चन्द्र के उदय और अस्त के मध्य में वह इस प्रकार शोभित होती है, मानों शृंगार का सुमेरु हो :

"राका अरु सूरज्ज विच । उदै अस्त दुहु वेर ॥
बर शशिवृता सोभई । मनौं शृंगार सुमेर ॥

फिर हंस राजकुमारी की बाल्यावस्था व्यतीत होकर किशोरावस्था के आगमन पर शिशिर और बसन्त का सावयव आरोप करके उस अज्ञात यौवना का रूप-चित्र प्रस्तुत करता है—

"ससिर अंत आवत बसन्त । वालह सैसव गम ॥
अलिन पंष कोकिल सुकंठ । सजि गुंड मिलत भ्रम ॥
मुर मारुत मुरि चले । मुरे मुरि बैस प्रमानं ॥
तुछ कोंपर सिस फुट्टि । आनि किस्सोर रंगानं ॥
लीनीं न अंमिनक स्याम तन । मधुप मधुर धुनि करिय ॥
षानो न बयन आवन बसत । अंग्याता जीवन अरिय ॥
पत्त पुरातन झरिग । पत्त अंकुरिय उट्ठ तुछ ॥
ज्यौं सैसव उत्तरिय । चढ़िय सैसव किसोर कुछ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शीतल मन्द सुगन्ध । आइ रितिराज अचानं ॥
रोमराइ अग कुच नितंब । तुच्छं सरसानं ॥
बढ्ढै न सीत कटि छीन व्है । लज्ज मांन ढंकति फिरै ॥
ढकै न पत्त ढंकै कहै । बन बसन्त मंत जु करै ॥"

पृथ्वीराज में प्रेम की उत्पत्ति—हंस-दूत द्वारा शशिवृता के रूप और सौन्दर्य का वर्णन सुनकर पृथ्वीराज उसके अनुराग में डूब जाता है उसे रात्रि भर नींद नहीं आती। किंचित झपकी आने पर वह स्वप्न में शशिवृता को ही देखता है। "सवेरा होने पर वह हंस से पुनः शशिवृता का सारा वृत्त सुनने की जिज्ञासा प्रकट करता है। हंस सबसे पहले शशिवृता की उत्पत्ति का वर्णन करता हुआ कहता है कि वह चित्ररेखा अप्सरा का अवतार है। वह कामदेव के साधे हुए वाण के समान है। वह पृथ्वीराज को वर रूप में पाने के लिये नित्य प्रति गौरी का व्रत-पूजन कर रही है। शशिवृता में आपके प्रति पहले से ही श्रवणानुराग उत्पन्न हो चुका है। राजा भान के आनन्दचन्द नामक मन्त्री की बहिन चन्द्रिका का विवाह हिसार में हुआ, किन्तु विवाह के कुछ दिनों बाद उसके पति का स्वर्गवास हो गया। आनन्दचन्द चन्द्रिका को अपने यहाँ ले आता है। चन्द्रिका का प्रवेश कुछ समय के अनन्तर राजा भान के अन्तःपुर में हो जाता है। शशिवृता राजा भान के छोटे भाई पुंज की पुत्री है। इसी चन्द्रिका ने शशिवृता के समक्ष आपके गुणों का वर्णन किया है, जिसे सुनकर वह आपके प्रेम में पग गई और उसने आपको पति रूप में प्राप्त करने की प्रतिज्ञा की। वह अपनी अभिलाषा पूर्ण होने के लिये नित्य प्रति भगवान शिव की पूजा करती है। स्वप्न में पार्वती ने शशिवृता को बतलाया है कि शिवजी के वरदान से पृथ्वीराज उसे पति रूप में प्राप्त होंगे। उसे शशिवृता ने ही भेजा है। शशिवृता के पिता ने उसका विवाह जयचन्द के भाई वीरचन्द से तै कर दिया है। वह सेना लेकर उसे विवाहने आयेगा। यहां हंस शशिवृता के नख-शिख-सौन्दर्य का भी वर्णन करता है :

पीनो रूपीन उरजा, सम शशि बदना, पद्म पत्रापताक्षी ॥
व्यंबोष्ठी तुंग नासा, गज गति गमना, दसना वृत्तनाभी ॥
संस्निग्धा चारु केशी, मृदु प्रथु जघना, वाम मध्या सु वेसी ॥
हिमांगी कंति हेला, वर रुचि दसना, काम बाना कटाक्षी ॥

हंस शशिवृता का नख-शिख के मिस विस्तार से रूप-सौन्दर्य वर्णन कर यह भी कह देता है कि शिव के वरदान के अनुसार वह आपको अवश्य प्राप्त होगी। उसका अवतार आपके लिये ही हुआ है। इस अवसर पर शशिवृता की मंगनी कमधज को दी जाने, उसके पृथ्वीराज पर अनुरक्त होने, शिव-पूजन करने और शिव की आज्ञा से ही स्वयं उन्हें बुलाने की बात हंस पुनः दोहरा देता है।

इस प्रकार हंस-दूत पृथ्वीराज को देवगिरि ले जाने के लिए अथक परिश्रम करता है। हंस-दूत अपने प्रयास में सफल होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**पृथ्वीराज का देवगिरि को प्रयाण**—हंस शशिवृता का प्रेम-सन्देश देकर उड़कर चला जाता है। इधर पृथ्वीराज अपने चुने हुए सामन्तों और सेना को लेकर प्रयाण करता है, उधर कमधज वीरचन्द भी एक लाख दस हजार सेना लेकर देवगिरि पहुँच जाता है। वीरचन्द का आगमन सुनकर शशिवृता आत्महत्या के लिए उद्यत हो जाती है। इसी समय हंस पहुँचकर शशिवृता को पृथ्वीराज के भी पहुँचने की सूचना देता है। इस सूचना से उसके हृदय में प्रेम का सागर हिलोरें लेने लगता है।

**शशिवृता का देव-पूजन के बहाने हरसिद्धि नामक स्थान के लिये प्रस्थान**—हंस से पृथ्वीराज के आगमन की सूचना पाकर शशिवृता माता-पिता से आज्ञा लेकर देव-पूजन के बहाने हरसिद्धि नामक स्थान को चल पड़ती है। वह देवालय चलने से पूर्व अपना भली-भाँति शृंगार करती है। इस अवसर पर कवि विस्तार से शशिवृता के आभूषणों, वस्त्रों एवं उसके शारीरिक सौन्दर्य और चित्त-वृत्ति का वर्णन करता है। वीरचन्द ने देवालय के चारों ओर अपनी सेना लगा रखी है। वीरचन्द को देखकर शशिवृता की छाती धड़कती है और वह पृथ्वीराज का स्मरण करती है। वह देव-पूजन के लिए पालकी से उतर पड़ी।

शशिवृता के पिता को पृथ्वीराज और वीरचन्द दोनों के आ पहुँचने का पता चल जाता है। अतः वे युद्ध की आशंका से अपनी सेना सजाकर हरसिद्धि नामक स्थान पर पहुँच जाते हैं। राजा भान यह जानकर कि राजकुमारी शशिवृता पृथ्वीराज से प्रेम करती है, वह उसके कल्याणार्थ चुपके से अपना दूत पृथ्वीराज के पास भेजता है। इधर पृथ्वीराज अपने चुने हुए सात हजार वीरों को कपाली का वेष धारण कराता है। पृथ्वीराज उनके सहित देवालय में प्रवेश कर जाता है। पृथ्वीराज इस समय रौद्र रूप में है। वह शशिवृता को अपने हाथों से पकड़ लेता है। इस अवसर पर कवि की कल्पना मुखरित हो उठती है और वह कहता है :

"चौहान हथ्थ् वाला गरिय। सो ओपम कवि कन्द कहि।
मानों कि लता कंचन लहरि। मत्त बीर गजराज गहि॥"
"गहि शशिवृत नरिंद। सिढि लंघत ढहि थोरी।
काम लता कल्हरी। प्रेम मारुत झकझोरी॥"

**युद्ध**—वीरचन्द युद्ध प्रारम्भ कर देता है। कवि यहां भीषण युद्ध का वर्णन करता है। राजा पृथ्वीराज कान्ह को युद्ध करने की आज्ञा देते हैं। वह बाज की तरह शत्रु-दल पर टूट पड़ता है। इधर से यादव सेनापति भी कान्ह से आकर भिड़ जाता है। युद्ध की विषम स्थिति में शशिवृता के नेत्रों में शृंगार-रस, वीर सामन्तों में वीर-रस, पृथ्वीराज में रौद्र रस, अप्सराओं में हास्य-रस तथा देवताओं में भयानक रस देखा जाता है :

"भान कुँअरि शशिवृत्ति। नैन शृंगार सुराजै॥
वीर रूप सामंत। रुद्र प्रथिराज विराजै॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



चन्द अद्भ्भुत जानि। भए कातर करुनामय॥
बीभछ अरिन समूह। सांति उप्पनौ-मरन भय॥
उप्पज्यौ हास अपछरि अमर। भौ मयान भावी त्रिगति॥
कूरंभराव पृथिराज वर। लरन लोह चिंते तरनि॥"

चलते हुए भीषण युद्ध में वीरचन्द की सेना का एक नाई आगे आता है और भयंकरता से युद्ध करता है। अन्त में वह वीरगति को प्राप्त होता है। नाई की वीर गति देखकर वीरचन्द भी अपनी मृत्यु निश्चित समझ लेता है। वह भीषण युद्ध प्रारम्भ कर देता है। इतने में रात्रि हो जाती है और दोनों सेनाएं विश्राम के लिए लौट पड़ती हैं। कवि यहां रात्रि का विस्तार से रोचक वर्णन करता है।

रात में पृथ्वीराज के सामन्त पृथ्वीराज से शशिवृता को लेकर दिल्ली चले जाने का अनुरोध करते हैं। परन्तु पृथ्वीराज ऐसा नहीं करता। पुनः भीषण युद्ध प्रारम्भ होता है। शशिवृता युद्ध की भीषणता देखकर कांप उठती है। वह सतृष्ण नेत्रों से पृथ्वीराज की ओर देखती है। पृथ्वीराज शशिवृता का आशय जानकर युद्ध से हट जाता है और दिल्ली की ओर प्रस्थान करता है। वीरचन्द को जब यह पता चलता है, वह आधा कोस आगे जाकर पृथ्वीराज को घेर लेता है। पृथ्वीराज वीर-चन्द को धर दबाता है। वीरचन्द पर विजय प्राप्त कर पृथ्वीराज दिल्ली की ओर प्रस्थान करता है। उसके आगमन पर दिल्ली में तोरणोत्सव मनाया जाता है। शशिवृता सहित पृथ्वीराज के नगर में प्रवेश करने के साथ 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की कथा समाप्त होती है।

प्रश्न २—'शशिवृता-विवाह खण्ड' की नामकरण की सार्थकता पर विचार कीजिए।

उत्तर—सारा कथानक यादवकुमारी शशिवृता के विवाह को लेकर गठित हुआ है। हंस-दूत के द्वारा कुमारी शशिवृता में पृथ्वीराज के प्रति अनुराग जागृत होता है। वह पृथ्वीराज को वर रूप में पाने का व्रत लेती है। शशिवृता का विवाह कमधज वीरचन्द से कर रहा था। शशिवृता से प्रेरित होकर हस दूत पृथ्वीराज के पास आता है। वह शशिवृता के सौन्दर्य का वर्णन कर उसके हृदय में शशिवृता के प्रति अनुराग जागृत करता है। पृथ्वीराज देवगिरि सेना-सहित पहुँचते हैं। वीरचन्द भी सेना-सहित आ पहुँचता है। पृथ्वीराज हरसिद्धि स्थान में शिव मन्दिर से शशिवृता का हरण करते हैं। वीरचन्द की सेना से भीषण युद्ध होता है। पृथ्वीराज विजयी होकर शशिवृता सहित दिल्ली पहुँचते हैं। दिल्ली में स्वागतोत्सव मनाया जाता है।

इस प्रकार सारा कथानक शशिवृता के विवाह पर ही केन्द्रित है। अतः 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' समस्त कथावस्तु को अपने में समेटे हुए है। इस प्रकरण को 'शशिवृता-पृथ्वीराज-प्रेम-वर्णन' अथवा 'पृथ्वीराज-वीरचन्द-युद्ध-वर्णन' नाम भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



दिया जा सकता है। परन्तु ये दोनों नाम सम्पूर्ण वृत्त को अपने में समेट नहीं पाते।

कथानक का प्रारम्भ शशिवृता को लेकर—आलोच्य प्रकरण का प्रारम्भ शशिवृता को लेकर होता है। शुकी अत्यधिक उत्सुकता में भरकर शुक से शशिवृता की उत्पत्ति तथा उसके साथ पृथ्वीराज के विवाह के सम्बन्ध में पूछती है। शुक-शुकी संवाद सारी कथा को अपने में समेट लेता है।

गन्धर्व का हंस-दूत के रूप में प्रयास—गन्धर्व शशिवृता के कल्याण के लिए हंस-दूत का रूप धारण करता है और शशिवृता एवं पृथ्वीराज में तुल्यानुराग की स्थिति ले आता है। उसके सारे प्रयास शशिवृता और पृथ्वीराज के विवाह-प्रयास को लेकर होते हैं।

शशिवृता कथानक पर छाई रहती है—समस्त कथानक में शशिवृता का रूप-सौन्दर्य-वर्णन एवं नख-शिख-वर्णन छाया रहता है। उसके कारण ही भीषण युद्ध की घटना घटित होती है।

शशिवृता के प्रेमांकुर का विकास—सारे कथानक में शशिवृता के प्रेमांकुर का ही विकास हुआ है। शशिवृता के हृदय का प्रेमांकुर पृथ्वीराज के हृदय में पल्लवित होता है। पृथ्वीराज उसके चिन्तन में डूब जाता है और सेना-सहित देवगिरि जाकर उसका हरण करता है। प्रतिनायक वीरचन्द भी शशिवृता की ओर आकृष्ट होता है और पृथ्वीराज से पराजित होता है। शशिवृत्ता के परिजन भी पृथ्वीराज के प्रति उसका अनुराग जानकर सहायक बनते हैं। राजा भान भी अपनी मर्यादा को भूलकर पृथ्वीराज के पास अपना दूत भेज देते हैं।

निष्कर्ष—उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कथानक की समस्त घटनावली शशिवृता को केन्द्र बनाकर ही घटित हुई है। वीरचन्द और पृथ्वीराज का भीषण युद्ध शशिवृता के कारण ही होता है। शशिवृता का सौन्दर्य-वर्णन एवं नखशिख वर्णन पाठकों को अत्यधिक प्रभावित करता है। 'कंचन लहरि' और 'कामलता कल्हरी' पाठक को इतना अधिक प्रभावित है कि पृथ्वीराज भी दृष्टि से ओझल होकर गौण लगने लगते हैं। अतः आलोच्य प्रकरण का नामकरण 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' सर्वथा सार्थक है।

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# २

# काव्य-सौन्दर्य

प्रश्न ३—भाव-सौन्दर्य की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की समीक्षा कीजिए।

अथवा

प्रश्न ७—"पृथ्वीराज के जीवन के मधुर प्रसंगों में विवाहों का स्थान अन्यतम है।" 'शशिवृता-विवाह-प्रकरण को विशेष रूप से दृष्टि में रखते हुए इस कथन की सोदाहरण समीक्षा कीजिए।

उत्तर—चन्द का मन केवल इंछिनी, पद्मावती, शशिवृता और संयोगिता विवाह-वर्णन में ही विशेष रूप से रमा है। इन प्रमुख विवाहों में कवि पुनरावृत्ति के दोष से बचा है। इंछिनी का विवाह पूर्ण रूप से हिन्दू-रीति से कराया गया है। ब्राह्मण लग्न लेकर जाता है और बारात सजकर आती है। अगवानी, तोरण-कलश, द्वाराचार जनवासा, मण्डप, कन्यादान, गठ-बन्धन, भांवरें, गारी, शाखोच्चार, ज्योनार, दान-दहेज, विदा आदि का विस्तार से वर्णन कवि ने किया है। उपर्युक्त शेष तीनों विवाहों में पूर्वानुराग द्वारा दोनों पक्षों को अनुरक्त कर हरण के द्वारा विवाह सम्पन्न कराया गया है। पद्मावती, इंछिनी और शशिवृता तीनों की वयःसंधि का वर्णन अनुपमेय है :

पद्मावती

"कुट्टिल केस सुदेस, पोहप रचियत पिक्कसद।
कमलगंध वयसंध, हसगति चलत मंद-मद।
सेत वस्त्र सोहै सरीर, नष स्वाति बूँद जस।
भमर भंवहि भुल्लहिं, सुभाव मकरंद बास रस॥

× × ×

मनहुँ काम कामिनि रचिय,
रचिय रूप की रास।
पसु पंछी सब मोहिनी।
सुर नर मुनियर पास।"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इंछिनी

"वाले तन्वय मुग्ध मध्यत इमं स्वपनाय वैसंधयं।
मुग्धे मध्यम स्वांगंम वामति इमं मध्यान्ह छाया पगं॥
वालप्पन तन मद्दर जीवन इमं सरसी अब्बगी जल।
अंग मद्धि सुनीरजे मल ससी सुम्भै सुसैंसव इमं।"

शशिवृता

"राका अरु सूरज्ज बिच, उदै अस्त दुहुं वेर।
बर शशिवृता सोभई, मनो शृंगार सुमेर॥"

शशिवृता का रूप और शील अत्यधिक आकर्षक था। यही कारण है कि शशिवृता के सौन्दर्य-वर्णन में कवि का मन बहुत अधिक रमा है। शशिवृता के यौबनागम का वर्णन बसन्त के रूपक से बहुत अधिक सुन्दर बन पड़ा है :

"पत्त पुरातन झरिग पत्त अंकुरिय उट्ठ तुछ।
ज्यौं सैसव उत्तरिय चढ़िय वैसव्व किसोर कुछ॥
शीतल मन्द सुगंध आइ रितिराज अचानं।
रोमराइ संग कुच नितंव तुच्छं सरमानं॥
बढ़्ढ़ै न सीत कटि छीन ह्वै, लज्ज मांन ढंकनि फिरै।
ढंकै न पत्त ढंकै कहै, वन बसंत मंत जु करै॥"

सौन्दर्य-वर्णन में सद्यः स्नाता का वर्णन बहुत अधिक हुआ है। सद्यः स्नाता इंछिनी का निम्न वर्णन सर्वथा मौलिक है। कवि की नई सूझ देखते ही बनती है :

"करि मंजन अंगोछि तन, धूप वासि वहु रंग।
मनो देह जनु नेह फुलि, हेम मीज जनु गंग॥"

इंछिनी के वाह्य रूप-वर्णन में कवि ने सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक रेखाओं को उभार-कर नई ओप भर दी है :

"हलहलै लता कछु मंद वाय। नव वधू केलि भय कंप पाय॥
उपमां उर कहीय तांम। जुब्बन तरंग अंगि-अंगि-कांम॥"

कवि इंछिनी के नख-शिख का वर्णन करने के पश्चात् उसकी मंगल-मूरति का परिचय देता है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



"जरकस घुघर घमंड जानु रवि किन्न कदल ग्रहं।
कुसंभ लड्डू नौसार, रंग छवि छड हंड हर॥
पीत कञ्चुकी संचि पंडि कस अंग उपट्टिय।
कङ्कन कर वर बरत गंग हरदीप उपट्टिय॥

आलोल नैन गति बचन बहु, सषिन सोम मंडिय तनह।
फुल्ली सु सांझ कवि चन्द कहि, मनहु बीजु थरकी घनह॥"

कवि शशिवृता में पूर्वराग के लिये रूप-गुण वर्णन को विस्तार देता है। इंछिनी के विवाह में पूर्वराग का अस्तित्व ही नहीं है। प्रथम साक्षात्कार के समय शशिवृता की दशा का कवि ने वड़ा मनोरम वर्णन किया है :

"यों करंत दुत्तिय बियो, कथा श्रवन सुनि मंत।
जाको तें पतिवृत्त लिय, सो आयो अलि कंत॥
श्रवन-नैन को मेल कै, भय चंचल चल चित्त।
श्रोतानं दिष्ठान अरु, मिलि पुच्छै दोइ मित्त॥

कर्न प्रयंत कटाछ सुरंग बिराजही।
कछु पुच्छन को जाहि पै पुच्छत लाजही॥
नैन-सैन के बात ज स्रवनन सों कहै।
काम किधों प्रथिराज मंदि करि नालहै॥"

यहां श्रवण और नेत्रों के वार्तालाप में कवि ने सर्वथा मौलिक एवं नवीन उद्भावना की है। 'पूच्छत लाजहीं' में भाव-सौन्दर्य भरा हुआ है। गोस्वामी तुलसीदास जहां 'गिरा अनयन नयन बिनु बानी' कहकर चुप रह जाते हैं, वहां चन्द कथन में मधुरता ला देते हैं।

संयोगिता विवाह की विशेषता उसकी मार्मिक प्राकृतिक पृष्ठभूमि में है। शशिवृता के विवाह के आरम्भ में थोड़ा-सा ही उद्दीपक ऋतु-वर्णन है, परन्तु संयोगिता के विवाह में इसका विस्तार बहुत अधिक है। संयोगिता और पृथ्वीराज के साक्षात्कार, गन्धर्व-विवाह तथा संयोगिता हरण-प्रकरण में चन्द की सरस्वती पूर्ण रूप से मुखरित हुई है। शशिवृता और पद्मावती की तरह संयोगिता का साक्षात्कार मन्दिर में नहीं, वल्कि गंगा के किनारे होता है। संयोगिता के जानु कटि, कुच, कुचकोरे, मुख, नासिका, दृग, भौंह, वेणी आदि का सौन्दर्य पृथ्वीराज को आश्चर्य चकित कर देता है :

"कुंजर उप्पर सिंघ सिंघ उप्पर दो पव्वय।
पव्वय उप्पर भृंग भृंग उप्पर ससि सुब्भय॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



ससि उप्पर इक कीर कीर उप्पर मृग दिट्ठो।
मृग उप्पर कोवंड संघ कन्द्रप्प वयट्ठो॥
अहि मयूर महि उप्परह हीर सरस हेमन जर्‌यो।
सुर भुवन छंडि कविचन्द कहि तिहि धोपै राजन परयो॥"

प्रथम दर्शन में ही दोनों मुग्ध हो जाते हैं। शशिवृता में प्रथम स्पर्श का वर्णन प्रथम दर्शन से भी अधिक मार्मिक है। पृथ्वीराज जन-समूह के बीच शशिवृता को पकड़कर अपनी ओर खींचता है। चन्द के मुख से अनुपम उपमा निकल पड़ती है। पूरा छन्द स्नेह उमंगित बाहु की तरह लहरा उठता है :

"मानो कि लता कंचन लहरि।
मत्त बीर गजराज गहि॥"

इस अवसर पर लज्जाशीला शशिवृता की भाव-शवलता भावानुभूति का सागर लहरा देती है :

"गहत बाल पिय पानि सु गुरुजन संभरे।
लोचन मोचि सुरंग सु अंसु वहे ढरे॥
अपमंगल जिय जानि सु नैनन मुख बही।
मनो षंजन मुष मुत्ति मरक्कत नंषही॥"

× × ×

"कोमलता कल्हरी प्रेम मारुत झकझोरी॥"

इसके पश्चात् भीषण युद्ध की स्थिति आती है। पृथ्वीराज शशिवृता की मधु-यामिनी व्यतीत होती है :

"कुमुद उग्घरि मूंदिय सू वंधि सत पत्र प्रकारय।
चकिय चक्क विच्छरहि, चकि ससिवृत्त निहारय॥
जुवती जन चढ़ि काम जांह कोतर तर पंषी।
आवृत वृत्त सुंदरिय काम बढ्ढिय वर अंपी॥
नव निद्ध हंसह मिलै, विमल चन्द उग्यो सु नभ।
सामंत-सूर त्रप रष्षिकैं करहि बीर वीश्राम सभ॥"

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' धन-संपदा से भर-पूर्ण है। वस्तु-वर्णन शशिवृता के अनुराग, प्रेम व्रत, सौन्दर्य एवं नख-शिख-वर्णन एवं भीषण युद्ध में भी प्रेम की स्निग्ध धारा से बड़ा मनोरम एवं आकर्षक बन पड़ा है। संक्षेप में 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' भावानुभूति एक अथाह सागर है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**प्रश्न ५ – काव्य सौन्दर्य की दृष्टि से शशिवृता-विवाह-खण्ड की समीक्षा कीजिए :**

**अथवा**

**प्रश्न ६—भावपक्ष और कलापक्ष की सफलता की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की सोदाहरण समीक्षा कीजिए ।**

उत्तर—'शशिवृता-विवाह खण्ड' पृथ्वीराज और संयोगिता के विवाह का प्रकरण है। यादवकुमारी शशिवृता हंस-दूत से पृथ्वीराज का गुण-श्रवण कर पृथ्वीराज पर मुग्ध होती है। वह पृथ्वीराज से विवाह करने का संकल्प लेती है। हंस-दूत पृथ्वीराज के पास जाकर शशिवृता के रूप-सौन्दर्य का वर्णन करता है। पृथ्वीराज के हृदय में भी शशिवृता के प्रति अनुराग जागृत होता है। इस प्रकार कवि तुल्यानुराग की स्थिति लाकर हरण की पृष्ठभूमि तैयार कर देता है। पृथ्वीराज सेना-सहित देवगिरि जाते हैं, शशिवृता का हरण करते हैं, वीरचन्द से भीषण युद्ध होता है। पृथ्वीराज विजयी होकर शशिवृता सहित दिल्ली आ जाते हैं। इस प्रकरण की यह कथा सानुवन्ध प्रबन्ध में चलती है। कथानक का विकास एक स्वतन्त्र एवं सफल खण्डकाव्य के रूप में होता है। इस प्रकार 'शशिवृता विवाह खण्ड' 'पृथ्वीराज रासो' के वृहद् कथानक की एक अवान्तर घटना होते हुए भी स्वतन्त्र और सफल खण्डकाव्य के रूप में सामने आता है। कथानक की नायिका शशिवृता है। सारा कथानक शशिवृता के विवाह की घटना को ही केन्द्र बनाकर गठित हुआ है। अतः नामकरण की दृष्टि से आलोच्य प्रकरण बहुत सफल है। वस्तु-वर्णन एवं रसयोजना और मार्मिक स्थलों के वर्णन की दृष्टि से 'शशिवृता' प्रकारण जहां अनुभूति पूर्ण है, वहां कला शिल्प की दृष्टि से भी पुष्ट है। भावपक्ष एवं कलापक्ष की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' का विवेचन निम्न प्रकार किया जा सकता है :

## भाव-पक्ष

'शशिवृता विवाह-खण्ड' में आदि से लेकर अन्त तक अनुभूति का प्रसार है। पूर्वराग, तुल्यानुराग की स्थिति, हंस-दूत का संघटन-प्रयास, नायिका के रूप सौन्दर्य की चर्चा एवं नखशिख-वर्णन, नायिका की आतुरता, प्रथम मिलन, शशिवृता की उपस्थिति में भीषण-युद्ध आदि सभी कुछ अनुभूतिमय है। इतिवृत्तात्मकता की दृष्टि से कथानक नाम मात्र का ही है। कवि ने भावपूर्ण स्थितियों और मार्मिक स्थलों के वर्णन में अपनी चित्तवृत्ति को विशेष रूप से रमाया है और इसमें उसको सफलता भी पूर्ण रूप से मिली है। भावपक्ष के अन्तर्गत रस-योजना का प्रमुख स्थान है। विभिन्न रसों की योजना निम्न उदाहरण में दृष्टव्य है :

"भाजं कुंअरि शशिवृत्ति । नैन श्रृंगार सुराजै ॥
वीर रूप सामंत । रुद्र प्रथिराज बिराजै ॥
चंद अद्‌भुत जानि । भए कातर करुनामय ॥
बीभछ अरिन समूह । सांत उप्पन्नो-मरनभय ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



उप्पजयौ हास अपछरि अमर । भौ भयान भावी विगति ।।
कूरंभराव प्रथिराज बर । लरन लोह चिते तरनि ।।"

उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में नव रस-योजना है ।

आलोच्य प्रकरण वीर-रस प्रधान है । शृंगार-रस सहायक बनकर आया है और वीर-रस के समान्तर चला है । इसमें वीरचन्द और पृथ्वीराज के बीच घटित भीषण युद्ध का कारण शशिवृता और पृथ्वीराज का परस्पर तुल्यानुराग और पृथ्वीराज द्वारा शशिवृता का हरण है । शशिवृता का प्रेम और युद्ध में पृथ्वीराज के साथ सहस्थिति शृंगार रस की पोषक है और वीर-रस को उद्दीप्त करती है। संयोग-शृंगार का सम्यक् विकास गुण-श्रवण के पूर्वराग से होता है । जो तुल्यानुराग की स्थिति में मंजीठ-रंग को प्राप्त करता है । शशिवृता का रूप-सौन्दर्य एवं नख-शिख वर्णन शृङ्गार रस का उद्दीपन है। शशिवृता की अभिलाषाओं और प्रथम मिलन के अवसर का वर्णन शृङ्गार-रस के अन्तर्गत बड़ा मार्मिक बन पड़ा है । शृंगार-रस का शास्त्रीय रूप निम्न प्रकार है :

१. शशिवृता और पृथ्वीराज परस्पर में आश्रय और आलम्बन हैं ।

२. शशिवृता के कथन और कार्य-कलाप अनुभाव के अन्तर्गत हैं । चपलता, उद्वेग, मोह, स्मृति, जडता आदि संचारी भाव हैं । अनुभावों और संचारीभावों की सुन्दर योजना हुई है ।

वीर-रस के आश्रय पृथ्वीराज और पृथ्वीराज के सूर-सामन्त हैं । विपक्षी पक्ष आलम्बन है। पृथ्वीराज में ही रौद्र रस की स्थिति है। युद्ध के प्रसंग में अद्भुत, वीभत्स, भयानक, हास्य, करुण, शान्त रस की व्यंजना हुई है । परन्तु ये सभी रस वीर-रस को पुष्ट करते हैं । अतः वीर अंगी-रस के साथ में संयोग शृंगार सहायक रस के रूप में तथा अन्य रस अंग के रूप में उपस्थित हुए हैं । आगे प्रत्येक रस की स्थिति पर पृथक्-पृथक विचार करेंगे :

आलोच्य प्रकरण में रौद्र रस की स्वतन्त्र सत्ता है । फिर भी पृथ्वीराज और उसके सामन्तों में रौद्र-रस की व्यंजना हुई है —"रुद्र प्रथिराज विराजै ।" वीभत्स रस की व्यंजना भी वीर-रस के अन्तर्गत ही हुई है । पृथ्वी का रुण्ड-मुण्डों से आच्छादित होना, काली का खप्पर लेकर नृत्य करना, वैताल, पिशाच और पिशाचिनियों का नृत्य करते हुए रक्त-पान करना आदि वर्णनों में वीभत्स रस की व्यंजना हुई है । भयानक रस की व्यंजना दो अवसरों पर होती है। प्रथम, पृथ्वीराज जब शशिवृता का हरण करता है, उस समय वीरचन्द में भय का संचार होता है । दूसरी रात्रि में युद्ध की सज्जा देखकर देवताओं में भय का संचार होता है । कान्ह को युद्ध करने का आदेश देते समय पृथ्वीराज की स्थिति में रौद्र-रस की व्यंजना हो जाती है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## वीर-रस

'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में वीर-रस प्रधान है, इसमें वीर-रस का सम्यक् परिपाक होता है। वीर-रस के आश्रय पृथ्वीराज आदर्श वीर और शूर-शिरोमणि हैं। विपक्षी जयचन्द का बन्धु वीरचन्द भी कम वीर नहीं है। दोनों सेनाओं के महासमर में वीर-रस मूर्तिमान हो उठा है। वीर-रस के अनुभावों की सफल व्यंजना हुई है। 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में युद्ध-वीर की प्रधानता है। कवि ने अन्त में 'इक अडंड कीरि डंडइय' कहकर पृथ्वीराज की दया-वीरता का भी परिचय दिया है।

पृथ्वीराज चुनी हुई सेना के साथ देवगिरि को प्रस्थान करने की तैयारी करते हैं। छन्द संख्या ७२ से ८१ तक सामन्तों और उनके घोड़ों का वर्णन चलता है। यहीं पर ८३ वें छंद में कवि प्रतिपक्षी वीरचन्द की विशाल सेना को सामने ला देता है :

"एक लष्ष दस अग्ग। सेन सज्जै कमधज्ज ॥
बीय सहस वारुन्न। सत्त हजार फवज्जं ॥
अद्ध लष्षं पैदल्ल। अद्ध साइक्क बहंतं ॥
सजि समूह चतुरंग। दिसा पच्छिम परजंतं ॥"

शशिवृता का हरण कर चलते ही दोनों दलों में भीषण युद्ध प्रारम्भ हो जाता है। योद्धाओं की गर्जना, अस्त्र-शस्त्रों का टकराव, योद्धाओं का युद्धोत्साह आदि में वीर-रस की सम्पूर्ण सामग्री सामने आ जाती है।

"मिले हथ्थ न सथ्थंस बथ्थं धारे। मनो वारुनी मत्त गज दंत न्यारे ॥
उड़ै लोह पंती परैं श्रोन रुंदं। मनौ रुद्धि धारा बरष्षंत बुंदं ॥
घुले घाय घायं अघायं अघायं। झुमै झार झारं झनक्कै झकायं ॥

× × ×

बज्जै वर कोहं लग्गै लोहं छक्कै छोहं तजि मोहं ॥
सूरा तन सोहं स्वामिन दोहं मत्तौ ढौहं रिन डोहं ॥
बर बांन बिछुट्टै बगतर फुट्टै पारन पुट्टै,अहुट्टै धर तुट्टै ॥
तरवारनि तुट्टै धम्मर लुट्टैं अंग अहुट्टै गहि झुट्टै ॥

सामन्त कान्ह तथा वीरचन्द के नाई द्वारा किये गये युद्ध में स्थायी भाव उत्साह सर्वत्र मिलता है। अतः आलोच्य प्रकरण में वीर-रस की सफल निष्पत्ति हुई है। शृंगार-रस वीर रस का उद्दीपक रहा है। शृंगार-रस की आलम्बन शशिवृता ही युद्ध का कारण है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## शृंगार-रस

'शशिवृता प्रकरण' में संयोग शृंगार की निर्मल अबाध धारा प्रवाहित हुई है। प्रेम तुल्यानुराग की अवस्था को प्राप्त कर चरमोत्कर्ष पर पहुंचता है। शृंगार के आलम्बन और उद्दीपन परस्पर में शशिवृता और पृथ्वीराज हैं। शशिवृता जहाँ चित्ररेखा अप्सरा का अवतार है, वहां पृथ्वीराज भी कामदेव के समान सुन्दर हैं। पृथ्वीराज के सौन्दर्य का वर्णन कवि ने निम्न प्रकार किया है :

"वय किसोर प्रथिराज। रम्य हा रम्य प्रकारं ॥
सेत पष्य विय चंद। कला उद्दित तन मारं ॥
× × ×
श्रवनन सुन नैंना कही। तुम जानौ चहुआंन ॥
काम नृपति कौ रूप धरि। आवत है इन थांन ॥"

पृथ्वीराज का यह सौन्दर्य और शौर्य ही शशिवृता के हृदय में श्रोतानुराग उत्पन्न कर देता है। हंस-दूत शशिवृता के सौन्दर्य का जो वर्णन करता है, उसे सुनकर पृथ्वीराज भी उसके प्रेम में डूब जाता है। शशिवृता वय-संधि प्राप्त मुग्धा नायिका है। उसका सौन्दर्य अप्रतिम है। कवि उसके नख-शिख सौन्दर्य का वर्णन करता हुआ नहीं थकता :

"राका अरु सूरज्ज बिच। उदै अस्त दुहु वेर ॥
वर शशिवृता सोभई। मनो शृंगार सुमेर ॥"

शशिवृता का प्रेम आदर्श है। वह पृथ्वीराज को पति रूप में पाने का संकल्प करती है और गौरी का व्रत-पूजन करती है।

पूर्वराग—शशिवृता में हंस-दूत के द्वारा गुण-श्रवण के आधार पर पूर्वराग का आरम्भ है। शशिवृता का पूर्वराग गम्भीरता लिये हुए है। न तो वह करवटें बदलती है और न आहें भरकर बावली ही बन जाती है; अपितु पृथ्वीराज को वर-रूप में पाने का दृढ़ संकल्प लेकर व्रत पूजन की साधना प्रारम्भ करती है। वह संकल्प करती हुई हंस-दूत से कहती है कि यदि छह मास तक प्रियतम पृथ्वीराज न आये, तो वह अपना शरीर त्याग देगी :

"मांस षटह हों वृत्तह मंडो। तथ्यु ना आवै तौ तन छंडो ॥"

पूर्वराग जनित प्रेम में कवि ने पृथ्वीराज में आकुलता और विरह-विकलता अधिक दिखलाई है। वे शशिवृता के स्मृति में सारी रात्रि जगकर व्यतीत करते हैं। स्वप्न में शशिवृता आकर मानिनी बन जाती है और वे उसकी चाटुकारी करते हैं :

"निशि नरिंद चहुँआंन। चित्त मनोरत्थ विचारै ॥
भई दीह सब निशा। निशा सयनंतर धारै ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सयनंतर ससिवृत । चाटु चटु बैन उचारै ॥
चारु चारु वर बयन । मान मानिनि संभारै ॥"

तुल्यानुराग के चरमोत्कर्ष की स्थिति 'शशिवृता-प्रकरण' में संयोग-शृंगार की विशेषता है । यहाँ "एक चाहति है एक चाहत ना जरि जाइ सु प्रीति की रीति इकंगी" की अस्वाभाविकता नहीं है ।

प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर तुल्यानुराग की प्रेमधारा शतधा होकर प्रवाहित हो उठती है । पृथ्वीराज को देखते ही शशिवृता के नेत्र और कानों का द्वन्द दृष्टव्य है और प्रगाढ़ प्रेम का परिचायक है :

"यों करंत दुत्ति वियौ । कथा श्रवन सुनि मंत ॥
जाकौ ते पतिवृत्त लिय । सो आयो अलि कंत ॥
श्रवन नयन को मेल कै । भय चंचल मन चित्त ॥
श्रोतानं दिष्टानं अरु । मिलि पुच्छैं दोइ मित्त ॥
कर्न प्रयंत कटाछ सुरंग बिराजहीं ।
कछु पुच्छन दों जाहि पै पुच्छत लाजहीं ॥
नैन सैंन में बात जु श्रवनन सों कहैं ।
काम किधों प्रिथराज भेद करि ना लहै ॥
नैन श्रवन्नन पूछई । तुम जानो वहु मंत ॥
मेरे जीय अंदेश है । कही न भै पिय जंत"

शशिवृता और पृथ्वीराज के प्रथम दृष्टि-मिलन और पृथ्वीराज द्वारा शशिवृता के हरण का बड़ा ही मार्मिक और स्निग्ध चित्र सामने आ जाता है, ऐसा लगता है 'मानों कि लता कंचन लहिर' को 'मत्त वीर गजराज' ने पकड़ लिया हो । शशिवृता 'काम लता कल्हरी है' जो 'प्रेम—मारुत' द्वारा झकझोर डाली गई है । संयोग शृंगार के इतने स्वाभाविक, स्निग्ध, रसमय और मर्यादित चित्र अन्यत्र दुलर्भ है ।'हावों' और अनुभवों की शृंखला-सी बँध जाती है । सारा प्रसंग चलचित्र की चलती हुई रील के समान सामने आ जाता है :

"दिट्ठ दिट्ठ लग्गी समूह । उतकंठ सु भग्गिय ॥
निष लज्जनिय नयन । मयन माधा रस पग्गिय ॥
छल बल कल चहुआंन । बाल कुंअरप्पन भंजे ॥
दोष त्रीय मिट्टयौ । उभय भरी मन रंजे ॥
चोहान हाथ बाला गहिय । सो ओपम कवि चंद कहि ॥
मानों कि लता कंचन लहिर । मत्त वीर गजराज गहि ॥

× × ×

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



गहि शशिवृत्त नरिंद । सिढि लांघत ढहि थोरी ।।
काम लता कल्हरी । पेम मारुत झकझोरी ।।

संयोग शृंगार के अन्तर्गत नायिका का सौन्दर्य-वर्णन, वयः संधि-वर्णन, शृंगार वर्णन, स्नान-वस्त्र, भूषण-वर्णन और नख-शिख वर्णन आता है। शशिवृता वयः संधि की प्राप्त मुग्धा नायिका है। वह चित्ररेखा अप्सरा का अवतार है और अनुपम सुन्दरी है। उसकी वयः संधि के वर्णन में कवि का मन रम जाता है:

"वय संधिरु बाल प्रमान व्रनं । कहि त्रोटक छंद प्रमान सुनं ।।
वय स्यामिऽरु शैशव अंकुरयं । अह अंत निसागम संकुरयं ।।
जल सैसव मुद्ध समान भयं । रबि बाल बह्रिक्रम अत्थमियं ।।
वर सैसव जोबन संधि अती । सु मिलें जनु पित्तह बाल जती ।।
जु रही लगि सैसव जुब्बनता । सु मनों ससिरं तन राज हिता ।।
जु चलै मुरि मारुत झंकुरिता । सु मनों मुरवैस मुरी मुरिता ।।
कलकंठ सुकंठय पंष अली । गुन जंपि कवित्त सु चंद वली ।।

शशिवृता का उभरता हुआ योवन वंसतागम के रूप में उपस्थित है। निम्न उदाहरण में योवनगम का कितना मादक और स्निग्ध शब्द-चित्र अंकित हो गया है :

"पत्त पुरातन झरिग । पत्त अंकुरिय उट्ठ तुछ ।।
ज्यों सैसव उत्तरिय । चढ़िय वैसव किसोर कुछ ।।
शीतल मन्द सुगंध । आइ रितिराज अचाननं ।।
रोमराइ अंग कुच नितंब । तुच्छं सरासानं ।।
बढ़ढ़ै न सीत कटि छीन ह्वै । लज्ज मांन ढंकति फिरै ।।
ढंकै न पत्तं ढंकै कहै । बन बसंत मंत जु करै ।।"

नख-शिख वर्णन

शशिवृता गौरी पूजन को जाने के लिए स्नान करके शृंगार करती है। कवि यहाँ बड़े विस्तार से उसके शृङ्गार का वर्णन करता है। उसकी छूटी हुई केश-राशि ऐसी लगती है मानों स्वर्ण-खंभ से उतरती हुई सर्पिणियाँ दिखाई दे रही हों :

"बाला बेनी छोरि करि । छुट्टै चिहुर सुभाइ ।।
कनक थंभ तें उत्तरी । उरग सुता दरसाइ ।।"

शशिवृता मंजन करके सुन्दर वस्त्रों और आभूषणों से अपने शरीर को सजाती है। वह घनसार की सुगंध से स्नान करती है, नेत्रों में अंजन लगाती है। उसके सौन्दर्य का वर्णन करती हुई कवि की सरस्वती मुखर हो उठती है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



"मय मंजन मंडित बाल तनं । घनसार सुगंध सुबोरि घनं ॥
नव जोइन अंजित मंजि चली । कि मनो कस कुंदन षंभ हली ॥
सुभ वस्त्र सुअंग सुरंगनसी । सुहली मनु साष मदन्न कसी ॥
जरि जेहरि पाइ जराइ जरी । सजि भूषन नभ्भ मनो उतरी ॥
सिगरी लट यों बिगरी बिगसें । ससि के मुख तें अहि से निकसें ॥

यहां कवि ने शशिवृता का नैन-कमान सजाये हुये हाव-भाव एवं कटाक्ष करते हुये दिखाया है । यहाँ अनुभवों की भी सुन्दर योजना कवि ने की है । शशिवृता आतुरता में कहीं पहने जाने वाले आभूषण कहीं पहन लेती है । प्रियतम के प्रति प्रेम उसके हृदय से छलका पड़ता है :

"करि मज्जन सज्जन सुक्रम । आभूषणन न समान ॥
केह काके कोहि दिसि । सज ससि नैन कमान ॥
सजि ससि नैन कमान । केश बागुरि बिस्तारिय ॥
हाव-भाव कट्टाच्छ । ढुंकि षुट्टि दिय भारिय ॥
बैठि नैन नृप मूल । पेम देपन गह सज्जन ॥
मन मृग पिय कृत लाज । ताकि वंधन किय मज्जन ॥"

इसके पश्चात् कवि छन्द संख्या १०४ से लेकर छन्द संख्या १२१ तक विस्तार से नख-शिख वर्णन करता है । यह नख-शिख-वर्णन इतना सुन्दर और सजीव है कि समता नहीं रखता :

"सुगंध केस पासयं । सुलग्गि मुत्त छंडियं ॥
मनो सनाग पुप्फ जानि । तीन पंथि मंडियं ॥
दुती कि नाग चंदनं । चढ़ंत दुद्ध पंभियं ॥
कनवक्क काम कुंडिलं । हलंत तेज उम्भरे ॥

शशिवृत्ता शृङ्गार करके चंडोल पर चढ़कर अम्बिका पूजन के लिए चलती है । इस अवसर पर कवि पुनः उसके नख-शिख-सौन्दर्य का वर्णन करता है । शशिवृत्ता सखियों से घिरी हुई विहंग-शावक सो जा रही है । उसके कपोलों से पति-विषयक रति टपक, रही है । कालिन्दी के समान श्याम वर्ण के केशों के बीच में उसकी मांग कामदेव को भी लुभाने वाली है । उसके कुच, रोमराजि, पिंडलियाँ, नितम्ब, नख, एडियाँ आदि अंग प्रत्यंग अनुपम सौन्दर्य से युक्त हैं :

"चली अली घनं वनं । सुमंत सथ्थ संघनं ॥
विहग भंगयो पुरं । चलंत सोम नोपरं ॥
अलीन जुथ्थ आवरं । मनो विहंग सावरं ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



चुवंत पत्त रत्त जा। उवंत जानि अंबुजा ॥
कलिद सोम केसये। अनंग अंग लोभयं ॥
उठत कुंभ कुञ्चयं। उपंम कब्बि सुच्चयं ॥
मनौं जरंत बाल की। धरी सु आनि लालकी ॥
सुभंत रोम राजयं। प्रपील पंति छाजयं ॥
मनोज कूप नाभिका। चलंत लोभ आलिका ॥
सुरंभ सोभ पिंडुरी। घरादि काम षिंडुरी ॥
नितंव तुंग सोभए। अनंग अंग लोभए ॥
मनौ कि रथ्थ रंभके। सुरम्म चक्क संभ के ॥
नषादि आदि अच्छनं। मनौं कि इन्द्र द्रप्पनं ॥
ढारंत रत्त एडियं। उपम्म कब्बि टेरियं ॥
मनौं कि रत्त रत्तजा। चिकंत पत्त अंबुजा ॥"

इस प्रकार कवि ने कई स्थलों पर शशिवृता के नख-शिख-सौन्दर्य का वर्णन किया है। उसकी वृत्ति इस वर्णन में विशेष रूप से रमी है।

**वस्तु-वर्णन**

आलोच्य प्रकरण में वस्तु-वर्णन बड़ा मनोरम और रसमय है। कहीं शुष्कता नहीं आने पाई है। शशिवृता का नख-शिख-सौन्दर्य समस्त प्रकरण को रसमय बना देता है। कवि ने मार्मिक स्थलों का वर्णन बड़ी रसमयता से किया है। प्रमुख मार्मिक स्थल निम्नलिखित हैं :

१. शशिवृता का सौन्दर्य एवं वयः सन्धि वर्णन।
२. शशिवृता का नख-शिख-वर्णन।
३. पृथ्वीराज द्वारा शशिवृता के हरण का अवसर।
४. युद्ध-वर्णन।

सामन्तों और उनके घोड़ों का वर्णन यद्यपि इतिवृत्तात्मक है, परन्तु इसमें भी रसमयता है।

आलोच्य प्रकरण में प्रकृति-चित्रण को विशेष स्थान नहीं मिला। शशिवृता का आलम्बन लेकर प्रकृति-वर्णन उद्दीपन रूप में हुआ है।

कलापक्ष—'शशिवृता-प्रकरण' के भावपक्ष की तरह उसका कलापक्ष भी पुष्ट है। कलापक्ष भावों की अभिव्यक्ति में सहायक बनकर उपस्थित है। छन्द-योजना, अलंकार-योजना, भाषा-शौष्ठव की दृष्टि से आलोच्य-प्रकरण सफल है। आगे अभिव्यक्ति-कौशल-प्रकरण में प्रत्येक पर पृथक से विचार करेंगे।

प्रश्न ७—वीर-रस-वर्णन की दृष्टि से 'शशिवृता विवाह-खण्ड' की समीक्षा कीजिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



उत्तर—प्रश्न संख्या ५-६ के उत्तर में 'वीर-रस' शीर्षक को पढ़िए।

प्रश्न ८—शृंगार-वर्णन और प्रेम-निरूपण की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—प्रश्न संख्या ५-६ के उत्तर में 'शृंगार-रस' शीर्षक को पढ़िए।

प्रश्न ९—वस्तु-वर्णन की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' पर विचार कीजिए।

उत्तर—प्रश्न संख्या ५-६ के उत्तर में 'युद्ध-वर्णन', 'नख-शिख-वर्णन' शीर्षकों को पढ़िए।

———

३

## अभिव्यक्ति-कौशल

प्रश्न १०—'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में छन्द-योजना की सार्थकता की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—छन्द-योजना की दृष्टि से चन्द का काव्य बहुत धनी है। उन्होंने 'पृथ्वीराज रासो' में संस्कृत से लेकर अपभ्रंश तक चलने वाली परम्परा के अनेकानेक छन्दों का प्रयोग किया है और साथ ही नये छन्दों की भी रचना की है। 'रासो' में सभी प्रकार के ७२ छन्द प्रयुक्त हुए हैं। छन्द की छन्द- योजना में कितनी अधिक सफलता मिली। इसके लिए निम्न विद्वानों के कथन द्रष्टव्य है :

स्वर्गीय डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी

"......इस काव्य के अधिकांश छन्द प्राकृत और अपभ्रंश युग के हैं, जिनमें से कुछ का प्रयोग परवर्ती हिन्दी-साहित्य में अपेक्षाकृत कम देखा जाता है।"

× × ×

"विविध आकार-प्रकार वाले रासो के प्रस्तावों में विशद छन्द-योजना और उनका स्वच्छन्द दीर्घ विस्तार सरलता का सहायक है, बाधक नहीं। केशव की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



'रामचन्द्रिका' और सूदन के 'सुजंन चरित्र' के सदृश रासो में भी छन्दों का मेल है, परन्तु उनकी भांति उसके छन्द कथा-प्रवाह में अवरोध नहीं डालते। वरन् अवसर के अनुकूल ओज, माधुर्य और प्रसाद गुणों की सफल सृष्टि करते हैं।..... अस्तु हम साहस के साथ कह सकते हैं कि कवि ने अपने छन्दों का चुनाव बड़ी दूरदर्शिता से किया है। कथा के मोड़ों को भली प्रकार पहचान कर वर्ण और मात्रा की अद्भुत-योजना करने वाला रासो का रचयिता वास्तव में छन्दों का सम्राट था।"

'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की छन्द-योजना अनुभूति एवं रस की व्यंजना में अत्यन्त सहायक है। भावों एवं रसानुकूल छन्द भावोत्कर्ष में सहायक है। छन्द-योजना का कौशल चमत्कार-पूर्ण है। इस सम्बन्ध में डा० नामवरसिंह का निम्न कथन दृष्टव्य है :

"वस्तुतः हिन्दी में चन्द को छन्दों का राजा भी कहा जा सकता है। भाव भंगियों के साथ-साथ दनादन भाषा नये-नये छन्दों की गति धारण करती चलती है और विशेषता यह है कि बल खाती हुई नदी में बहते हुए चित्र को कोई मोड़ नहीं खटकता। छन्द- परिवर्तन के प्रवाह में सहज आत्म विस्मृत का ऐसा सुख अन्यत्र नहीं मिलता है।"

**शशिवृता विवाह खण्ड के प्रमुख छन्द**

'शशिवृता-विवाह- खण्ड' में चन्द ने कई छन्दों का प्रयोग किया है। छन्द-परिवर्तन के साथ कथा मोड़ लेती हुई अवाध गति से बढ़ती जाती है।

'शशिवृता विवाह खण्ड' में निम्नलिखित छन्द प्रयुक्त हुए हैं।

(१) दूहा (दोहा), (२) कवित्त—छप्पय, (३) गाथा या गाहा, (४) भुजंगी, (५) अरिल्ल, (६) कुंडलिया, (७) रसवाल, (८) चौपाई, (९) मुरिल्ल, (१०) चन्द्रायना, (११) नराच, (१२) त्रोटक, (१३) त्रिभंगी।

'शशिवृता-विवाह खण्ड' का कवित्त छन्द छप्पय ही है। १७ वीं शताब्दी से पूर्व छप्पय छन्द को कवित्त ही कहा जाता था। चन्द के पृथ्वीराज रासो में कवित्त के नाम से छप्पय छन्द ही का प्रयोग हुआ है। 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' के छप्पय बड़े प्रभावशाली है चन्द की सर्वाधिक सफलता छप्पय लिखने में ही मिली है। छन्दों के लक्षण व्याख्या में यथा स्थान दिये जा चुके हैं।

**प्रश्न ११—अप्रस्तुत-विधान (अलंकार-योजना) की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह खण्ड' की समीक्षा कीजिए।**

**उत्तर**—'शशिवृता-विवाह-खण्ड' कला की दृष्टि से एक उत्कृष्ट रचना है। काव्य-गुणों की दृष्टि से रासो के अन्तर्गत 'शशिवृता विवाह खण्ड' सुन्दर और सफल 'समय' है। शब्दालङ्कारों में अनुप्रास की योजना से कवि ने चमत्कार उपस्थित किया है। कुछ स्थलों पर 'पुनरुक्ति' और 'यमक' का भी सुन्दर प्रयोग हुआ है। 'अर्थालङ्कार' में उपमा और उत्प्रेक्षा प्रयोग भावों को स्पष्ट कर उक्ति-चमत्कार-कौशल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सामने लाता है। आगे हम 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में प्रयुक्त हुए अलङ्कारों का उदाहरण सहित विवेचन करेंगे।

## शब्दालंकार

'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में अनुप्रास का सर्वत्र प्रयोग हुआ है। अनुप्रास के तीनों भेद—वर्णानुप्रास, वृत्यानुप्रास और शब्दानुप्रास का प्रचुरता से प्रयोग हुआ है। अनुप्रासों की स्वाभाविक अभिव्यंजना बड़ी ही मनोहारिणी लगती है। रसानुकूल अनुप्रास-योजना होने के कारण कहीं भी अस्वाभाविकता नहीं आने पाई है।

**छेकानुप्रास**

१. 'हेम हंस तन धरिय'

२. 'संझ सपत्तो नृपति'

**वृत्यानुप्रास**

१. 'मुर मारुत मुरि चले'

२. मुरे मुरि वंस प्रमानं ॥'

**यमक**—एक से शब्दों की पुनरुक्ति होती है, किन्तु अर्थ भिन्न-भिन्न होता हैं। नीचे के उदाहरण में पहले 'पाइ' का अर्थ पैर और दूसरे 'पाइ' का अर्थ 'पाकर' है।

दियौ बाजि इंदं जाम देवं । दिगं तेज ऐसें चिरं पंषं एवं ॥
धरै पाइ ऐसे हलं मज्झि जैसे। सनै जैन ध्रंमं धरै पाइ तैसे ॥

**पुनरुक्तिप्रकाश**—अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाने के लिए कवि शब्दों की पुनरुक्ति करता है। इससे वर्णन में चमत्कार और प्रभावात्मकता आ जाती है। 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में कई स्थलों पर पुनरुक्तिप्रकाश अलङ्कार का प्रयोग हुआ है :

'मधुर-मधुर धुनि-धुनि करय।'

## अर्थालङ्कार

अर्थालङ्कारों से अर्थ-सौन्दर्य में गम्भीरता और प्रेषणीयता आती है। अर्थालङ्कारों में उपमेय-उपमान की विधि ही चमत्कार होती है। रसात्मक प्रसंगों में उपमेय जिस प्रकार के भाव उत्तेजक हैं, उसी के अनुरूप उपमान-योजना (अप्रस्तुत-योजना) भी होनी चाहिए।

**उपमा**—चन्द ने समान धर्म और गुण के आधार पर उपमेय का उत्कर्ष दिखाने के लिए समता मूलक उपमानों को रखा है। निम्न उदाहरण में उपमेय का उत्कर्ष दिखाया गया है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१. "जल मैसव युद्ध समान भयं।"
२. "झपकैं वर नंग मयूप कसी ।
निकसी तहँ केतक सी विकसी।"

उत्प्रेक्षा—प्रस्तुत की अप्रस्तुत रूप में सम्भावना की जाने में उत्प्रेक्षा अलङ्कार होता है। 'शशिवृता विवाह-खण्ड' में उत्प्रेक्षा के द्वारा कवि ने सौन्दर्य और वस्तु-वर्णन को मूर्तमान कर दिया है। उपमान-योजना ने भाव को अति सरल और प्रभावोत्पादक वना दिया:

राका अरु सूरज्ज बिच। उदै अस्त दुहु वेर ॥
वर शशिवृत्ता सोभई। मनो शृंगार सुमेर ॥

सन्देह—जहाँ उपमेय में उपमानों का विकल्प हो:
वंधै चौंर चित्त चमक्कंत चाहं। हरद्वार छुट्टैं कि गंगा प्रवाहं ॥
कढ्यो राज पट्टं अजानंत बाहं। कही कब्विराजं उपम्माति चाहं ॥

अतिशयोक्ति—अतिशयोक्ति अलङ्कार वहां होता है जहां किसी बात या वस्तु का इतना बढ़ाकर वर्णन किया जाता है कि उसमें लोक-मर्यादा का उल्लंघन हो।

"दियो कान्ह चहुआंन मानिक्क वाजी,
जिनै देषतें चित्त की गत्ति लाजी ॥"

दृष्टान्त—दृष्टान्त अलङ्कार में उपमेय, उपमान में साधारण धर्म का बिंब प्रतिविम्ब भाव रहता है:

"चढ्यो राज षीची प्रसंगं पहुपा। उड़ै वास ज्यौं वाय लग्गै अनुरा।"

रूपक—रूपक अलङ्कार में उपमेय पर उपमान का आरोप होता है:

"पत्त पुरातन झरिग पत्त अंकुरिय उट्ठ तुछ।
ज्यौं सैसव उत्तरिय चढ़िय वैसब किसोर कुछ ॥
शीतल मन्द सुगंध आइ रितिराज अचानं।
रोमराइ संग कुच नितंब तुच्छं सरषानं ॥
बढ्ढै न सीत कटि छीन ह्वै, लज्ज मांन ढंकनि फिरै।
ढंकै न पत्त ढंकै कहे, वन बसंत मंत जु करै ॥"

'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में अलङ्कारों का प्रयोग वस्तु-वर्णन को प्रभावशाली बनाने और भावानुभूति को प्रेषणीय बनाने के लिये हुआ है। अलङ्कार कहीं भी भार बनकर नहीं आने पाये हैं।

प्रश्न १२—भाषा-शैली की दृष्टि से 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की समीक्षा कीजिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



उत्तर—'शशिवृता-विवाह-खण्ड' हिन्दी के प्रथम विशाल महाकाव्य 'पृथ्वीराज रासो' के अन्तर्गत एक अवान्तर घटना का 'समय' है। इसमें संस्कृत से लेकर प्राकृत, अपभ्रंश और डिंगल के शब्दों की भरमार है। यही कारण है कि 'पृथ्वीराज रासो' को यदि कुछ विद्वान अपभ्रंश का काव्य मानते हैं तो कुछ विद्वान डिंगल या राजस्थानी भाषा का। हम यह 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की भाषा की प्रमाणिकता अप्रमाणिकता का प्रश्न न उठाकर, जिस रूप में कृति हमारे समक्ष है, हम उसकी भाषा के स्वरूप पर विचार करेंगे।

संस्कृत—'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में प्राकृत, अपभ्रश, डिंगल, पिंगल, अरबी-फारसी आदि भाषाओं की खिचड़ी मिलती है, परन्तु शब्द का मूल रूप संस्कृत में मिल जाता है। बहुत से शब्द तो तत्सम रूप में ही प्रयुक्त हुए हैं। निम्न उदाहरण में तत्समता, वर्ण-विन्यास और वाक्य-विन्यास सभी कुछ संस्कृत का ही है :

"मय मंजन मंडित बाल तन। घनसार सुगंध सुबोरि घनं॥
नव लोइन अंजित मंजि चली। कि मनो कस कुंदन षंभ हली॥
सुभ वस्त्र सुअंग सुरंगनसी। सुहली मनु साष मदन्न कसी॥
जरि जेहरि पाइ जराइ जरी। सजि भूषन नम्भ मनो उतरी॥
सिगरी लट यों बिथरी त्रिगमें। शशि के मुख तें अहि ने निकसें॥
रङ्ग रत्त उवट्टन उज्जल कैं। तिन में कछु सेत सुधा चलि कैं॥
नव राजिय रोम विराज इसी। जमना पर गंग सरस्वति सी॥
परि पान सुकुंकुम मज्जन कै। नव नीरज अंजन नैननि कै॥"

**प्राकृत भाषा**

'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में प्राकृत-भाषा के शब्दों का भी प्रचुर परिमाण में प्रयोग हुआ है। जैसे पति (पत) रप्पह (रक्खण), मत्तिअ, अप्प (अप्पणों) सोहै (सोहण) आदि।

**अपभ्रंश**

'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की भाषा पर प्राकृत और अपभ्रंश का विशेष प्रभाव है। सर्वत्र व्यंजन-द्वित्व, भाषा के प्राकृत और अपभ्रंश रूप का साक्षी है। निम्न उदाहरणों में प्राकृत तथा अपभ्रंश-बहुला भाषा द्रष्टव्य है :

एक लप्प दस अग्ग। सेन सज्जे कमधज्जं॥
बीय सहज वादन्न। सत्त हजार फतज्जं॥
अद्ध लप्प पैदल्ल। अद्ध साइक्क बहतं॥
सजि समुह चतुरङ्ग। दिसा दच्छिन परजंतं॥
सुनि श्रवन कुंअरि शशिवृत लिय। सुनि आवाज बर बीर घन॥
चहुआंन वृत्त लीनी अधम। प्रान हीन कद्ढन सुमन॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**डिंगल और पिंगल**

'शशिवृता-विवाह-खण्ड' (रासो) की भाषा में डिंगल और राजस्थानी की शब्दावली भी प्रचुर परिमाण में मिलती है। परन्तु इसकी प्रकृति पिंगल अर्थात् प्राचीन ब्रजभाषा की है। सही बात यह है कि 'शशिवृता-विवाह खन्ड' में विविध भाषाओं का प्रयोग मिलेगा।

'शशिवृता-विवाह-खन्ड' (पृथ्वीराज रासो) की भाषा प्राकृत, अपभ्रंश और डिंगल नहीं है। इसकी भाषा वस्तुतः अपभ्रंशोत्तर काल की पुरानी हिन्दी अथवा ब्रजभाषा है। इसमें अपभ्रंश काल की हिन्दी की समस्त विशेषताएँ विद्यमान हैं। तथापि परवर्ती प्रक्षेपों के कारण भाषा में बहुत परिवर्तन हुआ है और उस पर आधुनिकता की छाप स्पष्ट दिखाई पड़ती है। उस पर राजस्थान की प्रादेशिक बोलियों का भी प्रभाव है। 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' की भाषा ब्रजभाषा के व्याकरण से अनुशासित है।

**विशेषताएँ**

१. 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में 'ख' के स्थान पर 'ष' का प्रयोग मिलता है। 'ट' के स्थाग पर 'र' जैसे 'भट', 'कोटि' का 'भर,' 'कोटि', "कोरि,' 'द' के स्थान पर 'ज', वैदिक, साहित्य की तरह 'ऋ' के स्थान पर 'उ' जैसे पृथ्वी का 'पुहमी', पालि की तरह 'य' के स्थान पर 'ज' जैसे 'युक्ति' का 'जुगति', पैशाची की भाँति 'ण' के स्थान पर 'न' जैसे 'प्रमाण' का 'प्रमान', पालि, पैसाची, शौरसेनी, महाराष्ट्री की भाँति 'श' के स्थान पर 'स' जैसे 'दिशा' का 'दिस', 'स' के स्थान पर 'छ' जैसे 'अप्सरा' का 'अछरी', 'ज्ञ' के स्थान पर 'ग्य' जैसे 'यज्ञ' का 'जग्य' 'ख' के स्थान पर 'ह' का प्रयोग मिलता है जैसे 'सुखर' का 'मुहर'।

२. छन्द के आग्रह में ह्रस्व का दीर्घीकरण भी हुआ है। जैसे 'निसान' का 'नीसांन', 'शब्द' का 'सबद्', 'छत्रिय' का 'छत्रीय'।

३. छन्द की पूर्ति के लिये दीर्घ स्वर का ह्रस्व भी किया गया है। 'कागज' का 'कग्गर', 'आकाश' का 'अकास', 'राक्षस' का 'रष्पस'।

४. य के आगम की प्रवृत्ति प्राय: मिलती है।

५. छन्द के आग्रह से अनुस्वार योजना मिलती है। 'भरं,' 'हरं', जुरं', 'घरं', 'सरं'।

६. संयुक्त-व्यंजन के स्थान पर अनुस्वार योजना भी मिलती है। जैसे— 'अभग्ग' का 'अभंग'।

७. छन्द-निर्वाह के लिये व्यंजन-द्वित्व की प्रवृत्ति सर्वत्र मिलती है। जैसे— 'हयग्गय', 'सथ्थहु', 'मथ्थहु', 'नष्प', 'दुज्जह', 'लगन्न' आदि।

८. छन्द-निर्वाह के लिये रेफ-विपर्यय का भी प्रयोग हुआ है। जैसे— 'म्रज्जाद', 'ध्रम्म' आदि।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



९. छन्द-पूर्ति के लिये शब्दों का आगम भी मिलता है। जैसे—शब्दों का 'साबद्', 'प्रवेश' का 'परवेस', 'स्वर्ग' का 'सुरग्ग'।

उपर्युक्त सारी विशेषताएँ पिंगल अर्थात् प्राचीन ब्रजभाषा की हैं। भाषा में सर्वत्र ब्रजभाषा का रूप मिलता है। बहुत से स्थलों पर तो भाषा आधुनिक ब्रजभाषा के रूप में ढली हुई है :

'चल्यौ सु दच्छिन देवगिरि, जहँ ससिवृत्त कुमारि।'

उपर्युक्त उदाहरण में ब्रजभाषा का विशुद्ध रूप और साथ ही माधुर्य एवं लालित्य भी मिलती है। यह सत्य है कि 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, पैशाची, मागधी, शौरसेनी, डिंगल और पिंगल भाषाओं की खिचड़ी है, परन्तु उसका विशुद्ध रूप प्राचीन ब्रजभाषा अथवा पिंगल का ही है। अतः यह रचना प्राचीन ब्रजभाषा का ही गौरव है। 'रेवातट' समय में डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी का निम्न मत दृष्टव्य है :

"भाषा-शास्त्री को यदि भारत की गौड़ीय भाषाओं की अभिसन्धि देखनी है, तो 'रासो' से अधिक चमत्कृत करने दूसरा कोई ग्रन्थ उसे न मिलेगा। विभिन्न भारतीय भाषाओं की संख्या में उसे अनोखे और क्रान्तिकारी सिद्धान्तों के नियमन का अवसर स्थल-स्थल पर आयेगा। इसकी भाषा की परीक्षा करने पर कठिन समस्याओं का सामना करना पड़ेगा। इसके वैदिक, संस्कृत, पालि, पैशाची, मागधी, अर्ध मागधी, शौरसेनी, महाराष्ट्री, अपभ्रंश, प्राचीन राजस्थानी, प्राचीन गुजराती तथा पंजाबी ब्रज आदि भारतीय आर्य भाषाओं के शब्दों के अतिरिक्त अरबी, फारसी और तुर्की के शब्दों की अनोखी खिचड़ी तैयार मिलती है तथा देशज शब्दों की एक बड़ी संख्या है।"

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४

# चरित्र-चित्रण

## पृथ्वीराज

**प्रश्न १३**—'शशिवृता-विवाह-खण्ड' के आधार पर पृथ्वीराज का चरित्र-चित्रण कीजिए।

### स्मृति-संकेत

१. 'पृथ्वीराज रासो' पृथ्वीराज के विवाहों, उनके तथा उनके सामन्तों की शौर्य-गाथाओं एवं युद्धों का संकलन है।

२. शशिवृता-विवाह-खण्ड 'पृथ्वीराज रासो' की एक अवान्तर घटना है। इसके नायक पृथ्वीराज हैं।

३. पृथ्वीराज सौन्दर्य में कामदेव के अवतार हैं।

४. उनका शौर्य और पराक्रम इतिहास-विश्रुत है।

५. आलोच्य प्रकरण में पूर्वराम से उनके व्यक्तित्व का प्रकाशन है।

६. शशिवृता के रूप-सौन्दर्य का श्रवण कर वे उस पर मुग्ध होते हैं।

७. शशिवृता के हरण के अवसर पर वीरचन्द से जो उनका भीषण युद्ध होता है, उसमें उनके शौर्य और पराक्रम का प्रकाशन हुआ है।

**उत्तर**—दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' प्रकरण के नायक हैं। वे किशोर वय के अपार सौन्दर्यशाली और कामदेव के अवतार हैं। साथ ही उनका शौर्य-पराक्रम भी संसार विदित है। हंस-दूत तथा चन्द्रिका से पृथ्वीराज के इन गुणों को सुनकर शशिवृता उन पर मुग्ध होती है और उनको पति रूप में वरण करने का संकल्प लेती है। पृथ्वीराज प्रेमी-हृदय हैं। वे भी हंस-दूत से शशिवृता के सौन्दर्य को सुनकर मुग्ध होते हैं और उसके अनुराग एवं संकल्प की बात जानकर सेना-सहित उसके हरण के लिये देवगिरि पहुँच जाते हैं। प्रतिद्वन्द्वी वीरचन्द से भीषण युद्ध होता है। उसको पराजित कर वे दिल्ली पहुँचते हैं।

आलोच्य प्रकरण में पृथ्वीराज के चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएँ प्रकाशित हुई हैं :

१. पृथ्वीराज कामदेव के समान अतुल सौन्दर्यशाली हैं।

२. वे शौर्य और पराक्रम के अवतार हैं।

३. युद्ध और प्रेम में उनकी समान गति है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**शौर्य एवं पराक्रम** – 'हंस-दूत' पृथ्वीराज के शौर्य और पराक्रम का वर्णन करता हुआ शशिवृता से कहता है :

"संत सामंत सूर बलकारी । तिन सम युद्ध सु देव विचारी ॥
जिन गहियौ सरवर गजन्नवै । हय गय मंडि छंडि पुवि हियवं ॥
गुज्जरवै चालुक्क भीमतर । वे दिन राति डरै जंगल धर ॥"

जिस पृथ्वीराज चौहान के सामन्त इतने शूर-वीर हैं उसके शौर्य की थाह कौन पा सकता है । पृथ्वीराज का यही शौर्य-पराक्रम शशिवृता के हृदय में अनुराग का उदय करता हैं, पृथ्वीराज जब घोड़े पर चढ़कर देवगिरि को प्रयाण करते हैं, उस समय उनका वीर वेष देखते ही बनता है :

"चढ्यो बाज राजं पृथ्वीराज राजं । तवैं पष्षरयो बाज साकत्ति साजं ॥
तजी बर बाल सुरंग सुभेस । चल्यो प्रथिराज सु दष्षिन देस ।"

**नीति-कुशलता एवं रण-नीति**—पृथ्वीराज हिन्दू संस्कृति के पोषक हैं । वे रण-नीति में कुशल हैं । पृथ्वीराज शुभ मुहूर्त सुधवाकर हीं देवगिरि को प्रयाण करते हैं । उनके इस अभियान के उद्देश्य का पता उनके प्रमुख सरदारों को भी नहीं लगता । युद्ध अभियान के गति-विधियों को सूचना की गोपनीयता रणकौशल ही कही जायगी :

"चढ्ढ़ि चलिय प्रथिराज बर । देवगिरिषर राज ॥
तब सुकन्ह बरदाय बर । पुच्छिय बिगत सुकाज ॥"

पृथ्वीराज देवगिरि में सेना सहित कपालिकों का वेष धारण कर शिवमन्दिर में प्रवेश कर जाते हैं और वीरचन्द की सेना को पता भी नहीं लगता । शशिवृता के हरण के समय उनका वीर वेश देखते ही बनता है :

"चौहान हथ्थ बाला गहिय । सो ओपम कविचन्द कहि ॥
मानों कि लता कंचन लहरि । मत्त बीर गजराज गहि ॥"

युद्ध में पृथ्वीराज का रुद्र रूप हो जाता है :

'वीर रूप सामन्त । रूद्र प्रथिराज बिराजै ॥'

उस समय पृथ्वीराज युद्धभूमि में देत्त-तुल्य दिखाई पड़ रहा था :

'अभ्यासै सूर जिन सूर रूप । देवत्त भूष दिव्वै अनूप ॥"

पृथ्वीराज के सेनापति पृथ्वीराज से युद्ध-भूमि से हट जाने और दिल्ली चले जाने का आग्रह करते हैं, परन्तु वीर पृथ्वीराज अपने साथियों को छोड़कर युद्ध-भूमि से हटना स्वीकार नहीं करते । वे युद्ध में उपस्थित रहना अपना कर्त्तव्य और धर्म समझते हैं :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


"मुहि कढ्ढिर तुम रहो वर। जियत जाँहि उन थान ॥
ऐसी रीति अरीति पर। पद्डी नह चहुआँन ॥"

अन्त में भीषण युद्ध मे शशिवृता आकुल हो उठती है, उसके आग्रह पर ही पृथ्वीराज दिल्ली की ओर प्रस्थान करते हैं। वीरचन्द आधा कोस आगे बढ़कर उनका मार्ग घेर लेता है। पृथ्वीराज उसे सेना सहित पराजित करते हैं और उसे बांध लेते हैं।

कवि अन्त में पृथ्वीराज के शौर्य पराक्रम को प्रकाशित करता हुआ कहता है कि पृथ्वीराज और गोरी का जब-जब युद्ध हुआ, पृथ्वीराज ने उस पर विजय प्राप्त की। इसी प्रकार कन्नौजेश्वर जयचन्द से जब-जब उसका युद्ध हुआ, उसने सफलता प्राप्त की :

"जं जं जस लद्धो सुवर। बैर नृपति सुरतान।
सुवर बैर वर वढ्ढयो। सुवर जित्त चहुआँन॥"

पृथ्वीराज वीरचन्द पर विजय प्राप्त करते हैं। समस्त वीर और सामन्त उनकी जयकार करते हैं। उनके भयंकर युद्ध को देखकर शत्रु काँप जाते हैं। शत्रुओं को वे अपने वश में करके किसी को अदडित और किसी को दण्डित करके छोड़ देते हैं :

"भई जीति चहुआँन। अरिय भंजे अभंग भर॥
जै जैं सूर वषान। देवै नंषै सुमन्त बर॥
लै शशिवृत्ता राज। सप्त दिल्ली संपत्ती॥
अरि अवनि कोन मंडे मनहु। षग्ग दाग अरि षंडइय॥
कवि चन्द भेद दारुन कयहि। इक अडंड कारि डंडइय॥"

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पृथ्वीराज आलोच्य प्रकरण के नायक हैं। सौन्दर्य और प्रेम में जहाँ वे कामदेव के अवतार हैं वहाँ शौर्य में अतुल पराक्रमी भी हैं।

## शशिवृता

प्रश्न १४—शशिवृता का चरित्र-चित्रण कीजिए।

### स्मृति-संकेत

१. शशिवृता आलोच्य प्रकरण की नायिका है।

२. शशिवृता के परिचय, उसके पृथ्वीराज से विवाह करने के संकल्प, उसके सौन्दर्य एवं नख-शिख-वर्णन को लेकर ही कथानक का गठन हुआ है।

३. वीरचन्द और पृथ्वीराज के युद्ध का कारण शशिवृता ही है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



४. शशिवृता देवगिरि के राज के भाई पुंज की पुत्री है।

५. वह चित्ररेखा अप्सरा का अवतार है।

६. असीम सौन्दर्य, चतुरता, संकल्प में दृढ़ता, नारी-जनित सुकुमारता उसके चरित्र की प्रमुख विशेषताएं हैं।

उत्तर—जीवन परिचय—शशिवृता देवगिरि के राजा भान के भाई पुंज की पुत्री है। शशिवृता पूर्व जन्म में चित्ररेखा नाम की अप्सरा थी। अपने सौन्दर्य के गर्व में उसने इन्द्र को रुष्ट कर दिया। इन्द्र ने क्रोध करके उसे राज भान के भाई पुंज के यहां अवतार लेने का शाप दिया। हंस-दूत रूपधारी गन्धर्व शशिवृता से उसके जन्म की कथा सुनाता हुआ कहता है :

"तबै हंस उच्चर्‌यौ। सुनहि शशिवृता नारी॥
चित्ररेप अपछरि। सगोन अति रूप धरारी॥
तिहि गरब इन्द्र सन कलह करि। क्रोध देव बडी सुरम।"
दच्छिन नरेस नृप तान बन्धु। पुंज गुहै अवतार तुम॥

संकल्प-दृढ़ता—शशिवृता के संकल्प में दृढ़ विश्वास है वह हंस पर विश्वास करके उसे पिता कहती है और उससे पृथ्वीराज को वर रूप में पाने के कार्य में सहायता मांगती है

"तब उच्चरिय बाल सम तेहं। तुम माता सम पिता सनेहं॥
मुझ्झ सहाय अबरि कब करिहो। पानि ग्रहन तुम चित अनुहरिहो॥"

शशिवृता के प्रेम संकल्प में इतनी अधिक दृढ़ता है कि यदि पृथ्वीराज छह मास में न आये, तो वह प्राण त्याग देगी :

"तहां तुम पिता कृपा करि जाउ। दिल्लीवै अनुराग उपाउ॥
मांस षटह हों वृत्तह मंडो। तथ्थु न आवै तो तन छंडो॥"

अनुपम सुन्दरी—शशिवृता चित्ररेखा अप्सरा का अवतार अनुपम सुन्दरी है। वह शृंगार के सुमेरु की तरह सुशोभित है। हंस-दूत उसके सौन्दर्य की प्रशंसा करता हुआ, पृथ्वीराज से कहता है :

"राका अरु सुरज्ज बिच। उदै अस्त दुहु वेर॥
बर शशिवृता सोपई। मनो शृंगार सुमेर॥

शशिवृता का रूप, सौन्दर्य और शृंगार वर्णन में कवि की वृत्ति बहुत अधिक रमी है। शिव-मन्दिर में पृथ्वीराज के प्रत्यक्ष दर्शन के समय कवि ने शशिवृता की उत्सुकता, अभिलाषा और प्रेमाकुलता का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। नैनों और श्रवणों का वार्तालाप बड़ा ही रसमय है। यहां शशिवृता के हृदय में सपत्नी-भय की भावना एवं मुग्धा जनित लज्जा का भी स्फुरण हुआ है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


"कनं प्रयंत कटाछ सुरंग विराजहीं ।
कछु पुच्छन कौं जाहिं पै पुच्छत लाजहीं ।।
नेन सेंन में वात जु श्रवनन सौं कहै ।
काम किधौं प्रिथराज भेद करि ना लहै ।।
नैन श्रवन्नन पुच्छई । तुम जानौ वह्व मंत ।।
मेरे जीय अंदेश है । कहो न भै पिय जंत ।।
श्रवनन सन नैना कही । तुम जानौ चहुआंन ।।
काम नृपति को रूप धरि । आवत है इन थांन ।।"

पृथ्वीराज के आ पहुंचने का समाचार शशिवृता के हृदय को आल्हाद से भर देता है । वह माता-पिता और परिजनों से आज्ञा लेकर गौरी-पूजन के बहाने हरसिद्धि स्थान को चल पड़ती है । वीरचन्द को देखकर उसका हृदय भय और आशंका से भर जाता है । वह विषपान करने का निश्चय कर लेती है । उसका मन तो पृथ्वीराज की ओर लगा हुआ है पृथ्वीराज यथासमय उपस्थित होकर उसका हरण करता है ।

शशिवृता 'लहराती हुई कंचन लता' है । 'वह प्रेम मारुत के द्वारा झकझोरी हुई 'काम लता कल्हरी' है ।

भीषण युद्ध के अवसर पर शशिवृता साथ में है । सामन्त जहां वीर रूप हो रहे हैं पृथ्वीराज रुद्र रूप में विराज रहे हैं, वहां शशिवृता के नेत्रों में शृङ्गार-रस सुशोभित हो रहा है :

"भान कुंअरि शशिवृत्ति । नैन श्रृंगार सुराजै ।।
बीर रूप सामन्त । रूद्र प्रथिराज बिराजै ।।"

शशिवृता कोमल हृदय है, वह युद्ध की भीषणता नहीं देख पाती और अपने नेत्रों से युद्ध-भूमि से हटाने की उत्कंठा व्यक्त करती है । पृथ्वीराज उसकी इच्छा का आदर कर युद्ध से चल देते हैं ।

शशिवृता के चरित्र का सम्यक् विकास नहीं हो पाया है । कवि की वृत्ति उसके रूप-सौन्दर्य-वर्णन, मुग्धता एवं वयः सन्धि में ही रमी है । उसके नख-शिख-सौन्दर्य एवं शृंगार का वर्णन करता हुआ कवि इतना अधिक खो गया है कि चरित्र-विकास पर उसकी दृष्टि ही नहीं रही है ।

## हंस दूत

**प्रश्न १५—'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में एक प्रेम-दूत के रूप में हंस-दूत की स्थिति और उसके कार्यों के महत्व पर प्रकाश डालिए ।**

**उत्तर**—रासो में शुक-शुकी के सम्वाद, शुक-दूत तथा हंस-दूत के रूप में कथा-प्रसंगों का विस्तार हुआ है । शुक-शुकी के तीन रूप मिलते हैं—कथा के श्रोता और वक्ता होकर, प्रणय दूत बनकर तथा सपत्नियों के बीच में धृष्ट दूतत्व करते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



हुए 'पद्मावती समय' में शुक-दूत ही पद्मावती और पृथ्वीराज का संघटक है। 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में शुकी श्रोता और शुक वक्ता है। शुकी के पू शुक शशिवृता के जन्म की कथा और-शशिवृता एवं पृथ्वीराज के विवाह कहता है :

"पुच्छ कथा शुक कहो। समह गंध्रवी सुप्रेमहि ॥
स्रवन मंमि संजोगि। राज समधरी सुनेमहि ॥"

इसके पश्चात् 'हंस दूत' के द्वारा कथा का विकास होने लगता है। प्रधान नामक गन्धर्व हंस का रूप धारण कर शशिवृता के पास पहुँचता है :

"उच्चरयो हंस ससिवत सम। मति-प्रधान गन्धर्व हम ॥
सुरराज काज आए करन। तीन लोक हम वालगन ॥"

हंस अपना दूतत्व प्रारम्भ करता है। वह पृथ्वीराज के शौर्य एवं रूप-सौन्दर्य का वर्णन करता है। हंस शशिवृता के लिए पिता तुल्य आत्मीय हो जाता है;

शशिवृता हंस को अपना प्रेम सन्देश देकर पृथ्वीराज के पास भेजती है :

"तहाँ तुम पिता कृपा करि जाउ। दिल्ली वै अनुराग उपाउ ॥
मांस षटह हों वृत्तह मंडों। तथ्थु न आवै तो तन छंडों ॥"

हंस-दूत पृथ्वीराज के पास पहुँचता है। वह पृथ्वीराज से शशिवृता का उसके अनुराग, उसके प्रेम-संकल्प और नख-शिख रूप-सौन्दर्य का वर्णन करता है। हंस-दूत के कथन का ढंग इतना कौशल-पूर्ण है कि पृथ्वीराज के हृदय में श्रवणानुराग जागृत हो जाता है। वे शशिवृता को पाने के लिए व्याकुल हो उठते हैं। उनके पूछने पर हंस-दूत संकेत-स्थल को निश्चित करता है :

"कह यह दुज संकेतं। हो राज्यंद धीरं ढिल्लेसं ॥
तेरसि उज्जल माघे। ब्याहन बरनीय थान हरसिद्धि ॥"

पृथ्वीराज से आने का वचन लेकर हंस शशिवृता के पास उड़कर पहुँचता है और पृथ्वीराज के आगमन की सूचना देता है। आलोच्य प्रकरण में हंस-दूत की स्थिति 'नैषध' के हंस की तरह है। उसके सफल दूतत्व से ही नल-दयमन्ती का मिलन संभव बन सका था। 'शशिवृता-विवाह-खण्ड' में भी हंस-दूत की स्थिति इसी रूप में है। सारे कथानक का सूत्र उसी के हाथ में है।

———

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection